"जौनपुर जनपद में सई नदी घाटी का पुरातात्विक अन्वेषण और झील स्थल"

ARCHAEOLOGICAL INVESTIGATIONS IN THE SAI RIVER BASIN AND LAKE SITES IN JAUNPUR DISTRICT (U.P.)

डी०फिल्० उपाधि के लिए प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध
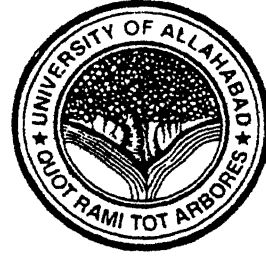
शोध निर्देशक
प्रो० जे०एन० पाल

शोध अध्येता
राम सिंह

प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

2003

प्राक्कथन

मानव सभ्यता के विकास की दृष्टि से मध्यगगाघाटी का क्षेत्र अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण रहा है। विन्ध्यपर्वत श्रृखलाओ की गर्मी से सत्रस्त मानव ने जब पहली बार भूख मिटाने के प्रयोजन से गगा–यमुना नदी को पारकर मध्य गगा के मैदान मे कदम रखा तो यहाँ की प्रकृतिजन्य अनुकूलताओ ने उसे पूरी तरह प्रभावित कर लिया। जहाँ पर वह विन्ध्य और बेलनघाटी की उपत्यकाओ मे मीलो की दुरूह दूरी तय करके अपनी छुधापूर्ति के साधन किसी प्रकार एकत्रित करता था वही पर मध्यगगा के मैदान मे उसे अपनी उदरपूर्ति के सामान सहज उपलब्ध थे लेकिन इसके विपरीत मध्यगगा के मैदानो मे उसके औजारो और हथियारो के लिए कच्चामाल (पत्थर) उपलब्ध नही था जिसके लिए उसे बार–बार नदी पार करके बेलन/विन्ध्य के क्षेत्रो मे जाना पडता था। बहुत सम्भव है कि बार–बार के आवा–गमन से संत्रस्त होकर मानव ने गगा के मैदान को अपना स्थायी आवास बना लिया और इस प्रकार प्रारम्भ हुई मानव के स्थायी जीवन की प्रक्रिया। स्थायी आवास के साथ ही उसकी परेशानी का अन्त नही हुआ अपितु जीवन मे क्रान्तिकारी परिवर्तनो की शुरूआत हुई जो उसकी परेशानियो से उद्भूत हुई। एक स्थान पर निवास करने के चलते कुछ ही दिनो मे प्रकृति–प्रदत्त खाद्यसामाग्री समाप्त हो गई। स्थान के मोह और सुरक्षित स्थान के चलते मानव ने

जगली अन्नो को उत्पादित करना प्रारम्भ किया। आग का बेहतर प्रयोग करने लगा जो भोजन और सुरक्षा के क्षेत्र मे उसके लिए वरदान साबित हुई। इस प्रकार मध्यगगा के मैदान मे मानवजीवन की कहानी प्रारम्भ हुई एवं उत्तरोत्तर पल्लवित पुष्पित होती गयी।

कालक्रम के परिप्रेक्ष्य मे देखे तो मध्यगगा के मैदान मे मानव का सर्वप्रथम पदार्पण पूर्व पाषाण काल के अतिम चरण एव मध्य पाषाण काल के ठीक पूर्व हुआ। जिसे विद्वानो ने अनुपुरापाषाण काल (Epiparleo-lithicage) नाम दिया है। यह तथ्य इस बात से भी प्रमाणित होता है कि अभी तक मध्य गगा घाटी के किसी भी क्षेत्र से पूर्व पाषाण काल के औजार हथियार प्राप्त नही हुए है साथ ही पूर्व पाषाणकाल के समाप्त होने के समय जलवायु मे आये क्रान्तिकारी परिवर्तनो से मानव के आवासीय परिक्षेत्रो मे हमे बडे पैमाने पर परिवर्तन दिखलाई पडते है।

लगभग 144409 वर्ग किमी0 के क्षेत्र मे विस्तृत मध्यगगाघाटी (24^0 30′उ 27^0 50 उ तथा 81^0 47′ पूर्व 87^0 5″ पू0) को भारत का हृदय अथवा केन्द्र भी कहा जाता है। गगा का यह मध्यवर्ती मैदान उत्तर मे हिमालय पर्वतीय प्रदेश तथा दक्षिण मे विन्ध्य के पठारी भाग एव छोटा नागपुर के पठार से घिरा है। इस प्रकार उत्तर तथा दक्षिण दिशाओ में प्राकृतिक स्थलाकृतियॉ इसकी सीमा निर्धारित करती है पर पश्चिमी तथा पूर्वी दिशा मे सीमाकन करने वाली प्राकृतिक आकृतियो

का अभाव है। मध्यगगाघाटी मे यदि वर्तमान राजनीतिक भौगोलिक परिक्षेत्र को देखे तो इसके अन्तर्गत इलाहाबाद से लेकर (गगापार) विहार प्रान्त की राजमहल की पहाडियो तक के अधिकाश भाग आते है। गगा–गोमती, सई, घाघरा, ताप्ती, गंडक इस क्षेत्र की प्रमुख नदियॉ है। मानव अधिवास के प्रमाण इन्ही नदियो और उनकी सहायक नदियो के किनारे प्राप्त होते है। इसके अतिरिक्त अनेक अस्तित्व विहीन गोखुर झीलो के तट पर मानव अधिवास के प्रमाण प्राप्त हुए है।

जौनपुर जनपद (25^0 24′ उ0 अक्षाश एव 28^0 7′ तथा 83^0 5′ पूर्वी देशातर) मध्यगगाघाटी के हृदय स्थल मे स्थित है। 4040 वर्गकिमी0 के क्षेत्र मे विस्तारित इस जनपद की महत्त्वपूर्ण नदियॉ, गोमती, सई, वरना, पीली व वसुही है। इनमे सई और गोमती नदी जो जौनपुर जनपद के बीचो–बीच प्रवाहित होती है प्राचीन काल से इस क्षेत्र की जीवन रेखा रही है। सई नदी इस जनपद पश्चिमी ओर से प्रवेश करके पूर्वी छोर पर गोमती नदी में विलीन हो जाती है। इस नदी का इस जनपद मे कुल अपवाह क्षेत्र लगभग 76 किमी0 है। पुरातात्त्विक अन्वेषणो से इस नदी के किनारे अनेक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक स्थल प्रकाश मे आये है। इनमे प्रागैतिहासिक, आद्यैतिहासिक और प्रारम्भिक इतिहास काल के अनेक स्थल है। सर्वप्रथम पाषाणकालिक स्थलों का प्रतिवदेन सई नदी के तट पर हुआ है जो पुरेगम्भीर शाह, एकहुआ, भगवानपुर, नगौली आदि है। इसके साथ ही अनेक

प्रारम्भिक ऐतिहासिक और इतिहास कालीन स्थल प्रकाश मे आए है लेकिन इनमे से किसी भी स्थल का अभी तक विस्तृत पुरातात्त्विक उत्खनन नही हो पाया है। मध्यगगाघाटी के सापेक्ष मे यहॉ का सास्कृतिक अनुक्रम निर्धारित किया जा सकता है। जिसमे भारतीय प्रागैतिहासिक और आद्यैतिहासिक सस्कृतियो के क्रम के अनुरूप क्रमश मध्य पाषाणकाल, नवपाषाणकाल, ताम्रपाषाणकाल और प्राक एन0बी0पी0 डब्ल्यू एव एन0बी0पी0 डब्ल्यू काल का निर्धारण किया जा सकता है। उल्लेखनीय है कि अब तक मध्यगगाघाटी से पूर्व पाषाणकाल के उपकरण मे प्राप्त नही हुए है अतएव यहॉ पर मानव सस्कृति का आरम्भ मध्यपाषाणकाल से माना जाता है। उपरोक्त सस्कृतियो के सन्दर्भ मे प्राप्त प्रमाणो का सम्यक् विवेचन करने का प्रयास मैने प्रस्तुत शोध प्रबन्ध मे किया है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध कुल पॉच अध्यायो मे विभाजित है। **प्रथम अध्याय** मे जौनपुर जनपद का समसामयिक विवेचन प्राप्त सूचनाओ के आलोक मे किया गया है जिसके अन्तर्गत इस जनपद का क्षेत्रफल, भौगोलिक स्थिति, जलवायु, वनस्पतियॉ, प्राकृतिक ससाधन, कृषि, मानव ससाधन तथा प्रशासनिक व्यवस्था का विवेचन किया गया है। **द्वितीय अध्याय** के अन्तर्गत जौनपुर जनपद के इतिहास को विवेचित करने का प्रयास किया गया है। इस अध्याय मे जनपद की प्रारम्भिक सस्कृति से लेकर प्रारम्भिक इतिहास युग तक की सस्कृतियो का क्रमवार विवेचन प्रस्तुत किया गया है। साथ ही इस अध्याय के अन्त मे जौनपुर जनपद के सक्षिप्त इतिहास का विवेचन

किया गया है। शोध प्रबन्ध के **तृतीय अध्याय** मे सई नदी प्रणाली का समुचित विवेचन किया गया है। इसमे इस जनपद की महत्त्वपूर्ण झीलो एव उनके तट पर स्थित पुरातात्त्विक स्थलो के विवेचन के साथ ही अन्य महत्त्वपूर्ण पुरातात्त्विक स्थलो का विवेचन उनकी प्रकृति और महत्ता के सन्दर्भ मे किया गया है। इस अध्याय मे मध्यगगाघाटी की नदी प्रणाली के मानचित्र के माध्यम से जौनपुर जनपद के इतिहास मे इस जनपद की महत्ता को देखने का प्रयास किया गया है। **चतुर्थ अध्याय** के अन्तर्गत जौनपुर जनपद से प्राप्त पुरातात्त्विक प्रमाणो को सम्पूर्ण मध्यगगाघाटी के सन्दर्भ मे रखकर देखने का/विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है साथ ही उन पुरातात्त्विक प्रमाणो का भारत के पूर्व इतिहास की सस्कृतियो मे क्या स्थान या महत्त्व है इस प्रश्न पर समुचित विचार करने का प्रयास किया गया है। शोध प्रबन्ध के अत मे उपरोक्त विवेचित सम्पूर्ण तथ्यो की सम्यक् समीक्षा **अन्तिम अध्याय** उपसहार मे करने का प्रयास किया है। उपसहार मे यह देखने की/प्रस्तुत करने की कोशिश की गई है कि अब तक प्राप्त पुरातात्त्विक प्रमाणो की मानव इतिहास निर्माण की दृष्टि से क्या उपयोगिता है एव उन तथ्यो को किस प्रकार सम्पूर्ण भारतीय इतिहास के आलोक मे सन्दर्भित किया जा सकता है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को पूरा करने मे मैने अनेक पुस्तकालयो, शोध सस्थानो से सहायता ली है जिनमे केन्द्रीय पुरातत्त्व पुस्तकालय, नई दिल्ली, इलाहाबाद सग्रहालय और पुस्तकालय बी0एच0यू0 का केन्द्रीय पुस्तकालय

एव अपने विभागीय पुस्तकालय तथा इलाहाबाद विश्वविद्यालय का केन्द्रीय पुस्तकालय प्रमुख है। मै इन सबके अधिकारियो/ कर्मचारियो के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ।

मै प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को सम्यक् प्रकारेण पूरा करने के लिए अपने शोध निर्देशक परम श्रद्धेय गुरू प्रो0 जे0एन0 पाल के प्रति हृदय से आभारी हूँ। मैने पुरातत्त्व की छोटी–छोटी बातो को उनसे जानने की चेष्टा की और उन्होने धैर्य के साथ मेरी जिज्ञासा को शात किया। गुरू डॉ0 ए0के0 दुबे के प्रति मै हृदय से आभार व्यक्त करना चाहता हूँ जिनका इस कार्य को पूरा कराने मे महत्त्वपूर्ण योगदान रहा।

विभागीय गुरूजनो प्रो0 वी0एन0एस0 यादव, प्रो0 एस0सी0 भट्टाचार्य, प्रोफेसर बी0डी0 मिश्र, डा0 ओ0पी0 श्रीवास्तव, डा0 डी0के0 शुक्ल, डा0 एम0सी0 गुप्त, प्रो0 ओम प्रकाश, श्री आर0पी0 त्रिपाठी, डॉ0 जी0के0 राय, श्री वी0वी0 मिश्रा के प्रति मै हृदय से आभारी हूँ जिनका स्नेह मेरे ऊपर सदैव रहा।

शोध प्रबन्ध तब तक पूरा नही हो पाता जब तक मुझे अपने महाविद्यालय से अवकाश न मिलता इसके लिए आदरणीय प्राचार्य डॉ0 लालजी त्रिपाठी को मै हृदय से आभार व्यक्त करना चाहता हूँ। विभागीय सहकर्मियो एव मित्रो श्री सुरेश पाठक, श्री शिवाकान्त तिवारी, श्री महेन्द्र कुमार त्रिपाठी, श्री राजीव द्विवेदी, सरोज कुमार एडवोकेट, मजूर अहमद और

मेरे ससुर श्री फूलचन्द्र सिह का प्रत्यक्ष निरोध सहयोग मेरे इस कार्य मे रहा इन सबके प्रति मै हृदय से आभार ज्ञापित करता हूँ।

विषम पारिवारिक परिस्थितियो के बावजूद मेरे श्रद्धेय पिताजी–माताजी इस कार्य के लिए प्रेरित करते रहे। इस कार्य को मै उनका आशीर्वाद मानता हूँ। भैया–भाभी सहित समस्त परिवारजनो को मै आभार व्यक्त करना चाहता हूँ। आदरणीया दीदी श्रीमती सगीता के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करना औपचारिकता मात्र होगी जिनके सहयोग के बिना यह शोधकार्य असम्भव था। मेरी पत्नी श्रीमती उर्मिला सिह ने मुझे इस कार्य के लिए मुक्त किए रखा एव सकारात्मक सहयोग दिया उनको धन्यवाद देना औपचारिकता का निर्वाह मात्र होगा। अन्त मे डॉ0 विनोद खन्ना एव विकास कुमार कसेरा (खन्ना ब्रदर्स, मनमोहन पार्क, कटरा) को त्रुटिविहीन टाईपिग के लिए धन्यवाद ज्ञापित करना मेरा परम धर्म है। सादर।

दिनाक
13-01-2003

राम सिंह

राम सिंह
शोध अध्येता
प्राचीन इतिहास
संस्कृति एव पुरातत्व विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

मानचित्र, छायाचित्र व रेखाचित्र सूची

तालिका सूची

विषय सूची

प्रथम अध्याय

जौनपुर जनपद का समसामयिक विवेचन

❖ भौगोलिक परिचय

❖ समसामयिक तथ्य

जौनपुर : सामान्य परिचय

नामकरण सम्बन्धित विभिन्न मत

जिले के नाम के उद्भव को लेकर विद्वानो मे विभिन्न मत है। स्थानीय परम्पराओ के अनुसार जौनपुर नाम प्रसिद्ध ऋषि जमदग्नि के नाम से उद्भूत है, एवम् इस स्थान का नाम पूर्वकाल मे जमदग्निपुरा था। इस मत के समर्थन मे कुछ विद्वान जौनपुर नगर के समीप गोमती के तट पर स्थित जमेथा (विद्यमान प्राचीन मन्दिर) ऋषि का निवास स्थान मानते है। कुछ अन्य लोगो का मत है कि मोहम्मद–बिन–तुगलक, जिसका दूसरा नाम जूना खॉ के सम्मान मे उसके अनुज सुल्तान फिरोज तुगलक ने जौनपुर नगर की स्थापना की। कहा जाता है कि मृत सुल्तान (मोहम्मद–बिन–तुगलक) ने फिरोज शाह तुगलक से स्वप्न मे प्रार्थना की थी कि उसकी याद मे नगर का निर्माण किया जाय। यह सम्भव हो सकता है कि पूर्व मे प्रचलित जवनपुर या जमदग्निपुर अथवा यवनपुर नाम के ही आधार पर तत्कालीन सुल्तान फिरोज शाह तुगलक (चौदहवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध) ने इसका नाम जौनपुर रखा। फिर भी स्पष्ट रूप से इस बारे मे कुछ भी कहना अश्रेयस होगा।

स्थिति, सीमाएं, क्षेत्रफल एवम् जनसंख्या

स्थिति एवम् सीमाएं

जौनपुर (25^0 24′ उत्तरी अक्षांश एव 28^0 7′ तथा 83^0 5′ पूर्वी देशान्तर) सम्प्रति वाराणसी मण्डल के उत्तर–पश्चिमी हिस्से मे स्थित है।[1] इसके उत्तर–पूर्व मे सुल्तानपुर जनपद, उत्तर–पश्चिम मे प्रतापगढ, दक्षिण–पश्चिम मे इलाहाबाद, दक्षिण मे वाराणसी, पूर्व मे गाजीपुर तथा उत्तर–पूर्व मे आजमगढ जनपद स्थित है।

क्षेत्रफल

केन्द्रीय साख्यिकी सगठन के अनुसार (जुलाई 2002 मे जिले का क्षेत्रफल 4040 वर्ग किलोमीटर था तथा राज्य मे इसका क्षेत्रफल की दृष्टि से 46वॉ स्थान था।

जनसंख्या

2001 के जनगणना रिपोर्ट के अनुसार इस जिले का राज्य मे जनसख्या के मामले मे चौथा स्थान था। जिले की कुल आबादी 3911305 थी।[2] जिसमे महिलाओ की सख्या 1503524 थी। कुल जनसख्या मे 89% लोग ग्रामीण क्षेत्रो मे तथा 11% लोग शहरी क्षेत्रो मे निवास करते है। कुल जनसख्या मे अनुसूचित जाति एव जनजाति का प्रतिशत 21 4 है। जनपद की साक्षरता दर 2001 की जनगणना के अनुसार 59 98 प्रतिशत है। जनपद मे कृषि मे कार्यरत कर्मियो का

प्रतिशत लगभग 80 और अन्य सेक्टरो मे कार्यरत व्यक्तियो का प्रतिशत केवल 20 है। इससे स्पष्ट है कि कृषि पर जनसख्या का भार अपेक्षाकृत अधिक है। इस जनपद मे पशुपालन और श्रम पर आधारित कोई उद्योग नही है।

प्रशासनिक इकाई के रूप में जौनपुर जिले का इतिहास

मूलत जौनपुर बनारस के चार सरकारो मे सम्मिलित था, 1775 मे यह ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधिकार मे आ गया। 1818ई0 के बाद 4 तहसील– जौनपुर हवेली, घिसुवा या मछलीशहर, उगली या खुटहन एवम् मडियाहूँ 22 परगनों से एक अलग उपकलेक्ट्रेट मे बनाये गये। 1819 यह पूर्ण कलेक्ट्रेट (जिला) बन गया एव 1822 मे जिले के रूप मे इसका विशेष उल्लेख किया गया। बनारस से स्थानान्तरित होने वाले क्षेत्र मे जौनपुर के वर्तमान क्षेत्र सम्मिलित थे, केवल टप्पा, गुजरा एव सिगरामऊ तथा दौनरूआ का तालुके सम्मिलित न थे। पडोसी जिलो के कई भाग बाद मे इस जनपद मे जोडे गये। 1920 ई0 मे आजमगढ के सात परगने जौनपुर से जुड गये किन्तु तीन वर्ष बाद माहुल एव देवगाव को छोडकर शेष परगने अलग देख–रेख मे चले गये, माहुल एव देवगाव 1830 तक जौनपुर से जुडे रहे। 1822 मे वाराणसी मे सिंगरामऊ एव दौनरूआ के असामान्य एव पूर्णत. असुविधाजनक अवधारणा पर प्रश्न उठाये गये, किन्तु बिना किसी परिणम के 1832 मे ये जौनपुर को स्थानान्तरित कर दिए गए। 1836ई0 मे आजमगढ तरफ की सीमा में सुधार कर

47 गाव आजमगढ को जौनपुर मे स्थित 134 गावो के बदले दे दिये गये। 1942 मे दक्षिणी सीमाओ मे और भी सुधार हुए। गुजरा का टप्पा जो मूलत केराकत परगना का एक भाग था, कुछ अनजान कारणो से वाराणसी मे अब तक बने रहे थे, पुन प्राप्त किये गये (जौनपुर मे जोडे गये) जबकि सुल्तानपुर परगना के 15 अलग गाव टप्पा चदवक को दे दिये गये बदले मे मडियाहूँ के 4 गॉव जो पिण्डरा परगना मे स्थित थे वाराणसी जिले को सौप दिये गये।

मूल रूप मे चार तहसील सुसबद्ध क्षेत्र नही थे, क्योकि प्राय प्रत्येक परगना दो या अधिक तहसीलो मे सम्मिलित था जिससे किसानो को कर अदा करने मे कठिनाई होती थी। अत यह निश्चय किया गया कि निकटवर्ती क्षेत्रो को सुसम्बद्ध इकाइयो मे जोडा जाय। इस प्रकार 1846 मे केराकत तहसील बनाया गया तथा पहले के तहसीलो– जौनपुर, खुटहन, मछलीशहर एव मडियाहूँ मे एक और तहसील जुड गया। 1877ई0 मे बरसठी टप्पा मे विराओ तालुका के छ. गाव वाराणसी को स्थानान्तरित कर दिये गये। 1911ई0 मे खुटहन तहसील, शाहगज मे परिवर्तित हो गयी।

1935ई0 तक जिले के क्षेत्र मे कोई परिवर्तन नही हुआ। जब प्रतापगढ जिले के पट्टी तहसील के सत्रह गाव जिनका क्षेत्रफल 33 2 वर्गकिलोमीटर था, मछलीशहर मे जुड गये एवम् सुल्तानपुर जिले के कादीपुर तहसील के दस गाव जिनका क्षेत्रफल 10 1 वर्गकिलोमीटर था। शाहगज तहसील से जुड गये। उसी वर्ष शाहगज

तहसील के 319 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल के 26 गाव सुल्तानपुर जिले के कादीपुर तहसील मे जोड दिये गये। इन परिवर्तनो के परिणामस्वरूप जिले को 114 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र का लाभ हुआ, उसके बाद जिले की सीमाओ मे कोई परिवर्तन नही हुआ।

उपसंभाग (तहसील) एवं थाना

जिले के छ उपसभाग या तहसीले है– शाहगज, मछलीशहर, जौनपुर, मडियाहूँ, केराकत एव बदलापुर। शाहगज जौनपुर के उत्तर मे, मछलीशहर दक्षिण–पश्चिम मे, जौनपुर मध्य भाग मे, मडियाहूँ दक्षिण मे, केराकत दक्षिण–पूर्वी भाग मे एवम् बदलापुर पश्चिमी–उत्तरी भाग मे स्थित है।

पुलिस प्रशासन के उद्देश्य से जिले मे 22 थाने है, जिनमे चार जौनपुर तहसील मे, चार मडियाहूँ तहसील मे, दो केराकत तहसील मे, मछलीशहर एव शाहगज मे पॉच–पॉच तथा बदलापुर तहसील मे दो थाने स्थित है।

स्थलाकृति

सामान्यतय जिले की स्थलाकृति समतल मैदान के रूप मे है। कही–कही नदियो घाटियो के कारण भू–आकृति थोडी ऊँची–नीची भी है। प्राय सभी नदियॉ उत्तर–पश्चिम से दक्षिण–पूर्व की ओर बहती है एवम् उसी दिशा मे इस क्षेत्र की ढाल भी है। नदियॉ जिले के भौतिक पहलुओ के निर्णायक तस्वीर को निर्धारित करती है। मुख्य नदियॉ–

गोमती, सई एव बसुही जिले को चार समानान्तर पट्टियॉ मे विभाजित करती है, जिनमे प्रत्येक के अलग–अलग भौतिक लक्षण है।

प्रथम एव सबसे बडा उत्तर–पूर्वी क्षेत्र गोमती मे स्थित है तथा उत्तर मे सुल्तानपुर सीमा मे दक्षिण–पूर्व मे गाजीपुर तक विस्तृत है। इसे दो भागो मे विभाजित किया जा सकता है, जिसमे सबसे बडा ऊसर भूमि का क्षेत्र है। जो शाहगज और जौनपुर स्थित तहसील मे विस्तृत है एव दूसरा जो प्रायः पूरी तरह सिचित है, मे केराकत के भाग मे सम्मिलित है। दूसरा भाग सर्वाधिक उपजाऊ है तथा जनसख्या सकुल वाला क्षेत्र है, जो कि गोमती एव सई के बीच स्थित है।

सई एव बसुही का क्षेत्र तीसरा भाग है, जो मुख्यत मटियार है। दक्षिण–पश्चिमी क्षेत्र चौथा भाग है, जो कि बसुही एव वरना के बीच एक सकरी पट्टी के रूप मे विद्यमान है। जिसमे मछलीशहर के दक्षिण स्थित ऊसर भूमि सम्मिलित है।

नदियाँ एवं जल संसाधन

जिले की प्रमुख नदी गोमती है तथा दूसरी मुख्य नदी इसकी सहायक सई नदी है। अन्य उपयोगी नदियॉ वरना एव बसुही है जो कि धुर–दक्षिण मे एक हो जाती है तथा अन्नत गगा मे मिल जाती है।[3]

गोमती

गोमती का महत्त्व इसके आकार के अपेक्षा लम्बाई के कारण अधिक है। इस नदी का स्रोत रुहेलखण्ड सभाग के पीलीभीत जिले मे है तथा उसके बाद यह खीरी, शाहजहॉपुर, सीतापुर, लखनऊ, बाराबकी एव सुल्तानपुर होकर बहती है। यह जौनपुर जिले के सर्वप्रथम उत्तर–पश्चिमी सीमा पर स्पर्श करती है। इसकी दिशा पहले पूर्व एव बाद मे दक्षिण है। किन्तु सम्पूर्ण मार्ग मे यह टेढी–मेढी होकर बहती है। आलमगीरपुर मे यह पुन पूर्वी मार्ग को पकडी है तथा जौनपुर शहर के बीचोबीच से बहती है। जमैथा मे यह दक्षिण की ओर जफराबाद की तरफ मुड जाती है तथा उसके बाद दक्षिण–पूर्वी दिशा पकडकर केराकत तहसील पहुँचती है। यह जिले को एकदम दक्षिण–पूर्व के कोने पर छोडती है। जहॉ से इसका एव गगा का सगम नजदीक है। इस जिले मे गोमती की सम्पूर्ण लम्बाई 137 किलोमीटर है किन्तु जिले मे इसके निकास एव प्रवेश के बीच की दूरी इससे बहुत कम है। नदी प्रत्येक स्थापन अच्छी तरह सीमाकित है तथा शायद ही यह अपना मार्ग बदलती हो। गोमती के किनारे प्राय प्रपाती एव दर्रो द्वारा रेखाकित है। गोमती की अनेको सहायक नदियो मे पीली एव सई नदी प्रमुख है।

पीली

पीली नदी इस जिले की एक महत्त्वपूर्ण एव बारहमासी नदी है। इसका उद्गम सुल्तानपुर जिले के चाँदा परगना मे झीलो की एक

पक्ति है। सिगराम से आगे बढने पर इसमे प्रतापगढ से निकली तम्बूरा नदी मिलती है। दोनो सम्मिलित नदियॉ दक्षिण–पूर्व दिशा पकडकर दरियावगज मे आकर गोमती मे मिल जाती है। पीली का बहाव क्षेत्र बहुत टेढा–मेढा है एव इसके किनारे तग दर्रो से सटे है। साथ ही तम्बूरा के अलावा पीली की अन्य सहायक नदी लखिया है, जो गडवारा परगना के किसी झील सी निकली है तथा पूर्व की ओर बहती है। यह रारीकलॉ गॉव के पास पीली मे मिल जाती है।

सई

सई जौनपुर जिले की एक महत्त्वपूर्ण प्राचीन नदी है। उसका उद्गम हरदोई जिले मे है एव लखनऊ को उन्नाव से अलग करने के बाद यह रायबरेली एव प्रतापगढ होकर बहती है। इसके बाद यह गडवारा परगना के धुरपश्चिम मे प्रवेश कर जौनपुर तथा मडियाहूँ तहसील के 19 किलोमीटर सीमा का निर्माण करती है। कुछ दूर दक्षिण–पूर्व दिशा मे बहने के बाद यह उत्तर की ओर मुडती है एव राजापुर गाव के पास गोमती मे मिलती है। नदी का पथ बहुत टेढा–मेढा है तथा इसके किनारे असख्य दर्रो द्वारा टूट गये है। (सई नदी प्रणाली एव उसके किनारे विकसित समृद्ध सास्कृतिक/ऐतिहासक परम्परा का विवेचन पुरावशेषो के सन्दर्भ मे पृथक अध्याय के रूप मे आगामी पृष्ठो मे किया जाएगा।

सई नदी की सहायक नदियाँ

जो क्रमश रायबरेली, प्रतापगढ जनपदो मे तथा जौनपुर जनपदो मे प्रवाहित होती है। प्रतापगढ और जौनपुर जनपद की महत्वपूर्ण नदी निम्नवत् है।

नईया

सई की तमाम सहायक नदियॉ है परन्तु जिले मे बहने वाली यह पहली सहायक नदी है। इसका उद्भव स्थल रायबरेली जिले मे है। ये अठेहा मे उत्तर से दक्षिण प्रवाहित होती हुई सई नदी मे मिल जाती है।

चमड़ौरा

यह नईया से 28 किमी0 पूर्व मे बहती है। इसका उद्भव सुल्तानपुर जिले मे है। यह नदी पट्टी के उत्तर–पश्चिम भाग मे बहती हुई प्रतापगढ परगना मे स्थित बेलाघाट मे सई नदी मे मिल जाती है।

परैय्या

यह भी सई की सहायक नदी है। इसका उद्भव स्थल पट्टी तहसील मे होता है। यह चमरौरा से 6 किमी0 की दूरी पर बहती हुई सई नदी से धनवान मे जौनपुर सीमा के पास मिल जाती है।

लोनी

इस नदी का उद्भव परगना रामपुर मे स्थित एक झील से होता है। यह पूर्व दिशा मे प्रवाहित होते हुए खटवारा मे सदर तहसील मे प्रवेश करती है तथा जिले के मध्य मे सई नदी मे मिल जाती है।

वकुलाही

यह जिले के दक्षिण मे उत्तर–पूरब की दिशा मे अत्यन्त घुमावदार तरीके से बहती है। यह दलीपपुर के पास सई नदी में मिल जाती है।

बसुही

इसका अपवाह क्षेत्र पूरी तरह जिले के अन्दर ही है। इसका उद्गम मछलीशहर तहसील मे गडवारा एव मुगरा परगनो की सीमाओ पर है यह पहले दक्षिण तथा बाद मे दक्षिण–पूर्व दिशा मे बहती है तथा घिसुवा एव मडियाहूँ परगना तक उसी दिशा मे बहती रही है। उसके बाद यह गोपालपुर की सीमा निर्धारित करती है। बसुही की अनेक सहायक नदियो मे वरना, अर्सी तथा घुरसार प्रमुख है जो बसुही मे क्रमश मडियाहूँ, चन्द्रभानपुर तथा पलटूपुर मे मिलती है।

वरना

वरना इस जिले मे प्रवेश नही करती किन्तु इसके दक्षिणी सीमाओ का निर्माण करती है। यह फूलपुर के निकट मेलहन झील से निकलकर मुगरा परगना को छूती है। यह इस जिले को वाराणसी से अलग करती है। जौनपुर छोडने के उपरान्त यह वाराणसी होकर बहती है।

मांगर

इसकी दो शाखाए सुल्तानपुर जिले मे दोस्तपुर से निकली है, दक्षिणी शाखा सुल्तानपुर एव जौनपुर को अलग करती है। उगली, शाहगज, बिलवई होते हुए यह आजमगढ मे प्रवेश कर जाती है।

गंगी

इसके अतिरिक्त गगी का नाम लिया जा सकता है जिसे नदी कहना शायद ही उचित होगा। मुख्यत यह आजमगढ मे बहती है तथा पिसरा एव चन्दवक के पास जौनपुर की एक छोटी सीमा का निर्माण करती है।

झीलें

जिले मे अनेको झीले है, विशेषकर उत्तरी एव दक्षिणी भागो मे। मुख्य झील है– शाहगज तहसील मे कमरपुर, रामनगर, लवैन एव गूजरताल। खुटहन मे सैदाताल, मडियाहूॅ मे मानकपुर, हसनपुर,

जमुआ, जौरेलाताल एव दुहावर ताल। मछलीशहर तहसील मे अनेको झीले एव ताल है जिसका उपयोग सिचाई हेतु किया जाता है।

भू–विज्ञान[4]

गगा नदी के चतुर्थ युगीन अवसादो के आवरण से जिले का निचला स्तर निर्मित है। कछारी अवसाद व्यापक रूप से नए एव पुराने कछारो मे विभाजित है। पुराने कछार मे सिल्ट बालू, मिट्‌टी एव ककड की बहुतायत है तथा नये कछार मे मुख्यत बालू, सिल्ट, गोमती एव सई के सकरे बाढ वाले मैदानो तक सीमित है। उपसतही भू–विज्ञान सम्बन्धी आकडे, जो कि **केन्द्रीय जल बोर्ड** द्वारा गहराई तक ड्रिल करके प्राप्त किये गये है, सतह से 422 से 538 मीटर नीचे विन्ध्य आधार शैली की उपस्थिति का सकेत करते है। पुराने कछारो मे ककड एव ईंट की मिट्‌टी सामान्य रूप से पाई जाती है। जल की सतह जमीन से 14 मीटर के अन्दर स्थित है। नलकूपो के सहारे बडे पैमाने पर सतही जल का शोषण जिले के अधिकाश भागो मे किया जाता है।

खनिज उत्पाद बहुत थोडे है। प्रमुख उत्पाद है– चूने के पत्थर एव ककड, के खण्ड मुख्यत उत्तर–पश्चिम मे मेहरॉवा एव बिलवई रेलवे लाइन के किनारे पाये जाते है जबकि साधारण पिण्डाकार ककड पूरे जिले मे सामान्य है। अन्य खनिज रहे है जो कि जगह–जगह ऊसर भूमि मे पाया जाता है।

भूकंप विज्ञान

जौनपुर जनपद ऐसे स्थान पर स्थित है जहॉ पर पूर्वकाल मे हल्के एव सामान्य तीव्रता के भूकप के झटके महसूस किये गये थे। इस क्षेत्र मे पूर्व मे आये महत्त्वपूर्ण भूकपो मे 2 जून 1927ई0 का रीवा भूकम्प एव 15 जनवरी 1931ई0 का बिहार–नेपाल भूकम्प है। अधिकतम तीव्रता जौनपुर मे बिहार–नेपाल भूकम्प से महसूस की गयी थी जो रेक्टर पैमाने पर 7 एम0एम0 थी।

जिले मे भूकम्प का कारण विभिन्न भू–वैज्ञानिक एव विवर्तनिक दोष है जैसे कि हिमालय सीमा का दोष, विन्ध्य दोष एव गगा के कछारो मे दरार सम्बन्धी दोष जैसे कि लखनऊ एव पटना का दोष।

पूर्वकाल मे इतिहास के परिपेक्ष्य मे तथा विवर्तनिक पहलुओ को दृष्टिगत मे रखते हुए भविष्य मे भूकम्पिय तीव्रता 7 एम0एम0 का अनुमान किया जा सकता है। भारत के भूकम्पी क्षेत्रो के मानचित्र मे जौनपुर को क्षेत्र–3 के अन्तर्गत दिखाया गया है, जो 7 एम0एम0 तीव्रता के भूकम्प के अनुकूल है।

वनस्पति

ढाक के वनो के अलावा जिले मे कोई जगल नही है। अन्य पेड सडको के किनारे या गाव के आस–पास पाये जाते है। यहॉ पूर्वी जिलो मे पायी जाने वाली सामान्य वानस्पतिक प्रजातिया पाई जाती है। प्रमुख जातियॉ है– आम, महुआ, शीशम, नीम, जामुन, सीरल,

पीपल, बरगद एव हल्दी। चावल के क्षेत्र मे बबूल बहुतायत मे है तथा पूर्वी हिस्सो मे ताड बहुतायात मात्रा मे पाये जाते है। गोमती एव सई के किनारे बासो की बहुतायत है। सडको के किनारे आम, जामुन, महुआ एव नीम के पेड लगाए गए है। फलो के वृक्ष जो लगाए गए है अथवा स्वत उगे है, उनमे प्रमुख है– आम, महुआ, बेर, कटहल, आवला एव बेल। 1994–95 तक वन विभाग ने ग्राम समाज की 510 हेक्टेयर जमीन मे वानिकी के काम को पूर्ण कर लिया है। 1976–77 मे लखनऊ–वाराणसी मार्ग पर 20 किलोमीटर एव लुम्बिनी–दुद्धि मार्ग पर 60 किमी0 तक पेड लगाये जा चुके थे। लगाये गये पेडो मे मुख्य थे– शीशम, आम, नीम, जामुन, अर्जुन, सीरिस, बबूल एव यूकेलिप्टस।

जीव–जन्तु

जानवर

जगलो के कमी के कारण जगली जानवरो का महत्त्व नही है। गोमती, सई एव बसुही के दर्रो मे थोडी मात्रा मे भेडिया पाये जाते है। सियार, लोमडी, गिलहरी प्राय पाये जाते है। नील गाय (प्रोक्यूपाइन) विशेषकर नदियो के किनारे पाये जाते है एव फसलो के बहुत नुकसान पहुँचाते है आजमगढ एव गाजीपुर की सीमाओ पर काले मृग के झुड पाये जाते है तथा जिले के कुछ भागो मे नील गाय भी पाई जाती है।

पक्षी

आस पास के जिलो मे पाये जाने वाले पक्षी यहा भी है। जिनमे सामान्यतया मोर, तीतर एव बटेर सम्मिलित है। स्नाइप (टिटिहरी) सई, गोमती नदी एव झीलो के आसपास अत्यल्प मात्रा मे मिलते है। बगुलो के झुड ठण्ड के समय झीलो एव तालाबो के पास मिलते है।

रेंगने वाले जीव

गॉवो मे साप सामान्य रूप से पाये जाते है। ये चावल के क्षेत्रो तथा दर्रो मे भी सामान्य रूप से पाए जाते है। सापो की प्रमुख प्रजातिया जो पायी जाती है– कोबरा, करैत एव धामिन। अन्य रेगने वाले जन्तु है गिरगिट एव छिपकली।

जलीय जन्तु

कुछ नदियों मे बारह मास पानी रहता है फिर भी यहा किसी प्रकार के मासाहारी जलीय जन्तु उनमे नही पाये जाते। वर्षा के समय मे बाढ आदि आने पर घडियाल, सोइस आदि मासाहारी जलीय जन्तु कभी–कभी देखे गये है। मछलिया प्राय सभी क्षेत्रो मे पाई जाती है। पाई जाने वाली प्रमुख प्रजातिया है– रोहू, करॉच, नाइन, परहन, टैगर, सिधी, बटा एव रैया।

जलवायु[5]

जिले की जलवायु नम है। चार ऋतुए है, मार्च से जून तक ग्रीष्म तदोपरान्त सितम्बर तक दक्षिण–पश्चिमी मानसून सक्रिय रहता है, अक्टूबर से आधे नवम्बर तक मानसून के बाद की ऋतु तक तथा आधे नवम्बर से फरवरी तक शीत ऋतु होती है। जिले मे औसत वार्षिक वर्षा 999 9 मिमी0 है, जा कि मछलीशहर मे 950 7 मिमी0 तथा केराकत मे 1045 4 मिमी0 है। जिले मे 89% वर्षा जून से सितम्बर के बीच होती है। वर्षा दर मे प्रत्येक वर्ष मे भिन्नता उल्लेखनीय है। 1901 से 1958ई0 के दरमियान 1948 मे सर्वाधिक 147% वर्षा रिकार्ड की गई, जबकि 1918 मे सबसे कम 65% वर्षा रिकार्ड की गई।

जिले मे औसतन 50 दिन वर्षा होते है, शाहगज मे 46 दिन तथा जौनपुर मे 52 दिन वर्षा होती है। जिले मे 24 घण्टो मे सर्वाधिक वर्षा 370 8 मिमी0 हुई जो कि 19 जुलाई 1955 को मडियाहूँ मे रिकार्ड की गयी।

तापमान

मौसम विज्ञान सम्बन्धी एक बेधशाला हाल ही मे जौनपुर मे प्रारम्भ हुई। वहा से प्राप्त आकडो के अनुसार मार्च के प्रारम्भ मे तापमान बढना आरम्भ होत है। मई का महीना सबसे गर्म होता है। जिसमे अधिकतम तापमान 41^0 सेन्टीग्रेट तथा न्यूनतम लगभग 26^0 सेन्टीग्रेट होता है। कभी–कभी तापमान 47^0 सेन्टीग्रेट तक भी पहुच

तालिका – 1

सामान्य वर्षा[16]

	शीतकाल (दिस0–फर0)	ग्रीष्मकाल (मार्च–मई)	वर्षाकाल (जून–सि0)	परवर्ती वर्षा (अक्टू0–नव0)	वार्षिक (सेमी0 मे)
उत्तरी बिहार	2^0 9	6^0 8	85^0 0	5^0 3	122^0 6
पूर्वी उत्तर प्रदेश	3^0 9	2^0 9	88^0	5^0 2	99^0 3
पश्चिमी उ0 प्र0	6^0 0	30^6	87^0 8	2^0 9	95^0 6

इस तालिका के आधार पर निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उत्तरी बिहार मे सर्वाधिक (122^0 6 सेमी0) वर्षा होती है तथा न्यूनतम वर्षा पश्चिमी उत्तर प्रदेश (95^0 6 सेमी0) मे होती है।

तालिका – 2

सामान्य मध्यक प्रतिदिन का अधिकतम तापमान[17]

(0 सेन्टीग्रेट)

	जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून
बिहार (उत्तर)	23^0 3	26^0 1	32^0 2	37^0 2	37^0 8	35^0 0
उत्तर प्रदेश (पूर्व)	23^0 3	26^0 1	31^0 7	37^0 8	40^0 0	37^0 0
उत्तर प्रदेश (पश्चिम)	21^0 7	34^0 1	30^0 0	36^0 0	40^0 0	37^0 8

	जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्टूबर	नवम्बर	दिसम्बर
बिहार (उत्तर)	32^0 8	31^0 7	31^0 0	31^0 7	27^0 8	23^0 9
उत्तर प्रदेश (पूर्व)	32^0 8	32^0 2	32^0 8	32^0 8	28^0 3	23^0 3
उत्तर प्रदेश (पश्चिम)	32^0 8	32^0 2	32^0 8	32^0 8	27^0 7	23^0 3

तालिका – 3

सामान्य मध्यक प्रतिदिन का न्यूनतम तापमान

(0 सेन्टीग्रेट)

	जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून
बिहार (उत्तर)	10^0 0	12^0 2	17^0 2	22^0 2	25^0 8	26^0 1
उत्तर प्रदेश (पूर्व)	8^0 9	11^0 1	15^0 6	21^0 7	25^0 6	27^0 2
उत्तर प्रदेश (पश्चिम)	7^0 8	10^0 0	14^0 4	20^0 6	25^0 0	26^0 7
	जुलाई	**अगस्त**	**सितम्बर**	**अक्टूबर**	**नवम्बर**	**दिसम्बर**
बिहार (उत्तर)	26^0 1	25^0 6	25^0 6	22^0 2	15^0 0	10^0 6
उत्तर प्रदेश (पूर्व)	26^0 7	26^0 1	25^0 0	20^0 0	12^0 8	8^0 9
उत्तर प्रदेश (पश्चिम)	26^0 1	25^0 6	23^0 3	17^0 8	11^0 1	7^0 8

उपुर्यक्त तालिका (टेबुल) के आधार पर प्रतिदिन का अधिकतम तापमान उत्तर प्रदेश (पूर्व) का 40^0 सेन्टीगेड आका गया है तथा प्रतिदिन का न्यूनतम तापमान उत्तर प्रदेश (पश्चिम) का 7^0 8 सेन्टीग्रेड है।

जाता है। मानसून के आगमन के समय मध्य जून तक दिन के तापमान मे गिरावट आती है किन्तु राते ग्रीष्म के अतिम भाग तक गर्म रहती है। सितम्बर मे मानसून मे कमी आने पर दिन के तापमान मे मामूली सी बढत आती है। अक्टूबर के प्रारम्भ मे मानसून के वापस जाने के समय तक दिन के तापमान मे गिरावट आने लगती है। जनवरी सबसे ठडा महीना होता है, जिसमे दिन का अधिकतम तापमान औसतन 23^0 सेन्टीग्रेट तथा 9^0 सेन्टीग्रेट के बीच होता है। पश्चिमी गडबडियो के कारण शीत ऋतु मे ठण्डी हवाए चलती है एवम् ऐसे अवसरो पर न्यूनतम तापमान गिरकर एक या दो डिग्री हो जाता है।

आर्द्रता

शीत एव ग्रीष्म ऋतु में हवा बहुत सूखी रहती है। अप्रैल और मई मे दोपहर के बाद सापेक्ष आर्द्रता 30% से कम होती है। जून एव नवम्बर के मध्य हवा आर्द्र होती है एव जलवायु नम होती है।

बादल

मानसून के समय एव पश्चिमी बाधाओ के कारण शीत ऋतु मे आसमान भारी मात्रा मे बादलो से भरा रहता है, किन्तु वर्ष के बाकी समय मे आसमान मे हल्के बादल रहते है अथवा अधिकांशत आसमान साफ रहता है।

हवाएं

हवाए सामान्यतया हल्की है। गैर मानसून महीनो मे हवाये अधिकाशत दक्षिण–पश्चिम एव उत्तर–पश्चिम दिशाओ से चलती है। मई माह से हवाए दक्षिण पूर्व एव उत्तर पूर्व दिशाओ से चलना प्रारम्भ करती है एव दक्षिण पश्चिम मानसून के दौरान ये व्यापक रूप से चलती है। किन्तु कभी–कभी मानसून के समय हवाए पश्चिम एव दक्षिण–पश्चिम दिशा से चलती है। यद्यपि ऐसा बहुत कम होता है।

विशेष मौसमी पहलू

बगाल की खाडी मे मानसून के दबाव के कारण चलने वाली पश्चिमी हवाओ का प्रभाव देश के मध्य भागो पर पडता है, जिसका प्रभाव जौनपुर जिले पर तेज हवा एव भारी वर्षा के रूप मे पडता है। शीत ऋतु मे पश्चिमी दबावो के कारण तूफान आते है। ग्रीष्म ऋतु मे धूलभरी आधी एव तूफानी वर्षा बार–बार होती है तथा जाडे के समय कोहरा पडना सामान्य बात है।

तालिका – 4

मध्य पाषाणिक उपकरणों के स्थल और प्ररूपात्मक वितरण (ऊपरी सतह से प्राप्त) : जौनपुर जनपद

क्रम संख्या	स्थलों का नाम	औजार										अप्रयुक्त और उच्छिष्ट उपकरण										
		पुनर्गठित ब्लेड	भुथेड ब्लेड	अर्ध चन्द्र	खुरचनी	नोक	छिद्रक (बोटर)	त्रिभुज	समलम्ब चतुर्भुज	ब्यूरिन	योग	परिकृष्त ब्लेड	अपरिष्कृत ब्लेड	परिष्कृत फलक	अपरिष्कृत फलक	फलक कोर	ब्लेड कोर	कोर ट्रिमिंग फ्लैक्स	माइक्रो ब्यूरिन	चिप	योग	सम्पूर्ण योग
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16	17	18	19	20	21	22	23
1	बसहरा	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	2	–	1	–	–	3	6	6
2	भटपुरा	1	–	–	–	–	–	–	–	–	1	–	–	–	2	–	–	–	–	4	6	7
3	दमनपुर	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	2	–	–	–	–	–	3	7	7
4	धनी का पूरा	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	1	–	–	–	–	–	2	3	3
5	गजाधर पुर	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	2	–	–	–	–	6	9	9
6	केथोरा	1	–	–	–	–	–	–	–	–	1	–	–	–	1	–	–	–	–	4	5	6

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16	17	18	19	20	21	22	23
7	केयोटली खुर्द	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	2	—	—	1	—	—	—	—	4	7	7
8	लोहिना	—	—	—	—	—	—	1	—	—	1	—	—	—	2	—	—	3	—	5	10	11
9	नचरौला	1	—	—	—	—	—	—	—	—	1	—	—	—	6	—	—	11	—	12	29	30
10	नगौली	—	—	—	—	—	—	1	—	—	1	—	—	—	—	—	2	—	—	4	6	7
11	पहितियापुर	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	3	3	3
12	पूरेगगामनी	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	1	—	—	1	—	—	3	5	5
13	पूरे गम्भरी शाह	20	9	5	1	12	—	1	2	—	50	23	13	12	27	5	7	19	—	188	294	344
14	शिवनगर	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	2	—	—	—	—	5	7	7
	टोटल	23	9	5	1	12	—	3	2	—	55	25	13	16	46	5	12	34	—	246	397	452

टिप्पणी और सन्दर्भ

1– गुप्त एन0एल0 (1888) उत्तर प्रदेश डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, जौनपुर जनपद, लखनऊ, पेज 1–20,

2– उत्तर प्रदेश जनगणना हस्तपुस्तिका (1991), जौनपुर जनपद।

3– गुप्त, एन0एल0, (1888), उत्तर प्रदेश डिस्ट्रिक्ट गजेटियर जौनपुर जनपद, लखनऊ, 1–20

4– सिह, आर0एल0, 1971, इडिया, एरिजनल जागर्फी, वाराणसी, पेज– 40

5– सिह, आर0एल0, 1971, इडिया, रीजनल जागर्फी, वाराणसी, पेज– 40

द्वितीय अध्याय

जौनपुर जनपद का ऐतिहासिक सर्वेक्षण

- पूर्व इतिहास युग
- महत्त्वपूर्ण पुरातात्त्विक स्थल
- संक्षिप्त इतिहास

जौनपुर की पुरातात्त्विक संस्कृतियाँ एवम् प्रारम्भिक इतिहास युग

प्राय और क्षेत्रो की ही भाति जौनपुर का प्रारम्भिक–ऐतिहासिक काल का विवरण पौराणिक साक्ष्यो पर आधारित है, जिसकी अभी ऐतिहासिक और पुरातात्त्विक साक्ष्यो से पुष्टि होने की भी आवश्यकता है। इतिहास काल के पूर्व (600ई0 पूर्व के पूर्व का) के इतिहास को जानने के लिए, जिनके लिए एक मात्र स्रोत पुरातात्त्विक सामग्रिया है, उनके लिए अभी तक समुचित प्रयास नही किया गया। समीपवर्ती दो विश्वविद्यालयो – इलाहाबाद विश्वविद्यालय और बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के पुरातत्त्व विदो और कुछ शोधार्थियो ने सरसरी तौर पर इस जनपद का सर्वेक्षण किया है, जिसके फलस्वरूप यह बात स्पष्टत सामने आई कि मध्यगगाघाटी मे स्थित अन्य जनपदो की ही भाति यहा का भी पूर्व इतिहास है। अब तक मिले लघु पाषाण उपकरणो और एन0बी0पी0डब्ल्यू0 तथा प्राक् एन0बी0पी0डब्ल्यू0 (लाल पात्र–खण्ड, काले बर्तन, लाल और काले बर्तन (बी0आर0डब्ल्यू0) ताम्र पाषाणिक उपकरण) के पात्र खण्डो से यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकताहै कि इस जनपद की इतिहास पूर्व युग की सस्कृति क्रमेण

पाषाण–काल से मध्य पाषाणकाल, ताम्र पाषाण काल व एन0बी0पी0 सस्कृति के रूप मे देखा जा सकता है।[1]

उल्लेखनीय है कि इस जनपद के अभी किसी भी स्थल की सक्षिप्त अथवा विस्तृत खुदाई नही हुई है। अतएव मात्र सर्वेक्षण की रिपोर्ट का ही सहारा लिया जा सकता है। ध्यातव्य है कि समीपवर्ती पश्चिमी दिशा मे प्रतापगढ जनपद मे अनेक मध्य पाषाणिक स्थल प्रकाश मे आये है और जिनकी इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्त्व विभाग द्वारा व्यापक पैमाने पर खुदाई भी हुई है। जिससे उस जनपद की एव समीपवर्ती क्षेत्रो की पाषाणकालिक सस्कृतियो के विषयो मे महत्त्वपूर्ण जानकारी मिली है। इन स्थलो से सटे हुए जौनपुर जनपद मे अनेक मध्य पाषाणिक स्थल प्रकाश मे आये है। बहुत सम्भव है कि ये स्थल ही संस्कृति (प्रतापगढ जनपद के) के अग रहे होगे।

अब तक के सर्वेक्षण रिपोर्टो एव अन्य सामग्रियो के आलोक मे तथा समीपवर्ती एव मध्यगगाघाटी की सम्पूर्ण पूर्व इतिहास युग की सस्कृतियो के सापेक्ष मे इस जनपद के पूर्व इतिहास युग को निम्न सास्कृतिक अनुक्रम मे रखा जा सकता है[2] –

(1) मध्य पाषाणकालिक सस्कृति
(2) ताम्र पाषणकालिक सस्कृति एवम्
(3) प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल या एन0बी0पी0डब्ल्यू0 सस्कृति।

यह एक ज्वलन्त प्रश्न है कि मध्यगगाघाटी के पश्चिमी भाग मे जहॉ से मध्य पाषाणिक सस्कृतियो के व्यापक प्रमाण मिले है, वहा से अभी तक नव पाषाणिक उपकरण नही प्राप्त होते है।[3] यह या तो सर्वेक्षण की कमी अथवा अन्य कोई कारण हो सकता है। जौनपुर मे भी अभी तक किसी भे क्षेत्र मे नव पाषाणिक स्थल प्रकाश मे नही आए है। जौनपुर जनपद के अनेक क्षेत्रो से पाषाणकालिक एव उत्तरवर्ती काल के (इतिहास पूर्व युग के) प्रमुख सस्कृतियो का विवेचन निम्नानुसार किया जा सकता है–

मध्य पाषाणिक संस्कृति[4]

जौनपुर जिले मे अनुसधान से अब तक चौदह मध्य पाषाण कालीन स्थल प्रकाश मे आये है। जिनमे ग्यारह स्थल प्रारम्भिक मध्य पाषाणकाल तथा तीन परवर्ती मध्य पाषाणकाल से सम्बन्धित है। कुल 453 उपकरण समूहो मे 55 (12 53%) ज्यामितिय और 398 (87 63%) अज्यामितिय उपकरण है। कुछ स्थलो से अपरिष्कृत फलक प्राप्त हुये है लेकिन उनमे से कुछ ज्यामितिय आकार के उपकरण भी है। आठ स्थलो मे कोई भी ज्यामितिय उपकरण प्राप्त नही हुए है। पाच स्थलो मे केवल एक–एक ज्यामितिय उपकरण प्राप्त हुए है। पूरे गम्भीर शाह स्थल एक अपवाद है जहा 50 ज्यामितिय उपकरण और 294 परिष्कृत और अपरिष्कृत उपकरण मिले है प्रमुख उपकरण परिष्कृत धार तथा

नोक वाले है। छोटे उपकरणो मे– चाद्रिक, खुरचनी, त्रिभुज एव चतुर्भुज प्रमुख है। 23 परिष्कृत धार वाले उपकरणो की लम्बाई की माप अधिकतम 45 मिलीमीटर एव न्यूनतम 10 मिलीमीटर तथा 27 45 मिलीमीटर के मध्य है। 22 कोरो का मात्रिक मूल्य था– अधिकतम लम्बाई 42 मिलीमीटर, न्यूनतम 15 मिलीमीटर एव माध्य 29 75 मिलीमीटर है।

ताम्र पाषाणिक संस्कृति और प्रारम्भिक इतिहासकालीन सांस्कृतिक अनुक्रम और पुरास्थल

समय–समय पर इलाहाबाद विश्वविद्यालय एव बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा किये गये सर्वेक्षणो से सतह पर ही अनेक पात्र–खण्ड प्रतिवेदित हुए है। इन स्थलो मे बदलापुर तहसील मे स्थित एकहुँआ स्थल ताम्र–पाषाणिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। इस स्थल की खोज 1980 मे इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास सस्कृति एव पुरातत्त्व विभाग के डॉ0 जे0एन0 पाल, श्री बी0बी0 मिश्र एव डॉ0 मानिक चन्द्र गुप्ता आदि ने की थी। यहॉ इसी से सटा हुआ स्थल कल्याणपुर एव केवटली है। यहॉ से मेसोलिथिक उपकरणो के बाद लाल बर्तन (रेड वेयर) एव एन0बी0पी0डब्ल्यू0 के बर्तन प्राप्त हुए है। सई नदी के तट पर रायबरेली और प्रतापगढ जनपदो मे कई महत्वपूर्ण आवास स्थल प्रकाश मे आये है जहॉ से प्राक् एन0वी0पी0

पात्र परम्परा के बर्तन और अन्य सामग्रियॉ और एन0पी0पी0 पात्र परम्परा के पात्र खण्ड और कुषाण सामग्रियॉ प्राप्त हुई है जो इस स्थलो के दीर्घ काल तक आबाद रहने के प्रमाण प्रस्तुत करते है। जौनपुर तहसील मे जफराबाद स्थल से एन0बी0पी0डब्ल्यू0 और प्राक् एन0बी0पी0डब्ल्यू0 पात्र–परम्पराये काफी सख्या मे प्राप्त हुई है। इसी प्रकार अनेक स्थल है जिनका सक्षिप्त विवरण एक साथ निम्नवत् रूप है।

मॉझीपुर की कोट

शाहगज तहसील मे स्थित इस स्थल की लम्बाई 200 मीटर, चौडाई 65 मीटर तथा ऊॅचाई 15 मीटर है। इस स्थल से एन0बी0पी0डब्ल्यू0 ग्रे वेयर, रेड वेयर और मुगलकालीन काचालित पात्र एव टेराकोटा पाये गये है। प्राकृतिक रूप से सुरक्षित इस स्थल के एक तरफ गोमती नदी एव तीन तरफ से नाले प्रवाहित होते है।

जफराबाद

जौनपुर तहसील मे स्थित यह स्थल 150X130X8 मीटर विस्तृत क्षेत्रफल मे स्थित है। यहा पर टीले की सतह पर ही रेड वेयर, ब्लैक ऐड रेड वेयर, एन0बी0पी0डब्ल्यू0 और परवर्ती एन0बी0पी0डब्ल्यू0 के

प्रमाण तथा सुरक्षा प्राचीर के सकेत प्राप्त हुए है। इस स्थल के बारे मे साहित्यिक साक्ष्य गुप्तकाल से प्रारम्भ होते है।

बजरा टीकर

बजरा टीकर वाराणसी से जौनपुर जाने वाले रेलवे लाइन तथा सडक पर रास्ते मे स्थित जलालगज रेलवे स्टेशन तथा जलालपुर चौराहे से लगभग 3 मील दूर पश्चिम और उत्तर के कोने पर पुर्रेव बाजार के समीप स्थित है। यह टीला 60 फिट ऊँचाई वाला है। जौनपुर गजेटियर के लेखक के अनुसार यहाँ करारवीर नाम का शक्तिशाली राजा था। अब भी इसके विषय मे अनेक जनश्रुतियाँ प्रचलित है। यहाँ पर प्राप्त अवशेषो मे ग्रे वेयर (गैरिक मृदभाण्ड), एन0बी0पी0डब्ल्यू0, ओ0सी0पी0, परवर्ती एन0बी0पी0डब्ल्यू0 प्राप्त हुए है। सख्या मे अपेक्षाकृत काफी कम ब्लैक ऐड रेड वेयर के पात्र–खण्ड भी सतह पर मिले है। इन प्राप्त बर्तनो मे थाली, कटोरे, लोटा आदि है।

शाहगंज तहसील में प्राप्त प्रमुख स्थल

शाहगज तहसील मे सर्वेक्षण के दौरान अनेक स्थल प्राप्त हुए है। जिनमे बाँधगाव, गेरवहा डीह, अडसिया बाजार, असेथा का डीह, गोरहरी की कोट, हुसैनाबाद की कोट, कोटिया, बावन का डीह,

डिह्वा, मुबारकपुर की कोट, कोट की मोरी, टियारा कोट, कोहीन कला, गढगोपालपुर, खनिया की कोट, माहदा की कोट, डरारी डीह, भरही कोट, बदलापुर की कोट, हामिदपुर की कोट, उरुरी कोट, खलगवॉ मठ और मॉझीपुर की कोट।

इन स्थलो से जो सामग्रियॉ प्राप्त हुई है, उनमे रेड वेयर, ब्लैक ऐंड रेड वेयर (कही–कही) ग्रेय वेयर, एन0बी0पी0डब्ल्यू0 और परवर्ती एन0बी0पी0डब्ल्यू0 सस्कृति के प्रमाण प्राप्त हुए है। पात्र प्रकारो मे थाली, लोटे, कटोरे, तस्तरियॉ आदि है। इसके अलावा मानव और पशु मृण्मूर्तियॉ भी प्राप्त हुई है।

जौनपुर तहसील के स्थल

जौनपुर तहसील के प्रमुख सर्वेक्षित स्थलो मे जहॉ पर प्राचीन पुरावशेष प्राप्त हुए है, उनमे हौज, जफराबाद महल, सुल्तानपुर, सादीपुर, परियॉवा प्रमुख है। इन स्थलो पर भी शाहगज तहसील की ही स्थलो की भाति प्राय रेड वेयर, ग्रे वेयर, ब्लैक ऐंड रेड वेयर और एन0बी0पी0डब्ल्यू0 प्राप्त हुए है।

केराकत तहसील

केराकत तहसील के प्रमुख स्थलो मे ओइना, थाना गद्दी, खटहरा, बेलॉव, हरिहरपुर आदि है। इन सभी स्थलो से भी प्राय वही

पात्र–खण्ड प्राप्त हुए है जो जौनपुर और शाहगज तहसील के स्थलो से प्राप्त हुए है।

मड़ियाहूँ तहसील

मडियाहूँ तहसील मे सर्वेक्षित प्रमुख स्थलो मे रायपुर, भँवरपुर, बारीगाव तेजगढ, कोठवॉ आदि स्थल है। कोठवॉ के अतिरिक्त सभी स्थ्लो से रेड वेयर, ब्लैक ऐड रेड वेयर, एन0बी0पी0डब्ल्यू0 के पात्र खण्ड उपलब्ध हुए है। कोठवॉ मे सस्कृति का एक सुव्यवस्थित क्रम दिखाई पडता है। 449X209X53 फिट के विस्तृत क्षेत्रफल मे स्थित यह स्थल प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल से लगता है कि महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया था। जौनपुर गजेटियर का लेखक इसे सोइरियो की राजधानी के रूप मे पहचान की है। यहॉ देखने पर लगता है किला और उसके लिए मजबूत सुरक्षा दीवार रही होगी। यहॉ से प्राप्त पात्र–प्रकारो मे रेड वेयर, ब्लैक ऐड रेड वेयर, ग्रे वेयर और एन0बी0पी0डब्ल्यू0 के पात्र–खण्ड प्रापत हुए है। प्रमुख पात्रो मे थाली, लोटा, घडा, हॉडी आदि के अवशेष प्राप्त हुए है।

मछलीशहर तहसील

मछलीशहर तहसील मे अपेक्षाकृत काफी कम स्थल अब तक प्रकाश मे आए है। सवेक्षण के दौरान प्रकाश मे आए प्रमुख स्थलों मे–

सगर, थलोई, मुस्तफाबाद, नगौली और पॅवारा है। इन स्थलो से रेड वेयर, ब्लैक वेयर तथा एन0बी0पी0डब्ल्यू0 के पात्र–खण्ड उपलब्ध हुए है।[5]

जौनपुर जनपद मे अनेक एन0बी0पी0डब्ल्यू0 स्थलो की खोज समय–समय पर शोधार्थियो एव विद्वानो द्वारा की गयी है। इनमे से जो स्थल अब तक प्रकाश मे लाये गये है, उनमे रजलहा, चॉदी डीह डीहा, डिहवान, डीह दरारी, काइरान, गजहर मऊ, गस, गोपालपुर, राजा का किला, रैनडीह, सरॉय, नदियानासा, कोटा बरही, मडवा डीह और नमफोरा है।[6]

उल्लेखनीय है कि मध्यगगाघाटी के अन्य ताम्र पाषाणिक या पूर्व इतिहास युगीन सास्कृतिक अनुक्रम की ही तरह जौनपुर जनपद मे भी सर्वेक्षण के दौरान सस्कृतियो के अनुक्रम का आभास मिलता है। जौनपुर जनपद से प्राप्त यदि सभी स्थलो से प्राप्त सामग्रिया का यदि एक सास्कृतिक अनुक्रम निर्धारित करे तो क्रमश रेड वेयर, ताम्र निधियॉ एव उनके साथ प्राप्त उपकरण, ब्लेक वेयर, ब्लैक ऐड रेड वेयर, ग्रे वेयर और एन0 बी0 पी0 डब्ल्यू0 पात्रो को रखा जा सकता है।

प्राचीन इतिहास का संक्षिप्त सर्वेक्षण

जौनपुर का प्रारम्भिक इतिहास अज्ञात है। इस क्षेत्र के किसी शासक का उल्लेख नही मिलता। उत्तम रूप से यह सुझाव दिया जा सकता है कि वर्तमान जौनपुर जिला जो कि वाराणसी अनुभाग का उत्तर–पश्चिमी हिस्सा है, एक समय आशिक रूप से कौशल एव वत्स के राज्यो मे सम्मिलित था। कौशल की राजधानी श्रावस्ती थी जो कि पूर्व दिशा मे बहराइच जिले मे सहेत–महेत से आबद्ध थी, स्थूल रूप से आधुनिक अवध अनुरूप थी, गडक एव गोमती नदियॉ क्रमश इसकी पूर्वी एव पश्चिमी सीमाए थी। सई नदी जो सम्भवत प्राचीनकाल मे स्यदिका अथवा सर्पिका के रूप मे जानी जाती थी, इसकी दक्षिणी सीमा थी, जबकि उत्तर मे यह नेपाल की सीमाओ क्षेत्र को छूती थी।[7] कौशल सरयू नदी द्वारा उत्तर एव दक्षिण मे विभाजित था। जौनपुर का वर्तमान जिला आशिक रूप से वत्स मे सम्मिलित था जिसकी राजधानी कुशावती की पहचान देवरिया जिले के आधुनिक कसिया से की जाती थी।[8]

जौनपुर की स्थापना, उद्भव एव नाम के विषय मे अनेको परम्पराए है। जमदग्नि ऋषि के साथ इसके सम्बन्ध तथा जफराबाद एव जौनपुर के बीच गोमती के दाहिने किनारे एक स्थान पर उल्लेख पहले ही किया जा चुका है।[9] लाल दरवाजा मस्जिद के एक स्तम्भ

पर यमोत्यायमपुर (जो कि, विश्वास किया जाता है कि यवनपुर का अपभ्रश है) या दूसरा अयोध्यामपुर कहा जाता है कि जौनपुर का एक पुराना नाम था।[10]

जिले का प्रारम्भिक इतिहास स्थानीय दतकथाओ एव परम्पराओ पर आधारित है। एक परम्परा के अनुसार जब राम अयोध्या मे राज्य करते थे, आधुनिक जौनपुर मे गोमती के घुमाव मे भयानक राक्षस करालवीर (केरारवीर) रहा करता था। भय एव हिसक गतिविधियो के कारण राजमार्ग असुरक्षित था, राम को उसके विरूद्ध अभियान कर उसका वध करना पडा। उन्होने राक्षस के धड को स्मृति के रूप मे वहॉ छोड दिया। राक्षस के अनुयाइयो ने अपने स्वामी के प्रति भक्ति के प्रतीक के रूप मे उसके अवशेषो पर एक मन्दिर बनवा दिया।[11] राक्षस का नाम शहर के मोहल्ला केरार मे सुरक्षित है। समझा जाता है कि केराकत तहसील का नाम भी 'केरारकोट' से लिया गया है, स्पष्टतया केरार शब्द केरार वीर के ही समान है।[12] उसकी समाधि गोमती के बाए किनारे पर स्थित है, टीले के दक्षिण–पश्चिमी ढाल पर जौनपुर का किला स्थित है। केरार वीर समाधि मे एक प्रतिमा है जो कि एक मानव–धड से धुधली समता रखती है। किन्तु ऐसा सुझाव दिया गया है कि आकारहीन पुज वास्तव मे किले की टीले की रूप–रेखा का प्रतिनिधित्व करता है जब इसमे कन्नौज के राजा

विजयचन्द्र द्वारा एक मन्दिर बनवाया गया था, नए किले के निर्माण हेतु पत्थरो के इस्तेमाल के लिए फिरोज तुगलक ने इसे नष्ट कर दिया था।[13] सम्भवत केरारकोट के पुराने किले के ऊपर एक हिन्दू किला था जहॉ फिरोज तुगलक का नष्ट हो चुका किला स्थित है एव केरार कोटा का नाम अब भी लोगो की स्मृति मे विद्यमान है। मिथक की एक सभावित व्याख्या यह है कि केरार केवल एक बहादुर का नाम नही था वरन् भरो का एक वर्ग था।[14] जौनपुर का पूर्वी परगना केराकत का नाम उसी वर्ग के लोगो से लिया गया प्रतीत होता है।[15]

विश्वास किया जाता है कि प्रागैतिहासिक काल मे इस क्षेत्र मे भर, राजभर एव सोइरी व्यवसायरत थे। पूरे जिले मे गावो मे बडी सख्या मे टीले पाये जाते है जिनके विषय मे कहा जाता है कि वे इन आदिवासी प्रजातियो के गावो एव किलो के अवशेष है, जो कि स्थानीय अधविश्वासो के अनुसार निवासियो के रहने योग्य नही है। ये टीले सामान्यतया पक्के ईटो से निर्मित है। ऐसा प्रतीत होता है कि भर नाम अभिन्न रूप से तीनो जनजातियो अथवा प्रजातियो के लिए प्रयुक्त होता था, किन्तु राजभर प्रतीत होता है कि जिले के उत्तर मे फले–फूले, जबकि सोइरी लोगो ने मडियाहूँ पर अधिकार किया[16] एव उनके किले चदवक तथा हेरियापुर मे थे।[17] उनका अधिकार क्षेत्र दक्षिण–पूर्व एव पूर्व वाराणसी अनुभाग के एक बडे हिस्से तक विस्तृत

था, किन्तु वे प्राय पूरी तरह समाप्त हो गए, उन्होने पुराने ग्रामीण टीलो के अलावा कोई चिन्ह नही छोडा। जो कि उनके द्वारा बसाए गये स्थलो के रूप मे आजकल सकेतिक किये जाते है। मछलीशहर, जो कि जिले की एक तहसील का मुख्यालय है, का प्राचीन नाम भर सरदार घीसू, जिसने नगर की स्थापना की थी तथा मूल किले का निर्माण कराया था, के नाम पर घिसवा था।[18]

जिले मे भर एव सोइरी अधिवास सकेत करते है कि सम्भवत पूर्वकाल मे उन्होने कुछ शक्ति सचालित की थी। ऐसा प्रतीत होता है कि भर विभिन्न हिन्दू जातियो मे समाहित हो गए एव उनके रीति–रिवाजो एव आदतो को अपना लिया।

जिले का प्रारम्भिक इतिहास ऐतिहासिक परम्पराओ मे अनुरेखित किया जा सकता है, जिसके अनुसार सभी वश प्रथम राजा मनु वैवस्वत से उद्भूत हुए। मनु के नौ पुत्रो एव एक पुत्री थी, उनमे समस्त भारत विभाजित था। बडे पुत्र इक्ष्वाकु को मध्य देश प्राप्त हुआ एव वे सूर्य वश के प्रजनक थे जिसकी राजधानी अयोध्या थी।

अयोध्या का राज्य युवनासव द्वितीय तथा उसके पुत्र मान्धाता के अन्तर्गत प्रमुखता को प्राप्त हुआ। मान्धाता ने अपना व्यापक प्रभाव विस्तार कि तथा पौरव, कान्यकुब्ज राज्य एव द्रह्यु को पराजित किया। तथापि अयोध्या की सर्वोच्चता का ह्रास हो गया एव हैहय

प्रमुख शक्ति बन गए, जिन्होने भार्गवरो (भृगओ) से दुर्व्यवहार कर उन्हे मध्य देश से भागने को बाध्य कर दिया। प्रसिद्ध ऋषि रिचिका औरव उनमे प्रमुख थे। उनके सौ पुत्र थे जिनमे सबसे बडे जमदग्नि थे। उन्होने स्वय को रेणुका से विवाह कर अयोध्या राजकीय घराने से सहबद्ध कर लिया था। जो कि रेणुका की पुत्र थी। भृगु–हैहय सघर्ष का प्रारम्भ है यह राजा कार्तवीर्य द्वारा जमदग्नि के पुत्र राम (परशुराम) की अनुपस्थिति मे उनके आश्रम पर आक्रमण से प्रारम्भ हुआ, उसने वृद्ध ऋषि को सताया तथा पवित्र गाय को बलपूर्वक उठा ले गया।[19] वशगत सूची के अनुसार परशुराम, राम के समय के कई पीढी पहले हुए थे।[20] (परशु) राम एव भार्गवो को अयोध्या एव कान्यकुब्ज के राजकुमारो का समर्थन प्राप्त था, जो कि विवाह द्वारा उनसे सहबद्ध थे एव जो कि स्वाभाविक रूप से हैहयो के भयानक आक्रमणो का विरोध करते थे। यद्यपि हैहयो को एक झटका लगा किन्तु उन्होने पुन· अपनी शक्ति प्राप्त कर अपने प्रभाव को खम्भात से गगा–यमुना दोआब, इसके बाद जौनपुर सहित वाराणसी तक विस्तृत कर लिया।

अयोध्या का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण राजा, जो कि अपनी विजयो एव पवित्र भूमिका के लिए प्रसिद्ध था, दिलीप द्वितीय था। उसके तत्कालीन उत्तराधिकारी रघु, अज एव दशरथ समान रूप से प्रसिद्ध

थे एव इस समय तक अयोध्या ने कौशल नाम प्राप्त कर लिया था।[21] रामायण के अनुसार दशरथ पुत्र राम के बाद 35 राजा हुए जबकि पुराणो के अनुसार 63 राजा इस क्रम मे हुए।[22]

परम्परागत इतिहास मे गैर–आर्यो (अनार्यो) के अस्तित्त्व का भी उल्लेख है जो कि आर्य परम्परा से बाहर के थे। वे आशिक रूप से सभ्य थे तथा सामान्यतया दानव, राक्षस आदि कहे जाते थे। जब यह क्षेत्र करार वीर के पराजय एव मृत्यु के बाद राम के अधीन हुआ, अनार्य सभ्यता के प्रभाव मे आए। राम के बाद कौशल की राजधानी अयोध्या का परम्परागत इतिहास मे महत्त्वपूर्ण भूमिका नही है। भारत–युद्ध के पूर्व सूर्यवश का अतिम राजा बृहद्बल था। पुराण कौशल के इक्ष्वाकु राजाओ की सूची प्रस्तुत करते है जो कि बृहद्बल से प्रारम्भ होता है। पूर्व–महाकाव्य या पूर्व–बौद्ध युग मे कौशल महत्त्वपूर्ण नही था जैसा कि इसने समय–समय पर काशी की प्रभुता को स्वीकार किया।

छठी शताब्दी ईसा पूर्व मे अनिश्चित परम्पराओ एव दत कथाओ से अलग इतिहास का अभ्युदय हुआ। बुद्ध के समय मे कौशल सोलह महाजनपदो मे एक था। इसका शासक महाकौशल था जो कि कहा जाता है कि काशी पर भी समान नियत्रण रखता था। उसके पुत्र प्रसेनजीत ने उस काल के राजनैतिक नाटक मे प्रभावशाली भूमिका

अदा की। जौनपुर क्षेत्र कौशल राज्य मे सम्मिलित कर लिया गया एव यह कहा जाता है कि मनैच्छ, जफराबाद का प्राचीन नाम, उस काल के उसी व्यक्तित्त्व के साथ अनुरेखित किया जा सकता है। फ्यूरर के अनुसार शेख बारहन की मस्जिद, जो कि बहुत महत्त्वपूर्ण इमारत है, प्रतीत होता है कि सामग्री से एक बौद्ध मदिर के स्थल पर बना है। इस जिले मे अनेक अन्य स्थान है जो बौद्ध–काल से सम्बद्ध होने का दावा कर सकते हैं। इस प्रकार, केराकत एव मछलीशहर कल्पना किया जाता है कि पाली साहित्य के कीतगिरि एव मच्छिकासद अथवा मच्छिकासनद है जो काशी जनपद का अग है। ये दो शहर वाराणसी से श्रावस्ती जाने वाले मुख्य मार्ग पर थे एव यह कहा जाता है कि बस्ती से मच्छिकासद 30 योजन (लगभग 141 किलोमीटर) दूर था, जबकि कीतगिरि शहर मे दो बौद्ध भिक्षु अश्वजीत एव पुनर्वसु रहते थे। वे विनयपिटक के नियमो के अपालन के लिए प्रसिद्ध थे। सारिपत्र एव मौदगल्यायन ने उन्हे सही करने हेतु यहॉ अनेको धार्मिक व्याख्यान दिये एव उनके उचित आचरण हेतु नियम बनाए। निस्सदेह बौद्ध–धर्म इस क्षेत्र में लम्बे समय तक फूला–फला।

महाकोशल का पुत्र एव उत्तराधिकारी प्रसेनजित जो कि छठी शताब्दी ईसा पूर्व के उत्तरार्द्ध मे फूला–फला, बुद्ध का समकालीन था। उसने मगध के विम्बिसार के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किया

तथ उसे उसने काशी के साथ–साथ अपनी बहन का पाणिग्रहण कराया। उसके बहनोई की मृत्यु, तदोपरात अजातशत्रु से युद्ध ने दोनो के बीच सम्बन्धो को कटु बना दिया, अतत नए मगध शासक के साथ उसकी पुत्री चेल्लना के विवाह ने सम्बन्धो को पाने का प्रयास भी किया जो कि निस्सदेह उसे मिली किन्तु वह पवित्र नही थी। शाक्य राजकुमार के पर्दे मे छुपी शूद्र कन्या से विदुदाभ का जन्म हुआ जिसने अपने पिता की गद्दी छीन ली तथा शाक्यो को भी नष्ट कर दिया। कोशल का इतिहास उसके बाद नन्दो के समय तक रहस्य मे लिपटा हुआ है जब हम इसे महापद्म के साम्राज्य के एक भाग के रूप मे पाते है।

जौनपुर जिले का इतिहास पाटलिपुत्र नामक राजधानी से राज्य करने वाले मौर्यो एव शुगो के समय मगध साम्राज्य से जुडा है। हर्षचरित के साक्ष्य के अनुसार मूलदेव ने कोसल के शुग सम्राट की हत्या कर दी एव राजाओ की पक्ति का संस्थापक बना। उसके सिक्के अयोध्या मे मिले है एव उसके सिक्को की लिपि के अनुसार उसका समय लगभग 68 ईसा पूर्व निर्धारित किया जा सकता है। प्रारम्भिक कोसल के सिक्के मूलदेव से आरम्भ होकर प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व के अत तक समाप्त होने लगते है।[23] कुषाणो ने भी इस क्षेत्र पर शासन किया एव सभवत यह उनके साम्राज्य का पूर्वी हिस्सा था

जो कि वनासपार एव खरपल्लन के अधीन था जो कि कुषाण श्रत्रप एव महाक्षत्रप थे। कुषाणो के पतन के उपरान्त इस क्षेत्र मे अनेको छोटी–छोटी इकाइयो का उद्भव हुआ जो कि एक समय देव पुत्रो द्वारा प्रशासित थे, जबकि सीथियन समूह के मुरूड पूर्वी भारत मे प्रमुख हो गए। उनका साम्राज्य काफी व्यापक था एव कन्नौज तक विस्तुत था। इस स्थिति मे जौनपुर जो कि कोसल का भाग था, निश्चय ही मुरूडो के साम्राज्य का भी हिस्सा बना होगा। पुराण कहते है कि देवरक्षित, जिन्होने मुरूडो के शासन का अत किया, भी कोसल के शासक बने। गुप्त शासको का भी इस क्षेत्र पर दृढ अधिकार था, यद्यपि पाचवी शताब्दी ईसा के उत्तरार्द्ध मे पुश्यमित्रो द्वारा उत्पन्न आतरिक गडबडिया भी थी, इन विपत्तियो एव इनसे निपटने हेतु स्कन्दरगुप्त के सफल प्रयत्नो की सूचना गाजीपुर जिले के प्रसिद्ध भीतरी अभिलेखो से मिलते है। बाद मे यह यशोधर्मन के साम्राज्य का अग बना होगा एव अतत मौखरियो के साम्राज्य का, जैसा कि एक सस्कृत अभिलेख से प्रकट होता है। यह अभिलेख जामी मस्जिद के पत्थर की एक पट्टी पर उत्कीर्ण पाया गया है जिसमे मौखरिवंश के ईश्वरवर्मन का नाम उल्लिखित है। अभिलेख मे ईश्वरवर्मन के कुछ उपलब्धियो का लेखा–जोखा है। यह सामान्य रूप से ईश्वरवर्मन द्वारा राज्य की सफल सुरक्षा को अकित करता है।[24]

यह एक खण्डित अभिलेख है, इसकी चौथी पक्ति कथित परिवार के ईश्वरवर्मन की बात कहती है जिसके पूर्वज का नाम नष्ट हो चुका है। ईश्वरवर्मन के उत्तराधिकारी का नाम 5–11 पक्तियो के वर्तमान भाग से अनुरेखित नही किया जा सकता है। दो खण्डित पक्तियो मे आध्रो पर विजय जैसी उपलब्धियो के कुछ साक्ष्य मिलते है जो कि ईश्वरवर्मन के पुत्र एव उत्तराधिकारी ईशानवर्मन से सम्बन्धित है जो कि छठी शताब्दी ई0 के तृतीय चतुर्थाश मे फूला–फला। वि0स0 611 के सूर्यवर्मन (553–554ई0) के हर अभिलेख (बाराबकी जिला) भी उसके पिता ईशानवर्मन की विजयो का लेखा–जोखा रखता है। इस प्रकार जौनपुर जिला मौखरियो के अधीन बना रहा एव अतत थानेश्वर एव कन्नौज के दोनो घरानो के एक हो जाने पर यह हर्ष के अधीन हो गया। आगे चलकर कन्नौज के यशोवर्मन (लगभग 725–752ई0) ने इस पर शासन किया एव अतत यह गुर्जर–प्रतिहार साम्राज्य का अश बन गया। यह कहा जाता है कि (जौनपुर) शहर को महमूद के आक्रमण का सामना भी करना पडा। 1019ई0 मे गजनी के शासक ने पजाब के जयपाल को यमुना पार खदेड दिया एव उसका कन्नौज तक पीछा किया। जयपाल ने अपने अधीन सामन्तो के साथ आश्रय पाने हेतु गगा के उत्तरी छोर को पार किया। अपनी जान बचाने हेतु प्रतीत होता है कि वह मगध की ओर वाराणसी के राजा चन्द्रपाल द्वारा सुरक्षा पाने हेतु बढा। महमूद ने उसका पीछा

किया एव एक परम्परा के अनुसार उसने रथगढ पर अधिकार कर लिया जो कि एक छोटा किला था, इसके अवशेष से प्रतीत होता है कि जफराबाद बाजार के उत्तर मे स्थित है। उसके बाद मे वह आगे बढा।[25]

स्थानीय परम्पराओ के अनुसार महमूद गजनी का एक भतीजा एव महान वीर सैयद सालार मसूद गजनी अपने वाराणसी अभियान के समय सतरिख (बाराबकी जिला) से इस जिले (जौनपुर) होते हुए लगभग 423 अल हि0 (1033ई0) के लगभग गुजरा। यह भी कहा जाता है कि उसने अपने सेना की एक टुकडी मलिक फजल के अधीन भेजी जिसे जिले के लोगो के मजबूत विरोध का सामना करना पडा। इस कार्य मे अनेको आक्रमणकारी मारे गये एव वे ऐसा प्रतीत होता है, जफराबाद कस्बे मे दफना दिये गए। सैयद सालार मसूद गजनी के लूटपाट की कहानी को इतिहासकारो द्वारा महत्त्व नही दिया गया है, वे इसे साधारणतया 17वी शताब्दी के ग्रन्थ मीरात–ए–मसोदी, जो कि इसका एक मात्र स्रोत है, द्वारा प्रचारित मिथक बताते है।

1019 से 1027 के बीच जिले का इतिहास नही मिलता। 1097ई0 मे गहडवाल राज्य के सस्थापक चन्द्रदेव ने कन्नौज राज्य पर अधिकार कर लिया जो कि वाराणसी तक विस्तृत था, उसके

उत्तराधिकारियो ने सम्भवत जौनपुर क्षेत्र को अपने अधीन कर लिया। चन्द्रदेव का लगभग 1100ई0 मे देहान्त हो गया, उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र मदनपाल (1110–1114ई0) बना। उसका पुत्र गोविन्दचन्द्र (1114–1154ई0) इस वश का सर्वाधिक प्रभावशाली राजा था। उसने पालो, गोडो, मालवा के राजा तथा अन्यो के विरूद्ध सफल अभियान एव विजय किया तथा काश्मीर के राजा एव चोलमडल जैसे सुदूर स्थित राजाओ के साथ कूटनीतिक सम्बन्ध कायम किया। ऐसा प्रतीत होता है कि उसने सफलतापूर्वक मुस्लिम आक्रमणिकारियो के अभियानो का प्रतिरोध किया जिन्होने उसके राज्य मे घुसने का अनेको बार प्रयत्न किया था। गोविन्दचन्द्र के पुत्र एव उत्तराधिकारी विजयचन्द्र (1154–1170ई0) भी मुसलमानो के विरूद्ध एक दीवाल के रूप मे खडा हो गया एव अपने राज्य को अक्षुण्ण रखा। उसके शासनकाल मे गहडवाले ने इस क्षेत्र पर पूरी तरह अपना अधिकार जमा लिया। ऐसा सुझाव दिया गया है कि इस शासक का एक महल वर्तमान जफराबाद स्थल पर था जो कि बाद मे राठौर राजाओ के अधीन आ गया। उसका नाम जफराबाद मे असनी किले के निर्माण से जुडा है जिसकी पहचान या तो सामपुर या सामतपुर से की जाती थी।[26]

1154ई0 मे विजय चन्द्र के कन्नौज की गद्‌दी पर आने तक जौनपुर के वर्तमान स्थल के पश्चिम मे एक बडा शहर बस गया था जिसमें खुटहन मार्ग पर स्थित खास हौज, अनेक मन्दिर एव महल सम्मिलित थे। तालाब का श्रेय कन्नौज के राजवश को जाता है एव यह कहा जाता है कि जामी मस्जिद के निर्माण हेतु उसे विखण्डित कर दिया गया। सम्भवत महल लाल दरवाजा तक विस्तृत था क्योकि एक इमारत के अवशेष गोमती के पास के टीले पर पाये गये है। पीर दमकी के मकबरे से सज्जित विजय मन्दिर नाम का एक बडा टीला गोमती नदी के किनारे पैमराजपुर गाव मे स्थित है जो कि 600 फिट (लगभग 183 मीटर) के दायरे मे है। इसके आसपास एव पैमराजपुर मे अनेको शिलाखड पडे है, कुछ मे नक्काशी की गयी है जब खास होज के आसपास के खेत टूटे हुए मलवे एव मिट्‌टी के बर्तनो से सथत रूप से सटे हुए है। जौनपुर एव जफराबाद मे परम्परा के अनुसार बिजयचन्द्र एव उसके पुत्र जयचन्द्र (1170–1194ई0) ने अनेको मन्दिर खडे किए थे। ऐसा लगता है कि विजय मन्दिर एव विजयताल विजयचन्द्र से सम्बन्धित थे, एव पडोस मे लाल दरवाजा मस्जिद के एक स्तम्भ पर विजयचन्द्र के एक अभिलेख, जिसकी तिथि वि0 सवत् 1229 (1172ई) है, की खोज हो चुकी है। ऐसी कल्पना की जाती है कि मुक्त–घाट के निकट चाचकपुर का मन्दिर जयचन्द्र का कार्य था जो कि कन्नौज के गहडवाल राजाओ मे अतिम था। वर्तमान मे किसी प्राचीन मदिर का चिन्ह नही मिलता है।

जिले के कुछ स्थानो से प्राप्त सामग्री इसके राजनीतिक एव सास्कृतिक महत्त्व को इगित करती है। वि0स0 1201 (19 अप्रैल, 1143ई0) का राजा गोविन्द चन्द्र देव का एक ताम्रपत्र अनुदान जो सितम्बर 1818 ई0 मे घिसवा, मछलीशहर से 11 2 किलोमीटर दूर, नामक गाव मे मिला था, कहता है कि इस शासक ने गगा मे स्नान किया था तथा पट्टल मे पिरोहा, गाव पडित वशधर–सरमन को अनुदान दिया था। प्राचीन मदिरो के स्तम्भो पर भी कभी–कभी अभिलेख खुदा मिलता है, इस तरह का एक अभिलेख भावीभूषण का है जिसकी तिथि चैत्र वदी 5 वि0स0 1125 (19 मार्च, 1169ई0) है। इस स्तम्भ का उपयोग बाद मे लाल दरवाजा मस्जिद के निर्माण मे हुआ। दो अपूर्ण पक्तियो मे विजयचन्द्र के शासनकाल का लेखा–जोखा है एव भट्टारक कविभूषण का उल्लेख है।

गहडवाल, जिनका राज्य दिल्ली के आसपास से पूर्व मे पटना तक एव हिमालय की तराई से यमुना के दक्षिणी किनारे तक विस्तृत था, जौनपुर जिले पर नियत्रण रखने वाले अतिम हिन्दू राजा था। 1206 मे दिल्ली सल्तनत की स्थापना के उपरान्त जौनपुर को भी इसमे सम्मिलित कर लिया गया तथा शर्की राज्य, जिसकी यह राजधानी रही, की स्थापना के समय तक जौनपुर की स्थिति अधीनस्थ बनी रही।

टिप्पणी और सन्दर्भ

(1) लाल, बी0बी0 और दीक्षित के0एन0 (1997), श्रृगवेरपुर ए साइट आफ प्रोटो हिस्टारिक पीरिएड, **इण्डियन प्री हिस्ट्री 1980** (सम्पा0) मिश्र, वी0डी0 एव पाल जे0एन0।

(2) शर्मा, जी0आर0 और अन्य (1980), हिस्ट्री ऐड आर्कियोलॉजी, इलाहाबाद, पेज 5–12

(3) यद्यपि डी0पी0 शर्मा को कुछ नियोलिथ प्रतापगढ जनपद के पट्टी तहसील से प्राप्त हुए है। परन्तु इन उपकरणो का अपने सन्दर्भ मे प्राप्त न होने के कारण प्रमाणिकता सदिग्ध है।

(4) पाण्डे, जे0एन0 (1985), सेटेलमेट पैटर्न ऐड लाइफ आफ मैसोलिथिक प्युपुल इन यू0पी0, डी0फिल0 उपाधि के लिए प्रस्तुत अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, पेज – 172

(5) दुबे, आर0डी0 (1988), जौनपुर का ऐतिहासिक एव पुरातात्त्विक व्यक्तित्त्व, पेज 30–40

(6) सिह, ए0के0 (1993), स्टडी आफ मैटेरियल कल्चर आफ द गगेटिक प्लेन इन न फर्स्ट मिलियन बी0सी0, पी0एच0डी0 उपाधि के लिए प्रस्तुत अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, बी0एच0यू0 वाराणसी।

(7) दत्त, एन0 और बाजपेयी के0डी0 (1956), डेवलपमेन्ट आफ बुद्धिज्म इन उत्तर प्रदेश, लखनऊ, पेज–6

(8) पाठक, वी0एन0 (1963), हिस्ट्री आफ कोशल अप टू द राइज ऑफ मौर्याज, वाराणसी, पेज– 44

(9) नेविल एच0आर0 (1908) जौनपुर ए गजेटियर, वाल्यूम 28, इलाहाबाद, पेज– 145

(10) कनिघम, ए0 (1880), आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट, वेल्यूम 11, कलकत्ता, पेज – 103

(11) वर्गेस, जे0 (सम्पा0) (1971), द सर्कीआर्किटेक्चर आफ जौनपुर, वाराणसी, पेज– 1

(12) हेवेट, जे0पी0 (1884), स्टैटिस्टिकल डिस्क्रिप्टिव ऐड हिस्टोरिकल एकाउट आफ द नार्थ वेस्टर्न प्राविसेज आफ इण्डिया, वाल्यूम 14, पार्ट 3– जौनपुर, इलाहाबाद, पेज–127

(13) पूर्वोक्त, पेज – 146

(14) वर्गेस, जे0 (1971), पूर्वोक्त, पेज – 1

(15) पूर्वोक्त

(16) हैविट, जे0पी0 (1884), पूर्वोक्त, पेज – 84

(17) पूर्वोक्त, पेज 36

(18) नेविल, एच0आर0 (1908), पेज – 273

(19) मजूमदार, आर0सी0 एण्ड पुरासलकर, ए0डी0 (1965), द हिस्ट्री ऐड कल्चर आफ इण्डियन पिपुल, वैल्यूम–1, वैदिक एज, बाम्बे, पेज – 284

(20) पूर्वोक्त, पेज – 285

(21) पारजिटर, एफ0ई0 (1962), एशिएट इण्डियन हिस्टोरिकल ट्रेडिसन, दिल्ली, पेज – 175

(22) पारिजटर, एफ0ई0, (1962), पूर्वोक्त पेज – 91

(23) शास्त्री, के0ए0एन0 (1957), ए कम्प्रेहिन्सिव हिस्ट्री आफ इण्डिया वेल्यूम 2, पेज 105–106

(24) त्रिपाठी, आर0एस0 (1959), हिस्ट्री आफ कन्नौज टू द मुस्लिम काक्वेस्ट, दिल्ली, पेज 38–52

(25) इलियट, एच0एम0 ऐंड डाउसन, जे0 द हिस्ट्री आफ इण्डिया ऐज टोल्ड इट्स ओन हिस्टोरियन, वाल्यूम 2, पेज – 59

(26) कनिघम, ए0 (1880), पूर्वोक्त, पेज – 104

तृतीय अध्याय

सई नदी एवं झीलों के किनारे स्थित पुरातात्त्विक स्थलों का विवेचन

- सई नदी एवं झीलों का भौगोलिक परिवेश
- उत्खनित स्थल
- सर्वेक्षित स्थल

सई नदी एवं झीलों के किनारे स्थित पुरातात्विक स्थलों का विवेचन

सई नदी का उद्‌गम वर्तमान उत्तर प्रदेश के जनपद हरदोई के उत्तरी सीमा से हुआ है। यह नदी लखनऊ उन्नाव जनपद से होते हुए प्रतापगढ के पश्चिम मे स्थित मुस्तफाबाद जो अठेहा के समीप स्थित है, प्रतापगढ जनपद मे प्रवेश करती है। 72 किलोमीटर की यात्रा प्रतापगढ जनपद मे तय करने के पश्चात् इसका प्रवेश जौनपुर जनपद के पश्चिमी सीमा पर स्थित पृथ्वीगज बाजार के पास होता है। जौनपुर जनपद मे मछलीशहर, जौनपुर (सदर) एव मडियाहूँ तहसील मे प्रवाहित होती हुई यह नदी (सई) सराय ख्वाजा नामक स्थान पर इस जिले की प्रमुख नदी गोमती से मिल जाती है। सई नदी ने प्रतापगढ जौनपुर के साथ ही रायबरेली जनपद के जनजीवन को सदियो से प्रभावित किया है। साहित्यिक एव पौराणिक साक्ष्यो मे इसे स्यन्दिका के नाम से जाना जाता है। महाजनपद काल मे यह जौनपुर जनपद मे कोशल और काशी महाजनपदो की विभाजक रेखा थी। प्रारम्भ से ही इस नदी के किनारे मानव बस्तियो के प्रमाण हमे प्राप्त होते है जिसका समय–समय पर सर्वेक्षण एव उनमे से प्रतापगढ जनपद स्थित अनेक स्थलो सरायनाहर राय, महदहा, दमदमा (वारी कलॉ) प्रमुख है, का विस्तृत उत्खनन भी हो चुका है। ये स्थल सई या उसकी

सहायक नदियो तथा अस्तित्त्व विहीन गोखुर झीलो के समीप स्थित है। सर्वेक्षित एवं उत्खनित स्थलो का संक्षिप्त विवेचन निम्नवत् है :–

उत्खनित स्थल[1]

सराय नाहर राय (अक्षास 25^0, 48′ उ0 देशान्तर 81^0, 50′ पू0) नामक मध्य पाषाणिक पुरास्थल प्रतापगढ के जनपद मुख्यालय से 15 किमी0 दक्षिण–पश्चिम दिशा मे उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ जिले मे सूखी हुई एक गोखुर झील के किनारे पर स्थित है। यद्यपि झील लगभग पूरित हो गयी है तथापि इसकी रूपरेखा स्पष्टत दृष्टिगोचर होती है। इस पुरास्थल की खोज सन् 1969ई0 मे उत्तर प्रदेश शासन के पुरातत्त्व विभाग के तत्कालीन निदेशक स्वर्गीय के0सी0 ओझा ने किया था। सन् 1970ई0 मे उत्तर प्रदेश के पुरातत्त्व विभाग ने भारतीय नृतत्त्व सर्वेक्षण के पी0सी0 दत्त के सहयोग से एक मानव ककाल का उत्खनन कराया था। तत्पश्चात् इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास विभाग ने उत्तर प्रदेश शासन के वित्तीय सहयोग ने एन् 1971–72 तथा 1972–73ई0 मे अपेक्षाकृत बडे पैमाने पर सराय नाहर राय का उत्खनन कराया। स्वर्गीय जी0आर0 शर्मा के निर्देशन मे आर0के0 वर्मा, वी0डी0 मिश्र आदिने उत्खनन कार्य का सचालन किया।

सराय नाहर राय का पुरास्थल लगभग 1800 वर्गमीटर के क्षेत्र मे फैला हुआ है। इस प्रवास–क्षेत्र मे लघु पाषाण उपकरण और जानवरो की हड्डियॉ बिखरी हुई थी। पानी के बहाव के फलस्वरूप ऊपरी सतह के कट जाने के कारण मानव कंकाल भी झॉकते हुए मिले हैं। सराय नाहर राय मे कुल 11 मानव–समाधियों तथा 8 गर्त्त–चूल्हों (Fire-Pits) का उत्खनन इलाहाबाद विश्वविद्यालय की ओर से किया गया। इनके अलावा पुरास्थल पर अन्वेषण के फलस्वरूप चार अन्य मानव समाधियो और तीन गर्त्त–चूल्हो के विषय मे जानकारी प्राप्त हुई जिनका उत्खनन नही किया गया है।

सराय नाहर राय की कब्रे (समाधियॉ) आवास–क्षेत्र के अन्दर स्थित थी। कब्रें छिछली तथा अण्डाकार थी। सिरहाने के रूप मे 3–4 सेमी0 मोटी मिट्टी की पर्त्त देकर मृतको को पश्चिम–पूर्व दिशा मे चित लिटाकर विस्तीर्ण रूप मे दफनाया गया था। प्राय सभी ककालो का एक हाथ शरीर के समानान्तर था और पुरूषो का दाहिना हाथ तथा स्त्रियो का बाया हाथ (जिन ककालो के विषय मे ऐसे साक्ष्य उपलब्ध थे) पेट पर रखा हुआ मिला था। उत्खनित 11 समाधियो में से 10 मे एक–एक मानव कंकाल मिले थे। एक समाधि ऐसी थी जिसमे चार मानव–कंकाल एक साथ दफनाये गये थे। ऐसा प्रतीत होता है एक पुरूष तथा एक स्त्री के

शव को कब्र मे रखने के बाद पुन पुरूष के ऊपर एक अन्य पुरूष तथा स्त्री के ऊपर दूसरी स्त्री का शव रखकर दफनाए गए थे। कब्रो को खोदते समय निकली मिट्टी तथा चूल्हो की मिट्टी एव राख आदि से इन्हें भरा गया था। अन्त्येष्टि सामग्री के रूप मे केवल लघु पाषाण उपकरण मिले थे। ककालो के साथ जो बडे–बडे ककड मिले थे, उन्हे प्रारम्भ भ्रमवश घोघा (Snaill) समझ लिया गया था। भारतीय नृतत्त्व सर्वेक्षण के पी0सी0 दत्त ने अपने निबन्धो में हस्त–निर्मित कुण्डलित मृद्भाण्ड (Coiled pottery) के रूप मे इनका उल्लेख किया है जो सरासर गलत है। वस्तुत मध्यगगाघाटी मे स्थित मध्य पाषाण काल के किसी भी उत्खनित पुरास्थल से मृद्भाण्ड के अवशेष अभी तक नही मिले हैं।

सराय नाहर राय से इस समय तक जो 15 ककाल मिल चुके है उनमे 11 ककालो के लिग (Sex) की पहिचान की जा चुकी है सात कंकाल पुरूषो के तथा 4 स्त्रियों के थे। चार ककालो के लिग की पहिचान करना सम्भव नही है। यहाँ से जो मानव ककाल मिले है वे ह्रष्ट–पुष्ट तथा सुगठित शरीर वाले मानव समुदाय के प्रतीत होते है। हाथ–पैर की हड्डियों के अस्थिकरण, कपाल (Skull) की सधिरेखाओ के विलयन तथा स्थायी दातो आदि के आधार पर कंकालो की आयु मृत्यु के समय 16 वर्ष से 34 वर्ष के बीच आंकी गयी है तथा औसत आयु 17 से 31 वर्ष

निर्धारित की गयी है। स्त्रियो की मृत्यु 15 से 35 वर्ष की आयु मे हुई। स्त्रियो की आयु का औसत 16 से 32 5 वर्ष के बीच आता है। सराय नाहर राय के पुरूष तथा स्त्रिया दोनो ही अपेक्षाकृत लम्बे कद के थे। पुरूषो की औसत लम्बाई 173 93 सेमी से 192 08 सेमी थी। स्त्रियों की लम्बाई का औसत 174 89 सेमी से 189 68 सेमी था।

सराय नाहर राय मे 8 गर्त्त चूल्हो का उत्खनन किया गया। ये गोलाकार, अण्डाकार तथा अनियमित आकार के हैं। गर्त्त–चूल्हो का मुंह चौडा तथा पेदी सॅकरी है जिनकी ऊपर की माप 1 49 मी0 से 72सेमी0 है तथा पेंदी 1 02 सेमी से 45 सेमी है। इनकी गहराई 25 सेमी0 से 10 सेमी0 के बीच में है। गर्त्त–चूल्हो से गाय, बैल, भैस, भेड, बकरी आदि की जली तथा अधजली हड्डियॉ मिली है। इनके अतिरक्ति कछुआ की खोपडी के टुकडे तथा हाथी की एक पसली भी प्राप्त हुई है। चूल्लो का उपयोग सम्भवत पशुओ के मास को भूनने के लिए किया जाता था। इन चूल्हों के केवल राख मिली है, कोयले के टुकडे नही मिले है। यह अनुमान किया गया है कि घास–फूस तथा पत्तियो एव टहनियो आदि का ईधन के रूप मे उपयोग किया जाता था। सराय नाहर राय के आवास क्षेत्र में 5X4 मीटर आकार का एक फर्श मिला है जिसके चारो कोनो पर एक–एक स्तम्भ गर्त्त मिले है। जी0आर0 शर्मा ने इसको

सामुदायिक चूल्हा (Community-hearth) कहा है लेकिन इसके एक झोपडी का फर्श होने के अधिक सभावना है क्योकि इसके फर्श से लघु पाषाण उपकरण, पशुओ की हड्डिया तथा कई छोटे–छोटे चूल्हे मिले है।

सराय नाहर राय से लघु पाषाण उपकरण अपेक्षाकृत कम सख्या मे मिले है। प्राप्त लघु पाषाण उपकरणो मे समानान्तर एव कुण्ठित पार्श्व वाले ब्लेड, बेधक, चान्द्रिक, खुरचनी, समबाहु तथा विषमबाहु त्रिभुज आदि ज्यामितीय उपकरण है जो चर्ट, चाल्सेडनी, अगेट, जैस्पर आदि पर बने हुए हैं। पशुओ की हड्डियो तथा श्रृंगों पर बने हुए उपकरण इस पुरास्थल से अत्यल्प सख्या मे प्राप्त हुए हैं।

सराय नाहर राय पुरातात्त्विक दृष्टि से मध्य पाषाण काल के परवर्ती चरण से सम्बन्धि किया जा सकता है क्योकि यहॉ से ज्यामितीय उपकरण मिले हैं। सराय नाहर राय से दो रेडियों कार्बन तिथियॉ प्रतिवेदित है। प्रथम तिथि टी0एफ0–1104, 10345±110 (8,395±110 ई0पू0) एक बिना जली हुई मानव अस्थि पर आधारित। दूसरी तिथि टी0एफ0– 1359 एवं 1359, 2940±125 (990±125ई0पू0) है जो जली हुई हड्डियो के नमूनो के विश्लेषण से निकाली गयी है। इन दोनो मे परस्पर सगति नही है इसलिए दोनो ही तिथियॉ अविश्वसनीय प्रतीत होती है।[2]

महदहा[3] (अक्षाश 25°, 59',2" उ0 देशान्तर 82°30" पू0) नामक मध्य पाषाणिक पुरास्थल प्रतापगढ कस्बे से पूर्वोत्तर दिशा मे 31 किमी0 और पट्टी कस्बे से 5 किमी0 उत्तर, प्रतापगढ जिले की पट्टी तहसील के महदहा गाव से पूर्व दिशा लगभग 1 किमी0 की दूरी पर स्थित है। सन् 1978ई0 मे शारदा सहायक नहर परियोजना की जौनपुर नहर की शाखा को चौडी करने की प्रक्रिया मे इस पुरास्थल की जानकारी इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, संस्कृति एव पुरातत्त्व विभाग को अपने भूतपूर्व छात्र और पट्टी तहसील के तत्कालीन परगनाधिकारी लाल बिहारी पाण्डेय के सौजन्य से प्राप्त हुई। यहॉ पर यह उल्लेखनीय है कि सन् 1953ई0 में जब जौनपुर नहर की शाखा की खुदाई हुई उस समय इस पुरास्थल का काफी बडा भाग नष्ट हो गया। सूचना मिलने पर सन् 1978 एवं 1979ई0 मे इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्त्व विभाग ने 'बचाव उत्खनन' (Salvage Excavation) के रूप मे यहॉ पर कार्य किया जिसका संचालन बी0डी0 मिश्र एव जे0एन0पाल ने किया।

लगभग 8,000 वर्गमीटर के क्षेत्र मे फैला हुआ महदहा का पुरास्थल एक 'गोखुर झील' के पश्चिमी सीमान्त पर स्थित है। पुरानी नहर के पश्चिम मे 'आवास–क्षेत्र' स्थित है जिसमें मानव–समाधियॉ मिली है। इस नहर की पूर्व दिशा मे वन्य–पशुओ

की कटी हुई एव खण्डित हड्डियॉ, सीग, श्रृग तथा दात इत्यादि मिले हैं जिसकी वजह से इसको 'वध–स्थल' अथवा बूचडखाना (Butchering Area) कहा गया है। इस सन्दर्भ मे यह उल्लेखनीय है कि जगली पशुओ के शिकार करने वाले आवास–क्षेत्र के समीप पशुओ को प्राय नही काटते है। अधिक सभावना इस बात की है कि यह उच्छिष्ट हड्डियो की क्षेपण–भूमि (Dumping ground) है।[4]

महदहा के आवास–क्षेत्र के उत्खनन के फलस्वरूप 60 सेमी0 मोटा सास्कृतिक जमाव प्रकाश मे आया है जिसे विभिन्न स्तरो की सरचना तथा रग आदि के आधार पर चार उपकालो मे विभाजित किया गया है। महदहा के आवास–क्षेत्र मे कुल मिलाकर 28 समाधियो और 35 गर्त्त–चूल्हो का उत्खान किया गया है। महदहा के आवास–क्षेत्र से पूर्व दिशा मे स्थित 'गोखुर झील' का भी उत्खनन किया गया है जिसके 10 स्तरो मे से नवे एव आठवे स्तर मध्य पाषाण काल से सम्बन्धित है। महदहा के मध्य पाषाणिक मानव जानवरो के मास को खाने के बाद उच्छिष्ट हड्डियो आदि को झील में फेक दिया करते थे। जल–मग्न रहने के कारण काफी हड्डियॉ सुरक्षित रूप से बच गयी है जो उत्खनन के फलस्वरूप प्रकाश मे आई। झील के नवे–आठवे स्तरो से एकत्र किये गए नमूने पुरापराग से युक्त है जिनका प्राथमिक विश्लेषण इलाहाबाद

विश्वविद्यालय के वनस्पति विज्ञान विभग के डी0डी0 पन्त ने किया है। इस विश्लेषण से घास के पुष्परागो के अस्तित्त्व का पता चला है।[5]

सन् 1953ई0 मे नहर की खुदाई से निकली हुई मिट्‌टी को नहर की पटरी मे डाल दिया गया था। सन् 1979ई0 मे नहर की पटरी मे पडे मलवे मे प्राप्त हाथ–पैर की मानव–अस्थियो का नये सिरे से पुरातात्त्विक दृष्टि से अध्ययन करने पर 17 अथवा 21 अन्य मानव–ककालों के अस्तित्त्व का सकेत मिला है। इससे यह स्पष्ट है कि महदहा के उत्खनन से जितने पुरावशेष प्राप्त हुये है लगभग उससे अधिक ही पुरानिधियॉ नष्ट हो गयी होगी।

सराय नाहर राय की भाति महदहा मे भी समाधिया प्राय छिछली एव अण्डाकार बनाई जाती थी। पश्चिम दिशा की ओर सिर करके मृतक को कब्र मे रखने की प्रथा थी। यद्यपि इसके अपवाद भी मिले है जिनमे दिक्–स्थापन पूर्व–पश्चिम मिला है। महदहा मे विस्तीर्ण शवाधान ही अधिक सख्या मे मिले हैं। महदहा की 28 समाधियों मे से 26 मे एक–एक मानव कंकाल मिले है। यहा से युग्मित–समाधियो के दो उदाहरण ज्ञात है जिनमे से प्रत्येक समाधि मे एक स्त्री तथा एक पुरूष साथ–साथ दफनाये हुए मिले है। सराय नाहर राय के ककालो की तरह महदहा मे हाथो को रखने की कोई निश्चित परम्परा नही थी। सामान्यत

हाथ ककाल के धड के समानान्तर तथा दूसरा पेट पर अथवा जाघ पर रखा हुआ मिला है। एक नर–ककाल के दोनो पैर ऊपर की तरफ मुडे हुए थे तथा बाये हाथ को कमर के नीचे तथा दाहिने हाथ को दोनों जाघो की बीच मे रखा गया था।

महदहा के उत्खनन के फलस्वरूप जिन 28 समाधियो की जानकारी प्राप्त हुई उनको चार उपकालो मे विभाजित किया गया है। महदहा के प्रथम उपकाल से तीन मानव समाधियॉ मिली है जिनमें चार ककाल प्राप्त हुए हैं क्योकि प्रथम समाधि एक युग्म–समाधि है इस युग्मित समाधि से दो ककाल मिले है जिसमे पुरूष दाहिनी ओर तथा स्त्री को बायी ओर लिटाकर दफनाया गया था। सभी ककाल पश्चिम की ओर सिर करके दफनाए गए थे। अन्य दो समाधियों से एक–एक ककाल मिले हैं। इस उपकाल के चार मे से दो पुरूष ककाल और दो स्त्री कंकाल थे। सभी ककाल वयस्क लोगो के थे।

दूसरे उपकाल से दो समाधिया मिली है। जिनमे एक एक समाधि मे अकेला पुरूष ककाल तथा दूसरी युग्म–समाधि में एक स्त्री तथा एक पुरूष के ककाल मिले है। युग्म–समाधि मे पुरूष के ककाल के ठीक ऊपर स्त्री का ककाल दफनाया हुआ मिला है। सभी कंकाल पश्चिम–पूर्व की ओर लिटाकर दफनाएं गए थे। द्वितीय उपकाल की दोनो समाधियो मे अन्त्येष्टि सामग्री रखी हुई

मिली है। एकाकी पुरूष ककाल जानवर की सीगो से बनी हुई पाच मुद्रिकाओ की एक माला गले मे पहने हुए था। युग्म–समाधि का पुरूष सींगो की बनी हुई 12 मुद्रिकाओ की एक माला गले मे पहने हुए था तथा बाये कान मे श्रृग का बना हुआ एक गोल कुण्डल धारण किये हुये था।

महदहा की तीसरे उपकाल से 9 समाधिया मिली जिनमे से प्रत्येक मे एक–एक मानव–ककाल मिला है। नौ मे से छ ककालो के लिग की पहिचान करना सभव है चार स्त्रिया और दो पुरूष। तीन कंकालो के लिग की पहिचान नही की जा सकी है। सात ककाल पश्चिम–पूर्व दिशा मे दफनाए हुए मिले है जिनके सिर पश्चिम तथा दूसरा पूर्व–पूर्व–दक्षिण से पश्चिम–पश्चिम–उत्तर की ओर से सिर करके दफनाया गया था। दो समाधियो से अन्त्येष्टि सामग्री मिली है। एक महिला ककाल के साथ सीग की बनी हुई दो गुरियों तथा सीग का एक बाण मिला है तथा दूसरी महिला के साथ कछुआ की खोपडी का एक टुकडा रखा हुआ मिला है।

महदहा के चौथे उपकाल से सबसे अधिक 14 समाधियॉ मिली है। जिनमे से प्रत्येक मे एक–एक मानव कंकाल दफनाया हुआ मिला है। एक मुडे हुए कंकाल को छोडकर शेष सभी 13 विस्तीर्ण शवाधान है। चौदह ककालो मे से 12 लिग की पहिचान नही की जा सकी है। जिनमे आठ महिलाये तथा चार पुरूष है, दो

ककालो की पहचान नही की जा सकी है। चौदह मे से ग्याहर ककाल वयस्क लोगो के थे, एक वयोवृद्ध व्यक्ति का तथा दो बच्चो के ककाल थे। चौदह में से सात का सिर पश्चिम की ओर तथा पाच का सिर पूर्व दिशा की ओर करके दफनाया गया था। दो ककालो का दिक्–स्थापन किसी सीधी दिशा मे नही था बल्कि थोडा तिरछा था। दो महिलाओ तथा एक पुरूष के साथ अन्त्येष्टि–सामग्री रखी हुई मिली है।

महदहा के लगभग सभी ककाल नहर के चौडा करने के फलस्वरूप कट गए थे इसलिए उनकी वास्तविक लम्बाई की नाप करना सम्भव नही है तथापि अनुमान है कि स्त्री–पुरूष लम्बे कद के हृष्ट–पुष्ट थे। अधिकाश लोग स्वस्थ थे।

महदहा के उत्खनन से 35 गर्त–चूल्हे मिले हैं। कतिपय गर्त–चूल्हो के भीतरी भाग को लीप–पोत कर चिकना बनाया गया था। गर्त–चूल्हो से राख, जली हुयी मिट्टी तथा पशुओ की जली हुई हड्डिया मिली है। महदहा के एक गर्त–चूल्हे से भैसे का सीग युक्त पूरा सिर मिला है। मास को भून कर खाने के विषय मे ये अत्यन्त महत्वपूर्ण साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं।

महदहा के गर्त–चूल्हो तथा गोखुर झील से वन्य पशुओ की हड्डिया मिली है। गाय–बैल, भैस, साभर, चीतल, बारहसिंघा, जगली सुअर, भेड–बकरी, गैडा, हाथी आदि पशुओ का शिकार ये

लोग करते थे। कछुआ, मछली आदि जलचरो का भी शिकार किया जाता था।

महदहा से लघु पाषाण उपकरण अपेक्षाकृत कम सख्या मे मिले हैं। प्रमुख उपकरणो मे से ब्लेड, खुरचनी बेधक, चान्द्रिक, त्रिभुज तथा समलम्ब चतुर्भुज उल्लेखनीय है। महदहा से सीग तथा श्रृग के बने उपकरण और आभूषण सराय नाहर राय की तुलना मे अधिक सख्या मे मिले है सींग तथा श्रृग के उपकरणो मे बाणग्र, बेधक, खुरचनी, आरी, रूखानी, चाकू आदि है। श्रृग के आभूषणो में कुण्डल तथा मुद्रिकाए उल्लेखनीय है। महदहा से बलुअर पत्थर पर बने हुए टूटे सिल एव लोढे, गोफन पाषाण तथा हथौडे आदि भी मिले है। सिल एव लोढे की प्राप्ति से यह इगित होता है कि सभवतः जंगली घास के दानों को पीसकर भोज्य–सामग्री के रूप मे उपयोग किया जाने लगा था। पुरापुष्पपराग के विश्लेषण से हरे–भरे घास के मैदान के विषय मे सकेत मिलता है।

महदहा का तिथि–क्रम पुरातात्त्विक साक्ष्यो के आधार पर ज्यामितीय चरण मे रखा जा सकता है। जली हुई हड्डियो के नमूनो के विश्लेषण के आधार पर बरीबल साहनी इस्टीट्यूट, लखनऊ ने तीन रेडियो कार्बन तिथिया निकाली है . ये तिथिया असंशोधित तथा 'अद्य–पूर्व' (Before Present) में हैं। ये तिथियां (1) 4010$\pm$120, (2) 2880$\pm$250 तथा (3) 3840$\pm$130 है।[6]

दमदमा[7] (अक्षाश 26^0, 10′ उ0, देशान्तर 82^0 10′ 36″ पू0) का मध्यगगाघाटी के मध्य पाषाणकाल के उत्खनित पुरास्थलो मे सबसे महत्वपूर्ण स्थान है। क्योकि यह एक सुरक्षित पुरास्थल है और इसका उत्खनन अपेक्षाकृत विस्तार से किया गया है। महदहा से लगभग 5 किमी0 उत्तर–पश्चिम मे प्रतापगढ जिले की पट्टी तहसील के बारीकला नामक गाव गॉव के पास दमदमा का मध्य पाषाणिक पुरास्थल स्थित है। सई नदी की एक सहायक सरिता पीली नदी मे मिलने वाले तम्बूरा नाले की दो धाराओ के सगम पर स्थित दमदमा का पुरास्थल, मध्य पाषाणिक सामग्री को अपने आचल में समेटे हुए, लगभग 8,750 वर्ग मीटर के क्षेत्र मे फैला हुआ है। इस पुरास्थल की खोज सन् 1978 ई0 मे हुई थी। पूर्णरूप से सुरक्षित पुरास्थल होने के कारण इसको एक सुनियोजित योजना के अनुसार उत्खनन के लिए चुना गया जिससे मध्यगगाघाटी के मध्य पाषाण काल के लोगो के जीवन के विभिन्न पक्षो के विषय मे सम्यक् जानकारी प्राप्त की जा सके। सन् 1982–83 से 1986–87 तक दमदमा के उत्खनन का सचालन इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्त्व विभाग के आर0के0 वर्मा, वी0डी0 मिश्र, जे0एन0 पाण्डेय तथा जे0एन0पाल के द्वारा सयुक्त रूप से किया गया। पाच वर्ष तक लगातार हुए उत्खनन के फलस्वरूप मध्य गगाघाटी के मध्य पाषाण काल की सस्कृति पर नवीन प्रकाश पडा है।

दमदमा को उत्खनन के लिए पूर्वी, मध्यवर्ती एव पश्चिमी इन तीनो क्षेत्र मे विभाजित किया गया है। इन तीनो क्षेत्रो से मध्य पाषाणिक पुरावशेष समान रूप से मिले हैं किन्तु मानव शवाधान अभी तक पूर्वी क्षेत्र से नही मिले है। मानव शवाधान मध्यवर्ती तथा पश्चिमी क्षेत्रो से ही प्रकाश मे आये है। उत्खनन से उपलब्ध प्रमाणों से दमदमा का 1 50 मीटर मोटा सास्कृतिक जमाव प्रकाश मे आया है। जिसे 10 स्तरो मे विभाजित किया गया है। सबसे ऊपरी स्तर को छोडकर शेष सभी 9 स्तर मध्य पाषाण काल से सम्बन्धित है। ऊपरी स्तर मे विविध प्रकार के पुरावशेष आपस मे मिले हुए प्राप्त है। मध्य पाषाण काल के सम्पूर्ण सास्कृतिक जमाव को नव उपकालो मे विभाजित किया गया है। प्रत्येक उपकाल से मध्य पाषाण काल के लोगो के रहने के उल्लेखनीय साक्ष्य प्राप्त हुए है। इस सन्दर्भ मे मिट्टी के कई पर्त वाले लेप से युक्त तथा बिना लेप वाले गर्त–चूल्हो, जली हुई मिट्टी के प्लास्टर युक्त फर्श, वन्य–पशुओ की हड्डियो, लघु पाषाण उपकरणों, सीगो के बने हुए उपकरणो एव आभूषणो और मानव शवाधानो आदि को विशेष रूप से उल्लेख किया जा सकता है। स्तरीकरण और पुरावशेषों की दृष्टि से सभी 9 स्तर अविच्छिन्नता द्योतित करते है। इस पुरास्थल पर सर्वप्रथम बसने के लिए आने वाले मध्य पाषाण काल के लोगों ने उस पीली मिट्टी (जलोढ मिट्टी) के ऊपर अपना आवास बनाया। उन लोगो ने उस पीली मिट्टी को ही खोद कर मृतको के लिए

शवाधान बनाये तथा पशुओ का मास भूनने के लिए गर्त–चूल्हो का निर्माण किया।

दमदमा के मानव शवाधान

सांस्कृतिक उपकाल	**शवाधान संख्या**
प्रथम उपकाल	1 शवाधान
द्वितीय उपकाल	1 शवाधान
तृतीय उपकाल	3 शवाधान
चतुर्थ उपकाल	1 शवाधान
पचम उपकाल	2 शवाधान
षष्ठ उपकाल	2 शवाधान
सप्तम उपकाल	3 शवाधान
अष्टम उपकाल	13 शवाधान
नवम् उपकाल	15 शवाधान
योग	**41 शवाधान**

लगातार पांच वर्षो तक दमदमा मे किये ये उत्खनन के फलस्वरूप पश्चिमी तथा मध्यवर्ती क्षेत्रो से कुल मिलाकर 41 मानव शवाधन ज्ञात हुए है। जो मध्य पाषाणिक शवाधान प्रणाली के विषय में उल्लेखनीय जानकारी प्रदान करते है। पूर्वी क्षेत्र से अभी तक कोई मानव शवाधान नही मिला है। स्तरीकरण के प्रमाण के आधार पर इन शवाधानो को 9 उपकालो मे विभाजित किया गया है।

इन शवाधानो मे से 5 शवाधान (शवाधान सख्या VI, XVI, XX, XXX एव XXXVI) युग्म–शवाधान है और एक शवाधान सख्या (सख्या XVIII) मे 3 मानव–ककाल एक साथ दफनाए हुए मिले है। शेष शवाधानो मे एक–एक ककाल मिले है। अधिकाश ककाल पश्चिम–पूर्व की दिशा मे, सिर को पश्चिम दिशा मे रखकर दफनाए हुए मिले है। लेकिन कतिपय ककालो के सिर पूर्व अथवा उत्तर या दक्षिण दिशा मे रखे हुए मिले है। अधिकाश मानव–ककालो को पीठ के बल सागोपाग लिटा कर दफनाया गया था। लेकिन दो मानव ककालो को पेट के बल और दो को पैर मोड कर दफनाया गया था। सीगो से बने हुए बाण तथा आभूषण और पशुओ की हड्डिया अन्त्येष्टि सामग्री के रूप मे रखी गयी थी। अधिकाश ककाल वयस्क स्त्री–पुरुषो के थे। जिनकी मृत्यु आयु का औसत 18–35 वर्ष के बीच आंका जा सकता है। बच्चो के ककाल यहॉ नही मिले हैं।[8]

दमदमा के उत्खनन से बहुसख्यक लघु पाषाण उपकरण मिले है। जिनमे से ब्लेड, फलक, क्रोड, माइक्रो–ब्यूरिन के अतिरिक्त विभिन्न कार्यो मे उपयोग के प्रमाण से युक्त ब्लेड, पुनर्गढित ब्लेड, समानान्तर एव कुण्ठित पार्श्व वाले ब्लेड, समद्विबाहु तथा विषमबाहु त्रिभुज, समलम्ब चतुर्भुज, विभिन प्रकार की खुरचनिया, छिद्रक, चान्द्रिक आदि सम्मिलित है। इन उपकरणो का

निर्माण चाल्सेडनी, चर्ट, क्वार्ट्ज, अगेठ, कार्नेलियन आदि माणिक्य कोटि के प्रस्तरो पर किया गया है। पाषाण उपकरणो के अतिरिक्त श्रृग के उपकरण तथा आभूषण भी मिले है। इनमे बाणग्र तथा मुद्रिकाए प्रमुख है। बलुअर पत्थर के सिल के टूटे हुए टुकडे, लोढे, हथौडे, निहाई आदि प्राप्त हुए है।[9]

दमदमा के उत्खनन से प्राय सभी स्तरो से वन्य पशुओ की हड्डिया मिली है। पशुओ की हड्डियो के प्रारम्भिक विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है। कि ये गाय–बैल, भैस, गैंडा, हाथी, भेड–बकरी, चीतल, सांभर, बारहसिघा, सुअर आदि जगली पशुओ की हड्डिया है। इस सन्दर्भ मे यह उल्लेखनीय है। कि लगभग 90% पशु–अस्थियॉ जली हुई अथवा अधजली है जो यह द्योतित करती हैं कि मध्य पाषाण काल के लोग पशुओ का मास भून कर खाते थे। पशुओ के अतिरिक्त अनेक पक्षियों तथा मछली, कछुआ आदि की हड्डिया भी काफी सख्या मे मिली है। वनस्पतियों के अवशेष (बेर की अधजली गुठलिया) भी यहा से प्राप्त हुए है जो उनकी भोज्य–सामग्री के विषय मे संकेत प्रदान करते है।

इस प्रकार दमदमा के उत्खनन के फलस्वरूप मध्य गगाघाटी की मध्य पाषाणिक सस्कृति पर सर्वथा नया प्रकाश पडा है। विविध प्रकार के मानव–शवाधानो, लघु पाषाण उपकरणो,

LOWER GANGA PLAIN
DRAINAGE
(निम्न गंगा घाटी नदी प्रणाली)
N
Kanki
Mahananda R.
Tista
Torsa R.
Raica
Mahananda
Atrai
RIVER
GANGA
Bhagirathi
Kopai
DAMODAR
HOOGHLY
Kalighai nadi
Subarnarekha R.
100
0
100
KM
RIVER

मानचित्र नं.4
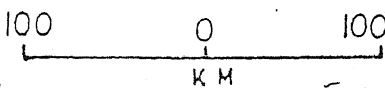
पशुओ के सीगो के बने हुए उपकरणो एव आभूषणो, मिट्टी के प्लास्टर से युक्त आवास के फर्श, गर्त–चूल्हो, वन्य–पशुओ की अस्थियो तथा वनस्पतियो के अवशेषो आदि के साक्ष्यो की दृष्टि से दमदमा का उत्खनन अत्यधिक महत्त्वपूर्ण कहा जा सकता है।[10]

दमदमा से पुरापुष्पराग तथा वानस्पतिक खाद्य–पदार्थो के विषय मे जानकारी प्राप्त करने के लिए नमूने इकट्ठा करके विश्लेषण के लिए विशेषज्ञो के पास भेजे गये है। उत्खनन से उपलब्ध पशुओ की अधजली अस्थिया, जली हुई मिट्टी के पिण्ड के कतिपय नमूने निरपेक्ष तिथि निर्धारण के लिए भौतिक शोध प्रयोगशाला, अहमदाबाद भेजे गये हैं पुरातात्त्विक साक्ष्यो के आधार पर यहॉ के मध्य पाषाणिक पुरावशेषो का समय लगभग 10,000 ई0पू0 से 4,000ई0पू0 के बीच में फिलहाल रखा जा सकता है।[11]

मध्यगंगा घाटी में मध्यपाषाणिक मानव की जीविका का प्रारूपः

गगाघाटी के मध्यपाषाणिक मानव के खाद्य–सामग्रियो और जीवन यापन के ससाधनो के बारे मे कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष ककालो के रासायनिक परीक्षणो से निकाले गये है (वैलियानाटोस 1999)।

मध्य गगा घाटी मे स्थित मध्यपाषाण कालीन उत्खनित स्थलो– सराय नाहर राय, महदहा तथा दमदमा मे बडी सख्या मे

जानवरो की हड्डियो के अवशेष मिलते है। सराय नाहर राय मे ये हड्डिया चूल्हो मे एव फर्श पर मिली है जबकि महदहा मे वे चूल्हो के साथ साथ आवासीय एव जलीय क्षेत्रो से भी मिली है। अधिकाश हड्डियॉ जलीय क्षेत्रो मे मिली है (दूबे 1997 रू 147 150)। खोज के दौरान सम्पूर्ण दमदमा स्थल पर जानवरो की हड्डियॉ मिलती है किन्तु उनका बाहुल्य खुदाई के दौरान पूर्वी क्षेत्र मे ही दिखाई पडता है। यद्यपि सराय नाहर राय से हाथी की पसलिया ओर अन्य हड्डिया मिली है तथापि मध्यपाषाणकाल के लोगो द्वारा शिकार किये गये जानवर मुख्यतया गोजातीय (बोविड) एव छोटे शाकाहारी जन्तु थे। जलीय प्रजातियो का प्रतिनिधित्व कछुआ और मछली द्वारा हुआ है। इन सभी जानवरो की हड्डियॉ खण्डित एव जली हुई है।

महदहा से प्राप्त जानवर है– कई प्रजातियो के हिरण, सुअर एव मासाहारी जन्तु, इसके अतिरिक्त कछुआ, मछली एव पक्षियो की हड्डियॉ भी पायी गयी है (थामस और अन्य 1994)। महदहा में पाये गये एक जानवर का चर्वणक दॉत एव एक ग्रीवा कशेरूका की पहचान अनजाने ही दरियायी घोडे (आलूर 1980) से कर ली गयी है। ये जन्तु अवशेष वास्तव मे गैंडा प्रजाति से सम्बन्धित है (थामस और अन्य 1994)। दमदमा के जन्तु अवशेषो मे हिरण, कुछआ, गाय एव पक्षी सम्मिलित है। डॉ0 आलूर ने जिन हड्डियो

के आधार भेड–बकरी की पहचान की थी (आलूर 1980), वे वस्तुत हिरण और अन्य मृगो की है (थामस और अन्य 1994)।

इन तीनो स्थलो सराय नाहरराय, महदहा एव दमदमा के जन्तु अवशेषो मे हिरण, सुअर एव गाय सामान्य है। हाथी एव गैडा के अवशेष विरल है। महदहा मे मासाहारी जानवरो के कुछ अवशेष भी पाये गये हैं। कुछ अस्थियो के बारे मे सकेत है कि ये दरियाई घोडे के हो सकते हे। जन्तु ससाधनो की उपलब्धि के प्रारूप मे परिवर्तन के निर्धारण हेतु जानवरो की हड्डियो की मात्रा के आंकडे अभी उपलब्ध नही है।

सराय नाहर राय, महदहा एव दमदमा के मध्य पाषाण कालीन लोगो द्वारा आखेट किये गये जानवर मुख्यत हिरण प्रजाति (सर्बिडस) एव गवल प्रजाति (वोविडस) के है, जो व्यापक स्तर पर आखेट का सकेत देते है। बडी सख्या मे हिरण प्रजाति के पशु, जगल एव झाडियों के रूप मे जगलो के अस्तित्व का सकेत देते है, जबकि गवल प्रजाति के पशु, भैसे एव गैंडो का अच्छा निरूपण अपेक्षाकृत खुले चारागाहो के महत्वपूर्ण भू–भाग का सकेत देते है। विद्यमान मत जिसके अनुसार गैडो के लिए जलीय एव घना जगल आवश्यक है, के विपरीत, गैडे चारागाही खेत्रो मे रह सकते है। हाथी, भैस और गैडे की उपस्थिति के आधार पर दलदली भू–भाग का भी अनुमान किया जा सकता है। जलीय एव

अपेक्षाकृत शात जल का पर्यावरण कछुये एव मछली द्वारा प्रमाणित होता है। प्रतापगढ लिये की धनुषाकार झीलो का वनस्पति विज्ञान सम्बन्धी अध्ययन इस क्षेत्र मे चारागाही वनस्पति को इगित करता है। हिरण को प्रतिदिन 25 45 किलोग्राम हरे चारे की आवश्यकता होती है। गाय—बैल को 55 75 किलोग्राम हरे चारे की प्रतिदिन आवश्यकता पडती है। जितने अधिक शाकाहारी पशु होगे उतने ही कम प्राकृतिक चारागाह होगे। तदनुसार मानव अथवा गोजातीय जनसख्या वृद्धि ने एक दूसरे के खाद्य सीमाओ को प्रभावित किया होगा। जे0एन0 पाण्डेय का मत है कि वर्ष भर उपलब्ध खाद्यान्न ने मध्य पाषाण कालीन लोगो को इस क्षेत्र मे अर्द्ध—स्थाई आधार पर बसने को प्रेरित किया, इसके परिणामस्वरूप मानव जनसख्या मे वृद्धि हुई एव ससाधनो पर दबाव बढा (पाण्डेय 1985 रू0 163 170)।

पुरातत्ववेत्ता खाद्य उत्पादक अर्थ व्यवस्थाओ के पर्यावरण एव भूमि पर प्रभाव से परिचित है, किन्तु पूर्व—कृषि अवस्था के समय—परिवर्तन की सभावना की व्याख्या करना आवश्यक है। यह मान लिया जाता है कि मध्य पाषाण कालीन लोगो ने अपनी आदिम सस्कृति के साथ पारिस्थितिकी पर अल्प प्रभाव डाला होगा। हाल मे ब्रिटेन मे कुछ सुझाव दिये गये है कि मध्य पाषाणकालीन लोग जगलो को जलाने के दौरान जगलो को

परिष्कृत कर रहे थे, वे मानव एव जानवरो के उपयोग हेतु भी जगलो का विकास कर रहे थे। सराय नाहर राय (शर्मा 1973 रू0 134 141), महदहा (शर्मा और अन्य 1980) एव दमदमा (वर्मा और अन्य 1985) मे बडी सख्या मे गर्तचूल्हो के मिलने से भी व्यापक पैमाने पर आग के उपयोग का प्रमाण मिलता है। मध्य गगा घाटी के मध्यपाषाण कालीन लोग जगलो को जलाते थे अथवा नही, इसका कोई सीधा प्रमाण नही है। जगलो को ग्रीष्म ऋतु मे ही जलाया जाता होगा जब पौधो मे रस की वृद्धि नही होती होगी। आग प्राय. बडे एवं प्रतिरोधी वृक्षो को जलाने मे ही प्रयुक्त होती होगी। जगलों के कृत्रिम सफाई का भी शिकार पर सीधा प्रभाव पडा होगा।

तीनो मध्य पाषाण कालीन उत्खनित स्थलो सराय नाहर राय, महदहा एव दमदमा से प्राप्त जानवरो की हड्डियॉ सामान्यतया जगली प्रजातियो से सबधित है। इसके अलावा जानवरो की हड्डियो गुजरात मे लघनाज (सकालिया 1965), राजस्थान मे बागोर (मिश्र 1973) तथा मध्य प्रदेश मे आदमगढ (जोशी 1978) के मध्य पाषण कालीन स्थलो से प्राप्त हुई हैं। बागोर एवं आदमगढ मे जगली एव पालतू दोनो प्रकार के जानवर पाये गये है। बागोर मे जगली जानवरो का प्रतिनिधित्व काला मृग, चिकारा, चीतल, सॉभर, खरगोश एव लोमडी करते हैं (मिश्र 1973) एव आदमगढ मे हिरण,

सॉभर, खरगोश, साही एव घोडा करते है (जोशी 1978)। जगली एव पालतू जानवरो की उपस्थिति से सकेत मिलता है कि मध्य पाषाण कालीन तथा खाद्य इकट्ठा करने वाले लोगो की अर्थव्यवस्था पशुचारिता के द्वारा अभिवृद्धि को प्राप्त हुई। बागोर एव आदमगढ के मध्यपाषाण कालीन स्थलो से प्राप्त जानवरो की हड्डियो की सावधानी पूर्वक जॉच आवश्यक है। जब हम पश्चिम एशिया के अधिकाश भागो मे पशुपालन का इतिहास देखते है, तो हम पुरातात्विक दृष्टि से पाते हैं कि एक समय अधिकाश स्थलो पर भेड, बकरी जतु सम्बन्धी प्रमुख घटक बन गये। कुछ मामलो मे परिवर्तन धीमा रहा होगा। अन्य मामलो मे प्रजातियो का तीव्र परिवर्तन हुआ होगा। कृषि की तुलना मे आखेट के व्यावहारिक निहितार्थो से सम्बन्धित हिग्स एव जारमन (1972), जारमन एव सैक्सन (1972) द्वारा निर्मित बिन्दु उचित है। एव आगे भी उनकी गभीर जॉच पडताल की आवश्यकता है। आखेट चयन बहुत कुछ ससाधनो की पुरातन अर्थव्यवस्था की तरह था जिसने एक सराहनीय स्थलीय जीवन शैली को ऋतु प्रवास के प्रारूप के विकास को बहुत पहले ही सभव बनाया। जहॉ पुरातन कृषि की अपेक्षा प्राकृतिक ससाधन अधिक उत्पादक थे, वहॉ कृषि को बिल्कुल नही अपनाया गया तथा विकास की रूप रेखा अर्द्ध स्थायी समुदायो में चरम पर पहुॅची हो सकती है। मध्य भारत के उच्च भूमि के अनेको पहाडी एव जगली क्षेत्रो मे तुलनात्मक रूप से

स्थित, गैर–कृषीय जीवन सभव था जहॉ वर्ष भर फल, फूल, बीज, अकुर, जड, कद मछली, पक्षी आदि उपलब्ध था तथा सरल ढग से उनका भडारण हो सकता था।

मध्य गगा घाटी के मध्यपाषाण कालीन लोगो के वानस्पतिक खाद्य इकट्ठा करने के विषय मे हमे मुख्यतया खाद्य सामग्री तैयार करने वाले उपकरणो द्वारा लगाये गये अनुमान पर ही आधारित रहना पडता है) वर्मा 2000)। सराय नाहर राय (शर्मा 1973) एव महदहा (शर्मा और अन्य 1980) से कोई भी वनस्पति अवशेष नही मिला है। प्लवन तकनीक के द्वारा 1983–84 मे दमदमा मे खाद्यान्न के कुछ कार्बनीकृत दाने खाजे गये है (वर्मा और अन्य 1985)। उनकी निश्चित पहचान अभी होनी है। महदहा एव दमदमा मे बलुआ पत्थर के बडे खण्डो का प्रयोग सिल के लिए होता था, जिनके अवशेष पर्याप्त मात्रा मे पाये गये है। मध्य गगा घाटी मे पत्थर स्थानीय रूप से नही पाये जाते हैं। अतएव वहॉ पाये गये सिल और लोढे दक्षिण मे 100 किमी0 दूर प्रभास पहाडियो या उत्तर पूर्व विन्ध्य से लाये गये होगे, ऐसी मान्यता है। चूँकि प्रत्येक पूर्ण सिल का वजन 10 से 15 किग्रा0 होगा एव महदहा तथा दमदमा मे क्रमश 191 एव 141 अवशेष मिले हैं, अतएव एक यथेष्ट ऊर्जा–निवेश की आवश्यकता पडी होगी।

आर0बी0 ली और जे0डी0 वोरे (1968), जे0 येल्लेन एव अन्य (1985) द्वारा किये गये नृजातीय शोध प्रदर्शित करते है कि वर्तमान समय के शिकारी तथा खाद्यान्न इकट्ठा करने वाले समुदाय आरामदायक जीवन बिताते है, प्रत्येक व्यक्ति प्रतिदिन दो से पॉच घटे भोजन की तलाश में बिताता है एव पौष्टिक तथा भिन्न प्रकार के आहार का आनन्द उठाता है।

आर0वी0 ली ने दक्षिण अफ्रीका के कुग वुशमेन के सदर्भ मे आकलन किया है कि उनका 65 से 80 खाद्य, वानस्पतिक स्रोतो से प्राप्त किया जाता है। फल, फूल, जड आदि इकट्ठा किये गये मुख्य खाद्य है। खाने मे मास की मात्रा प्राय 35 से अधिक नही होती, यद्यपि कठिनाई से प्राप्त होने के कारण यह प्रमखुता प्राप्त खाद्य है। यह ध्यान देने की बात है कि वर्तमान समय के शिकारी एव खाद्य–इकट्ठा करने वालो के उदाहरण बहुत कम है तथ यह आवश्यक नही है कि वे पहले के भोजन खोजने वाले समुदाय का प्रतिनिधित्व करते हो। पुरातात्विक अध्ययन मे नृजातीय नमूनो का उपयोग सावधानी पूर्वक करना चाहिए। हम यह नही मान सकते है कि मध्यपाषाण काल का आखेटक एव खाद्य–सग्रहक पूर्णत आजकल के लोगो की भॉति ही व्यवहार करते रहे होगे।

महदहा को स्थल अवशोषण अध्ययन (Site catchment analysis) हेतु लिया गया (पाण्डेय 1985)। यह स्थल एक झील

के किनारे स्थित है। यहाँ पर खुदाई मे चार चरणो के आवासीय जमाव और कई नर ककाल मिले है। मध्य पाषाण काल मे यहाँ तीन प्रकार के क्षेत्र उपभोग हेतु उपलब्ध रहे होगे। (1) झील, (2) झील के दलदली किनारे एव (3) खुले वनस्थल। मध्यपाषाण काल मे झील के विस्तार का अनुमान करना कठिन है। यद्यपि मध्यपाषाणकाल का यह स्थल सिकुडा तथा दलदल भूमि का एक क्षेत्र खाली है जोकि मानसून के समय बाढग्रस्त हो जाता है। झील का कुल संगणित क्षेत्रफल 9 60 वर्गकिमी0 है। आजकल झील के तल का प्रयोग मुख्यतया खेती की जमीन के रूप मे किया जा रहा है। महदहा के 10 किलोमीटर की परिधि का अवशोषण क्षेत्र एक गतिशील अर्थव्यवस्था के द्वारा शोषित किये जाने वाले स्थल की सीमा निर्धारित करता है। यह क्षेत्र दमदमा को आच्छादित कर लेता है, जो महदहा से 5 किलोमीटर उत्तर–पश्चिम स्थित है। जैसा कि देखा जा सकता है अधिगम्य क्षेत्र पूर्व मे झील द्वारा यथेष्ट रूप से प्रभावित है। जीविका एव अधिवास मे एक नजदीकी अर्न्तसम्बन्ध है। सराय नाहर राय एव दमदमा भी धनुषाकार झीलो से सम्बन्ध है। महदहा के मध्यपाषाण कालीन लोगो द्वारा जलीय ससाधनो के दोहन के स्पष्ट सकेत मिलते है। मानव शवाधानो मे कछुए की हड्डियाँ पायी गयी है। जलीय ससाधन गैर–मौसमी भविष्यवाणी करने योगय, थलीय ससाधनो की अपेक्षा उपलब्धता मे उतार–चढाव वाले न होगे एव स्थानीय मानव जनसख्या को

सॅभालने योग्य होगे। ऐसा प्रतीत होता है कि स्वय झील ने जलीय एव वानस्पतिक खाद्य प्रदान किया होगा। मध्यपाषाण कालीन लोगो के आहार की पूर्ति, वन्य पशुओं के मास से होता था। क्या 10 किमी0 क्षेत्रफल के स्थलीय ससाधन मानव जनसख्या को सॅभालने के लिए काफी थे, या ये ससाधन जनसख्या की आवश्यकता से अधिक थे, इस प्रश्न का उत्तर देना पर्याप्त आकडो के अभाव मे आसान नहीं है। प्रागैतिहासविदो द्वारा प्रयुक्त मानव की कैलोरी सम्बन्धी आवश्यकताओ के अनुमानो मे व्यापक विसगतियॉ है।

प्रतिदिन प्रतिव्यक्ति के लिये 2000 से 10000 कैलोरी की आवश्यकता निर्धारित की गई है। आयु, लिग, शरीर का वजन, कार्य–भार आदि के आधार पर विभिन्न वर्ग के लोगो को विभिन्न मात्रा मे भोजन की आवश्यकता होती है। यह विवाद का विषय है कि इस प्रकार के अध्ययन में किस प्रकार के आकलन का चुनाव होना चाहिए। जैसा कि वी0 वाटसन (1955), आर0 डब्ल्यू0 डनेल एव अन्य (1972) ने सकेत दिया है कि किसी स्थल पर मिली प्रत्येक वस्तु खायी नही जाती थी, न ही प्रत्येक खायी जाने वाली वस्तु हर स्थल पर पाई ही जाती है। स्पष्टत हड्डियों के अवशेष पौधो से अधिक महत्व के हैं। आहार मे प्रोटीन की भूमिका अत्यधिक महत्व की थी।

महदहा स्थल पर अधिवास सभवत शरद एव ग्रीष्म मे किया गया होगा, वर्षा ऋतु का आवास स्थल अन्यत्र रहा होगा। यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि इसी समय सराय नाहर राय पर भी आबादी बसी होगी। किस स्थल पर मानसून का आवास स्थल स्थित था या थे? इस प्रश्न का उत्तर हिरण, भैस, गैडा, सुअर जैसे जानवरो के वर्षाऋतु मे विचरण करने के स्थान के क्रम मे अच्छी तरह दिया जा सकता है।

मध्य गगा घाटी के प्रातिनूतन कालीन भू–आकृति विज्ञान के विषय मे जानकारी अल्प है। मध्य सोन घाटी के एक हाल के अध्ययन मे जे0डी0 क्लार्क ने सुझाव दिया कि मध्य सोन घाटी मे गतिशीलता बहुत कम थी, या तोपहाडियो की ऊँचाइयो मे या पहाडी ढलानों के मैदान पर गगा के निकटवर्ती होने के बावजूद प्रतापगढ का क्षेत्र कभी भी बाढग्रस्त नही हुआ। ऐसा कोई कारण नही है कि यह मान लिया जाय कि जगली जानवरो जैसे हिरण, सुअर एव गाय की बडी आवश्यकताएँ गगा एव गोमती के बीच स्थित क्षेत्र से नही हो सकती थी। मध्य गगा घाटी के भागो मे यथेष्ट जगली जानवरो के होने मे कोई कठिनाई नही है। यूरोपीय मध्य पाषाण कालीन आखेट का सर्वाधिक आकर्षक नमूना ऊँचे क्षेत्रो से नीचे की ओर मौसमी गतिशीलता है जो कि लाल हिरण के प्रवास चक्र के समान है। ग्राहम क्लार्क ने 'शरद शिविरो' को

बिना अलग हुए मृगश्रृगो के कार्य के साथ जोडा है एव स्टारकार मे इस प्रारूप के अतिरिक्त पहलू के रूप मे उच्च अनुपात की तक्षणियॉ देखते है। यह नमूना फिर भी, भिन्न स्थलाकृति मे उचित नही हो सकता है। भारतीय बोवाइड, जिनमे कि यूरोप मे मौसमी सकेतक मृगश्रृगो का अभाव है, की हड्डियो मे मौसमी आखेट के साक्ष्य प्राप्त करना आसान नही है। कुछ मृगश्रृगो का प्रयोग महदहा मे हड्डियो के गहने बनाने के लिए होता था। यह असभव नही है कि गिरे हुये मृगश्रृग के टुकडे अन्यत्र इकट्ठे किये गये हो, या पूर्व के मौसम के हो। मौसमी आधिपत्य के निर्णायक प्रमाण के बिना कोई प्रश्न कर सकता है कि क्या मध्यपाषाण कालीन आखेटक– सग्रहको के पास वार्षिक जल आपूर्ति एव प्रचुर आखेट एव वनस्पति ससाधनो के साथ अपने सामान्य आखेट क्षेत्र के अन्दर अलग–अलग मौसमो मे गतिमान होने का कोई प्रेरणा स्रोत थ। प्रमुख क्षेत्र जो जैववैज्ञानिक दृष्टि से प्रतापगढ जिले के आपूर्तिकर्ता थे, इलाहाबाद, सुल्तानपुर, जौनपुर एव वाराणसी जिलो के भाग थे। महदहा एव दमदमा मे बडी सख्या मे पत्थर के सिल और लोढे के अवशेष पाये गये है। स्पष्टत उनका प्रयोग दानो, घास एव अन्य वानस्पतिक खाद्य पदार्थो को पीसने के लिए किया जाता था। किन्तु आरम्भिक खेती का कोई साक्ष्य नही मिलता। क्योंकि उत्तर मध्यपाषण काल मे गहन आखेटकीय–सग्राहक अर्थव्यवस्था ने मध्य गगा घाटी मे अतत पौधो की कृषि को

सचालित नही किया जैसे कि अन्यत्र पश्चिम एशिया, अनातोलिया एव मिश्र अथवा भारत के विन्ध्य क्षेत्र ने किया है।

मध्य गगा घाटी मे मध्य पाषाणिक सस्कृति के आवास और अर्थव्यवस्था के सन्दर्भ मे प्राप्त प्रमाण विद्वानो को इतने महत्वपूर्ण लगे कि इस क्षेत्र की मध्यपाषाणिक सस्कृति पर राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के गोष्ठियो का आयोजन किया गया। इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद के प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व विभाग मे 1995 मे मध्यपाषाणिक सस्कृति पर एक राष्ट्रीय सगोष्ठी आयोजित की गयी थी। उसमे कई महत्वपूर्ण शोध–पत्र प्रस्तुत किये गये और उन पर विचार–विमर्श प्रस्तुत किया गया (मिश्र और पाल 2001)। इसके उपरान्त 1996 मे फोरली, इटली मे आयोजित इन्टरनेशनल यूनियन आफ प्रीहिस्टोरिक एण्ड प्रोटोहिस्टारिक साइसेस के 13वे सम्मेलन मे *"बायो आर्कियोलाजी आफ मेसोलिथिक इण्डिया"* नामक संगोष्ठी का आयोजन हुआ, जिसमे गगा घाटी की मध्य पाषाणिक सस्कृति के अध्ययन से सम्बद्ध विशेषज्ञो ने शोधपत्र प्रस्तुत किया (मिश्रा 1996, कालजे 1996, थामस और अन्य 1996, पाल 1996, पाण्डेय 1996, केनेडी 1996, लुकास ओर अन्य 1996, मिश्रा 1996, वर्मा 1996,)।

नवपाषाणिक संस्कृति

कालक्रम की दृष्टि से मध्य पाषाणकाल के बाद नवपाषाणिक सस्कृति अस्तित्व मे आयी। मध्य गगा घाटी के पूर्वी उत्तर प्रदेश ओर बिहार से इस सस्कृति के कई स्थल मिले है, लेकिन नवपाषाण सस्कृति का कोई भी प्राथमिक स्थल अब तक इस जनपद मे प्रकाश मे नही आ सका है। कुछ नवपाषाणिक कुल्हाडियॉ और अन्य घर्षित उपकरण सर्वेक्षण मे ऊपरी सतह से या वृक्षो के नीचे पूजा स्थलो पर मिले है, लेकिन वे वास्तविक पुरातात्विक संदर्भ मे नही है।

मध्यगगाघाटी मे अनेक ऐसे महत्वपूर्ण पुरातात्विक स्थल प्रकाश में आए है जो न केवल मध्यगगाघाटी के पुरातत्व की दृष्टि से अपितु सम्पूर्ण भारत के प्रागैतिहासिक व आद्यैतिहासिक इतिहास की दृष्टि से अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है। जौनपुर जनपद व सई नदी घाटी के पुरातत्व की दृष्टि से उन स्थलो से प्राप्त साक्ष्यो का विश्लेषण महत्वपूर्ण है। अतएव मध्यगगाघाटी व विन्ध्य क्षेत्र के महत्वपूर्ण उत्खनित पुरास्थलो का विवरण निम्नवत् है–

इमलीडीह खुर्द :–

इमलीडीह खुर्द का पुरास्थल (Lat $26^0 30'36''$ N; $83^0 12'5''$E) उत्तर प्रदेश मे गोरखपुर–गोला मार्ग पर गोरखपुर से 40 किमी0 दक्षिण मे सिकरीगज से आधा किमी0 उत्तर पश्चिम मे घाघरा नदी की सहायक कुवाना नदी के बाये तट पर दक्षिण–पश्चिम गोरखपुर मे स्थित है। पुरास्थल 15–20 एकड मे फैला हुआ है तथा इसी पर आधुनिक इमलीडीह ग्राम स्थित है। यहॉ पर 1990–91 मे, हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी के प्राचीन इतिहास विभाग के तत्वाधान मे पुरूषोत्तम सिह एवं उनके सहयोगियो ने सर्वेक्षण किया था तथा 1992 मे उत्खनन किया। उत्खनन के फलस्वरूप निम्न सास्कृतिक अनुक्रम प्रकाश मे आये

1 कालखण्ड I (प्राक् नरहन सस्कृति 1300 ईसा पूर्व)
2 कालखण्ड II (प्राक् नरहन सस्कृति 1300–1800 ईसा पूर्व)
3 कालखण्ड III (नरहन कालखण्ड II 800–600 ईसापूर्व)

कालखण्ड I (प्राक् नरहन संस्कृति)

यहॉ के उत्खनन की प्रमुख उपलब्धि प्राक् नरहन सस्कृति की जानकारी थी। इस कालखण्ड का कुल जमाव 50–60 सेमी0 था। चूकि यह नरहन सस्कृति काल के पूर्ववर्ती थी इसीलिए इसे पूर्व नरहन सस्कृति के नाम से अभिहित किया गया।

इस काल की प्रमुख पात्र परम्परा एक रूक्ष लाल पात्र परम्परा थी जिनमे से कुछ के ऊपर डोरी की छाप भी मिलता है। अत इसे डोरीछाप पात्र परम्परा भी कहा गया है। पात्रो के निर्माण के लिए मिट्टी मे काफी मात्रा मे सालन मिलाया जाता था। अधिकाश गोलाकार पात्रो की बारी, पतली बालू से युक्त तथा भगुर है। पात्र कम पके है तथा कोर काले और ककरीले है।

डोरीछाप बर्तनो मे प्रमुख प्रकार अन्दर की ओर मुडे साधार कटोरे जिनके बाहर की सतह पर डोरी की छाप मिलती है। पूरे कटोरे की ऊँचाई 7 सेमी0 तथा व्यास 16 सेमी0 था, इन बर्तनो का आधार अलग से चाक पर बनाया जाता था और फिर बर्तन से जोड देते थे। इसी प्रकार से बडे गोलाकार नाशपाती आकार के बर्तन मिलते है जिनकी गर्दन सकरी तथा मुँह फैला होता था। इनमे भी मुँह अलग से जोडा जाता था। इनमे गर्दन के ठीक नीचे डोरी की छाप होती थी। तीसरे प्रकार का हाडी की तरह पात्र मिलता है। ये तीक्ष्ण कोखदार होते थे तथा उनपर पट्टी चिपकाकर अलकरण करते थे। पट्टी पर भी रस्सी अथवा नाखून का अभिप्राय बनाते थे। इसी प्रकार के पात्रो पर कोख के नीचे डोरी छाप मिलती है। कुछ पात्रो पर लाल–पाण्डु रग मे बिन्दु तथा डैश तथा पकाने के बाद ज्यामितीय उत्कीर्णन के द्वारा सजोया जाता था।

इस काल के लोग बास—बल्ली के झोपडो मे रहते थे। झोपडो के अतिरिक्त मिट्टी की अनेक फर्शे, चूल्हे तथा भट्टियॉ मिली है। पुरावशेषो मे स्टीयटाइट, टेराकोटा, अगेट तथा फेयन्स के मनके, हड्डी के शर तथा मिट्टी की चकरी की गणना की जा सकती है। प्राप्त हड्डियो के अवशेषो से ज्ञात होता है कि ये लोग चौपायो, भेड/बकरी तथा सम्भवत सुअर पालते थे। उनकी हड्डियो पर काटने के निशान मिलते है। जगली पशुओ मे (Hot deer) तथा सम्भवत भेडिये की हड्डियॉ मिली थी। पानी के जन्तुओ मे कछुए (Turtle) मछलियॉ तथा घोघे मिले हैं।

कालखण्ड द्वितीय II

इस काल के दो फर्शो, स्तम्भ गर्त, चूल्हे तथा भट्टियॉ मिली है। इस काल की प्रमुख पात्र परम्परा सफेद रग से चित्रित कृष्ण—लोहित—पात्र परम्परा है। इनमे कटोरे, साधार, तश्तरियॉ तथा होठदार बेसिन है। यहॉ पर इस पात्र परम्परा के रूक्ष तथा औसत गठन के ही पात्र मिले है। सुन्दर गठन के पात्र जैसे नरहन में मिलते है, यहॉ पर दुर्लभ थे। चमकदार कृष्ण तथा लाल (Burnished black-and-red ware) जो नरहन मे अपेक्षाकृत नगण्य थे यहॉ पर प्रभूत सख्या मे मिले थे। काले लेपित पात्रो मे यहॉ पर नवीन पात्र 'लोटा' भी मिलने लगता है। इसके अनेक पात्र मिले है कुछ पर मुँह से गर्दन के भाग तक बाहर की ओर

सीधी रेखाओ मे अलकरण मिलता है। लाल–लेपित पाटरी जैसी नरहन मे मिली थी यहॉ पर नही मिली।

इस काल के पुरावशेषो मे हड्डी के शर, मृत्तिका चकरी, मिट्टी के मनके, ताबे के बाणाग्र तथा दो तॉबे के मनके उल्लेख्य है। कलात्मक वस्तुओ मे स्टीयटाइट मनके उल्लेखनीय है। पशुओ मे इस काल के लोग चौपायो, बकरी, भेड, घोडे तथा कुत्तो को पालते थे। जगली पशुओ मे भालू, कुत्ते, हिरन, चीतल, बारहसिघा आदि की हड्डियॉ मिली है। सबसे अधिक हड्डियॉ गाय बैलो की ही है। घोघे छोडकर सभी जल के जन्तु जो प्रथम काल के जमाव से मिले थे इस काल मे भी मिलते है। मुर्गा भी सम्भवत इनका भोज्य था।

कालखण्ड तृतीय III

इस काल का जमाव आधुनिक काल की गतिविधियो के कारण बहुत अधिक बुरी स्थिति मे था। इस काल के जमावो मे कृष्ण–लोहित (Black and Red Ware) पात्र परम्परा का नितान्त अभाव था और लाल पात्र परम्परा (Red Ware)की बहुलता थी। काली लेपित पाटरी का भी आधिक्य हो जाता है, इसके अतिरिक्त धूसर रग के पात्र भी मिले हैं। एन0बी0पी0 का मात्र एक टुकडा धरातल से मिला था। इस काल का सास्कृतिक जमाव नरहन के कालखण्ड II से तुलनीय है।

नरहन

नरहन पुरास्थल ($26^0$19'N;$83^0$24'E) उत्तर प्रदेश मे गोरखपुर की गोला तहसील मे घाघरा नयी के बाये तट पर स्थित है। यहॉ का निकटम गाव भरोह बडहलगज–गोला मार्ग पर स्थित है। बडहलगज यहॉ से 12 किमी0 पूर्व मे है। यहॉ का निकटतम स्टेशन दोहरीघाट है। यहॉ पर हिन्दू विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास विभाग के तत्वाधान मे डा0 पुरूषोत्तम सिह ने 1984–89 के मध्य पाच सत्रो मे उत्खनन कार्य किया था। उत्खनन के फलस्वरूप 1300 ईसा पूर्व से गुप्त काल तक के सास्कृतिक स्तर प्रकाश मे आए जिन्हे पाच कालखण्डो मे विभाजित किया गया। ये क्रमश निम्न है

कालखण्ड प्रथम (Period I)	श्वेत रग से चित्रित कृष्ण–लोहित पात्र परम्परा
कालखण्ड द्वितीय(Period II)	कृष्ण लेपित तथा सम्बन्धित पात्र परम्पराये
कालखण्ड तृतीय(Period III)	लाल मोटे धूसर पात्र, कृष्ण लेपित तथा उत्तरी कृष्ण मार्जित ओपदार पात्र परम्परा (एन0बी0पी0डब्ल्यू0)
कालखण्ड चतुर्थ(Period IV)	शुग कुशाणयुगीन लाल पात्र परम्परा (पकी ईटो से निर्मित सरचनाये, वलय–कूप, टेराकोटा C-14 तिथि 2200±100
कालखण्ड पचम (Period V)	लाल पात्र परम्परा तथा सबधित पुरावशेष

नहरन पुरास्थल मे दो टीले थे जिनमे से प्रथम टीले का दो तिहाई भाग घाघरा नदी ने बहा दिया तथा एक तिहाई भाग मे गाव है। गाव के पश्चिम मे 2×2 मी0 की आठ खनतियो मे 1985 मे उत्खनन किया गया था जिसमे प्रथम दो कालखण्डो के जमाव प्रकाश मे आए थे। अन्तिम तीन कालखण्डो का उत्खनन दूसरे टीले पर किया गया जो कि प्रथम टीले से लगभग 500 मीटर उत्तर पूर्व मे स्थित था।

कालखण्ड प्रथम

कालखण्ड प्रथम का लगभग 1 मीटर मोटा जमाव प्रथम टीले मे उत्खनित किया गया। इस जमाव से श्वेत रग से चित्रित कृष्ण–लोहित पात्र परम्परा 6058% मुख्य रूप से तथा कृष्ण लेपित पात्र जिस पर कभी–कभी श्वेत रग से चित्रण किया गया था, लाल लेपित पात्र परम्परा तथा सादी लाल पात्र परम्परा के पात्र मिले थे। कृष्ण–लोहित पात्र परम्परा मे कटोरे, गहरे तसले तथा घडे मिले। तश्तरियॉ नही मिली।

प्रथम काल के बासिदे बास–बल्ली के मकानो मे रहते थे। स्तम्भगर्त, मिट्टी पर बल्लियो के निशान, कई कालो के पीटकर बनाएं गए फर्श तथा चूल्हे आदि मिले है। जमीन मे खोदे हुए गहरे गड्ढो मे पाटरी के टुकडे, पशुओ की हड्डियॉ, हिरन के सीग तथा राखयुक्त मिट्टी मिली है।

ये खेती करते थे। यहाँ उत्खनन से जौ, गेहूँ तथा खेती के चावल के दाने मिले है। दालो मे मटर, मूँग, चना, खेसारी, सरसो और तिल मिले है। सरसो के प्राचीनतम प्रमाण इसी पुरास्थल से भारत मे मिले है। कटहल तथा बेर के प्रमाण भी मिले है।

मास भी इनके भोजन का प्रमुख अग था। पशुओ की जली हड्डियाँ जिन पर काटने के निशान है प्रभूत मात्रा मे मिली है। जिनकी पशुओ हड्डियाँ है उनमे गाय–बैल, भेड–बकरी तथा हिरन और घोडा पहचाने जा सके है। मिट्टी के एक पिण्ड पर कटिया तथा डोरी के निशान मिले है। जिनसे अनुमान करते है कि मछली भी इनके भोजन का एक मुख्य अग था। कटिया लोहे की बनाते थे। धागा रैगी वनस्पति से बनाते थे।

इस कालखण्ड के अन्य पुरावशेषो मे 63 मिट्टी की चकरी जिनमे से कुछ के मध्य मे छेद है, सम्भवत पहिये के समान प्रयोग मे लाते थे, मिट्टी के डैबेर तथा दो गेदो जिसमे से एक मिट्टी तथा दूसरी पत्थर की है मिली है। पत्थर का एक मनका भी मिला है। चिराद, कोलडिहवा, सोहगौरा आदि अन्य स्थलो के समान नरहन से लघु पाषाण उपकरण नही मिले है।

इस काल के जमाव से एक ओपदार कुल्हाडी कुछ बाणाग्र–साकेटेड तथा पुच्छलयुक्त, हड्डी के प्वाइट आदि भी मिले

है। इस काल के ऊपरी स्तर से (900—800 ईसा पूर्व) लोहे के दो टुकडे भी मिले थे।

तिथि

सोहगौरा पुरास्थल जो यहॉ से मात्र 30 किमी0 दूर है मे कृष्ण—लोहित पात्र परम्परा स्तर से दो कार्बन तिथियॉ प्राप्त हुई थी जो क्रमश (PRL-170) 1140±130 ईसापूर्व तथा (PRL-178) 940±150; 110 ईसापूर्व है। नरहन से भी चार तिथियॉ है जिनमे दो एक दूसरे की पूरक है वे (B.S.-850) 1090±110 ईसापूर्व तथा (B.S.-852) 1100±110 ईसापूर्व है।

इसी क्रम से खैराडीह के निम्नतम स्तर से भी तीन तिथियॉ है जा क्रमश PRL-1049 940±150 B.S.-722 770±90 B.S.-5519) 5519±90 है। सिह लिबी (Libbi) द्वारा प्रस्तावित कार्बन की अर्ध जीवन की तिथि के आधार पर प्रारम्भ की तिथि 1300 ईसापूर्व तथा अन्तर की तिथि 800 ईसापूर्व प्रस्तावित करते है।

कालखण्ड द्वितीय

प्रथम टीले पर इस कालखण्ड का औसत जमाव 90 सेमी0 है। इसमे कृष्ण—लोहित पात्र परम्परा का नितान्त अभाव है। कृष्ण लेपित पात्र परम्परा की बहुलता है किन्तु लाल पात्र परम्परा

सबसे अधिक है। कृष्ण लेपित पात्र परम्परा मे प्रमुख पात्र प्रकार कटोरे तथा तश्तरियॉ लाल पात्र परम्परा मे कटोरे तश्तरियो, तसले तथा घडे मिलते हैं।

अन्य पुरावशेषो मे पाटरी की चकरी, विविध प्रकार के बाणाग्र तथा हड्डी के प्वाइण्ट आदि प्रमुख है। पुच्छल तथा साकेटेड बाणाग्रो पर वृत्ता का निशान आहत करके बनाया जाता था। काच अगेट तथा मिट्टी तथा हड्डी का पासा, मिट्टी की मुहरे उल्लेखनीय है। मिट्टी की लटकन तथा दो मिट्टी की मातृदेवी की मूर्ति उनके धार्मिक पक्ष को उजागर करती है। मिट्टी की धारिया भी मिली है। लोहे की वस्तुओ मे बढोत्तरी होती है। लोहे के बाणाग्र, बरछी के फल, छेनी तथा कीले मिली है। पहले के सभी खाद्यान्न इस काल मे भी मिले है। इनके अतिरिक्त कुसुम्भ के बीज इस काल के जमाव से प्रथम बार प्राप्त हुए।

ऐसा प्रतीत होता है कि बाढ के प्रकोप के कारण इस कालखण्ड के अन्त मे लोग एक दूसरे टीले पर चले गए। इस कालखण्ड को 800 ईसापूर्व से 600 ईसापूर्व के अन्तर्गत रखते है।

कालखण्ड तृतीय

इस कालखण्ड के जमाव दूसरे टीले से मिले है। अब मिट्टी के घर बास बल्ली से छाकर बनाते थे। एक घर मे एक सग्रह पात्र मिला था और उसी के निकट एक उल्टा तावे का

बर्तन भी था। इस काल के जमाव से लाल पात्र परम्परा, मोटी धूसर पात्र परम्परा, कृष्ण लेपित पात्र परम्परा, थोडे से उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा की रस्सीछाप पात्र परम्परा मिली है। लाल पात्र पराम्परा इस कालखण्ड की प्रमुख पात्र परम्परा थी।

इस काल के अन्य पुरावशेषो मे ताबे तथा लोहे की वस्तुये, मनके, चूडियॉ, मानव आकृतियॉ, चकरी तथा खिलौने की गाडी के पहिये तथा ताबे का एक सिक्का मिला है। इनके अतिरिक्त चादी के आहत सिक्को का ढेर भी मिला है। जिसमे 48 आहत सिक्के तथा तीन बिना आहत चांदी के टुकडे मिले थे।

बाणाग्र पहले की अपेक्षा कम मिले है। टेराकोटा का एक मूसल उल्लेखनीय है। अतिरिक्त कानो के आभूषण मिट्टी की चूडियो, काच तथा अगेट के मनके भी मिले है। अन्नों मे पर्वू के समान चावल, गेहूँ, कोदो आदि मिले है। इनके अतिरिक्त चन्दन तथा आवले के अवशेष भी मिले। इस कालखण्ड से प्राप्त कार्बन तिथियो 2200$\pm$100 वर्षपूर्व, 2240$\pm$100 वर्ष पूर्व तथा 2100$\pm$100 वर्ष पूर्व हैं।

कालखण्ड चतुर्थ

इस कालखण्ड की प्रमुख पात्र परम्पराओ मे लाल पात्र परम्परा प्रमुख थी। इसमे कटोरे, तश्तरियॉ घडे, तसले छिद्रयुक्त पात्र तथा ढक्कन प्रमुख हैं। इस काल मे पकी ईटो का प्रयोग होने

लगता है। टेराकोटा की सुन्दरता से बनी आकृतियॉ मिली है। इनके अतिरिक्त कर्णाभरण, सुरमे की शलाका, ताबे की अगूठी, मिट्‌टी, हड्‌डी, हाथीदात अगेट की चूडियॉ तथा मातृदेवी की प्रतिमाये बहुलता से मिली है। इनके अतिरिक्त नैगमेश तथा माया की भी प्रतिमाये मिली है।

इस कालखण्ड के निम्नवर्ती स्तर से एक कार्बन तिथि उपलब्ध है जो 2200±100 वर्ष पूर्व है। इस कालखण्ड को 200 ईसापूर्व से 300 ई0 के बीच रखते है।

कालखण्ड पंचम

इस कालखण्ड मे भी पात्र परम्परा लाल पात्र परम्परा थी। इस कालखण्ड को 300 ई0 से 600 ई0 के मध्य रखते है।

खैराडीह

खैराडीह पुरास्थल ($26^0$10'83''उ0, $83^0$51'30''पू0) उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के खैराडीह नामक गाव में घाघरा नदी के दाहिने तट पर स्थित है। यहॉ का पुरास्थल पूर्व पश्चिम मे 710 मीटर तथा उत्तर दक्षिण मे 11 मीटर है। यहॉ पर हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी के प्राचीन इतिहास विभाग के तत्वाधान मे 1980–81 से 83–84 तथा 85–86 के सत्रो मे प्रो0 के0के0 सिन्हा तथा वीरेन्द्र प्रताप सिंह के निर्देशन मे उत्खनन किया गया। उत्खनन के फलस्वरूप तीन कालो के साक्ष्य प्रकाश मे आए जिन्हे

क्रमश· कालखण्ड प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय मे विभाजित किया गया। जो क्रमश निम्न है। कालखण्ड प्रथम ताम्रपाषाणिक है, इसकी प्राचीनतम तिथि 1100 ईसापूर्व निर्धारित की गयी है। कालखण्ड द्वितीय (600 ईसापूर्व से 200 ईसापूर्व) तथा कालखण्ड तृतीय (200 ईसापूर्व से 300 इसवी सन् है।)

कालखण्ड प्रथम ताम्रपाषाणिक

उत्खनन के फलस्वरूप सबसे निम्नवर्ती ताम्रपाषाणिक जमाव जो 2 40 मीटर से 0 80 मीटर है प्रकाश में आया। ये ताम्रपाषाणिक लोग यहॉ के प्रथम निवासी थे जो नदी के किनारे परती भूमि मे आकर बसे। ये लोग बास बल्ली के झोपडो मे रहते थे। उत्खनन के फलस्वरूप स्तम्भगर्त, बास बल्ली के निशान की जली मिट्टी तथा मिट्टी की दीवाल जो 1 06 मीटर से 0 62 मीटर तक एक चौडी थी प्रकाश मे आई है। भवनो की स्पष्ट भूमितल योजना नही मिल सकी।

प्रथम काल के जमाव से निम्न पात्र परम्पराये प्रकाश मे आई.

1 कृष्ण लोहित पात्र परम्परा इनमे सादी तथा चित्रित दोनो प्रकार की है। यह चिराद, ताराडीह, सेनुआर तथा नरहन आदि के अनुरूप है।

2. काली लेपित सादी तथा चित्रित पात्र परम्परा

3 लाल लेपित तथा सादी पात्र परम्परा। कुछ मे चित्रण भी मिलता है।

4. काली पात्र परम्परा। यह काली लेपित पात्र परम्परा से गठन तथा सतह के आधार पर भिन्न मानी गई है। इसके पात्रो का बाहरी सतह बहुत चिकना है जिससे अनुमान किया जाता है कि उसे घिसकर चमकदार बनाया गया होगा।

प्रथम वर्ग की पात्र परम्परा को पुन चार वर्गो ABCD मे विभाजित किया गया है। वर्ग A के पात्रो की सतह पर किसी प्रकार का लेप नही किया गया है। इसमे अधिकाशतया कटोरे तथा विविध प्रकार के घडे है।

वर्ग B के पात्र बाहरी सतह तथा गठन मे पहले से अधिक विकसित है। उनके ऊपर लाल लेप मिलता है तथा अन्दर काला लेप। इस वर्ग के प्रमुख पात्र तसले, छिद्रयुक्त पैरदार कटोरे, साधार कटोरे तथा विविध अकार के कटोरे हैं।

वर्ग C के पात्र और परिष्कृत है। इनमे अन्दर बाहर दोनो ओर लेप है तथा उनको घिसकर चमकदार बनाया गया है। इस वर्ग मे तश्तरियॉ, वलय आधार युक्त कटोरे, होठदार तथा टोटीदार कटोरे हैं। इनके आकार मे विविधता है। इस पात्र परम्परा मे घडे नही है। सम्भवत· इनमे छोटे आकार के बर्तनो का उपयोग भोजन करने के बर्तनो के रूप मे करते थे।

वर्ग D के पात्रो की बारी बहुत गठित है तथा वे भली—भॉति पके है। उनमे धातु की खनक मिलती है। इस वर्ग की पाटरी इस काल के अन्तिम स्तरो से प्राप्त हुई है।

A वर्ग के पात्रो को छोडकर सभी मे अलकरण मिलता है। अधिकाश मे चित्रण सफेद रग से किया गया है। किन्तु कुछ मे लाल रग का भी प्रयोग किया गया था। चित्रण अन्दर तथा बाहर दोनो ओर किया गया है। चित्रण अभिप्रायो मे मोटी, सीधी, लहरदार, आडी रेखाये तथा अर्धवृत्त है। कुछ मे पत्ती के आकार का उत्कीर्णन भी मिलता है। कृष्ण—लोहित पात्र परम्परा मे कुछ मे डोरी की छाप भी मिलती है।

काली लेपित पात्र परम्पराओ को भी तीन वर्गों में विभाजित किया गया है जो क्रमश A, B तथा C है। वर्ग A के पात्र पतले अनुभाग के है तथा ऊपर गाढा लेप है। इनमे कुछ लाल कोर की पाटरी भी है जिस पर काला लेप किया गया था किन्तु वह छूट गया है। वर्ग B मे औसत गठन के पात्र हैं। इसके उसकी सतह के स्वरूप के आधार पर दो वर्गो मे विभाजित किया गया है। एक वर्ग के सम्पूर्ण पात्रो पर गाढा लेप मिलता है तथा अन्य मे पतला लेप है जिससे उसके अन्दर का धूसर रग कभी—कभी दिखता है। इसमे कुछ खुरदुरे सतह के भी पात्र है। वर्ग C के बर्तन रूक्ष तथा मोटी गठन के हैं। इनका कोर सरध्र

है। इस वर्ग के पात्रो पर पतला लेप है। इस वर्ग मे विविध प्रकार के कटोरे मिलते है।

अभिप्रायो का चित्रण मटमैले सफेद रगो से किया जाता था। चित्रण अभिप्रायो मे लैटिस, आडी रेखा समूह, सकेन्द्रित अर्धवृत्त बिन्दु आदि उल्लेख्य है।

सभी पात्र परम्पराओं मे लाल पात्र परम्परा सबसे प्रमुख थी। इसमे दो वर्ग थे। प्रथम मे सतह चिकनी की गयी है तथा दूसरे मे नहीं। प्रथम मे गाढे चमकीले लाल अथवा नारगी रग से लेप किया गया है। इस पात्र परम्परा मे डोरी छाप तथा खुरदुरे पात्र मे मिले हैं। इनमे से कुछ पर मटमैले सफेद रग मे चित्रण किया गया है। कुछ मे गाढे भूरे दानेदार रग मे पट्टी बनी है। इसमें घडे, छिद्रदार कटोरे, साधार कटोरे, टोटीदार कटोरे, गोलाकार कटोरे, छोटे आकार के कटोरे, गहरे तथा छिछले बेसिन तथा बडे आकार के कुण्डे मिलते हैं।

लाल पात्र परम्परा तथा कृष्ण–लोहित पात्र परम्परा के कुछ पात्रो विशेषत कटोरो तथा तसलो (बेसिन) मे बहुत समानता मिलती है।

ताबे का एक साकेटेड बाणाग्र जिसके साकेट मे दो छिद्र है तथा एक और वस्तु मिली है, जिसकी पहचान नही की जा सकी। हड्डी का भी एक साकेटेड बाणाग्र मिला है। पशुओ की

बहुत सी हड्डियॉ मिली है जिन पर काटने के चिन्ह है। अनुमानत उनका उपयोग भोजन के रूप मे किया गया होगा।

ये लोग खेती से परिचित थे। धान की भूसी का प्रयोग सालन के रूप मे किया गया है। इसके अतिरिक्त पशुपालन इनका दूसरा व्यवसाय था।

अन्य पुरावशेषो मे सिलखडी, अगेट, कार्नेलियन चर्ट तथा चाल्सेडनी के मनको की गणना की जा सकती है। अधिकाश मनके बेलनाकार है। मिट्टी की हापस्काच खेलने की चकरी, तथा एक जानवर (?) की आकृति भी मिली है।

इस काल के 92 मीटर के जमाव से अनुमान करते है कि इस कालखण्ड की अवधि काफी लम्बी रही होगी। इस कालखण्ड की प्राचीनतम तिथि 1100 ईसा पूर्व के लगभग निर्धारित की जा सकती है। यहॉ से निम्न कार्बन तिथियॉ उपलब्ध है

BS1-1	3070±90 वर्ष पूर्व
PRL-1049	1030±160 ईसापूर्व
	940±150 ईसापूर्व

ये तिथियॉ इस क्षेत्र के अन्य स्थलो से प्राप्त तिथियो से भी मेल खाती है।

सेनुवार

सेनुवार पुरास्थल (24°56′उ0, 83°56′पू0) बिहार के रोहतास जिले मे सासाराम से 7 किमी0 दक्षिण मे कुद्रा नदी के दाहिने तट पर नदी से लगभग एक किमी0 की दूरी पर स्थित है। पुरास्थल पूर्व–पश्चिम मे 300 मीटर तथा उत्तर–दक्षिण मे 360 मीटर मे फैला हुआ है। इस प्रकार से पुरास्थल का सम्पूर्ण क्षेत्रफल 60000 वर्गमीटर है। भूमि स्तर से उसकी अधिकतम ऊचाई 9 मीटर है। यहॉ पर 1985–87 मे प्राचीन भारतीय इतिहास सस्कृति एव पुरातत्व विभाग, हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी के तत्वाधान में प्रो0 के0के0 सिन्हा के निर्देशन में वीरेन्द्र प्रताप सिह ने सर्वेक्षण तथा उत्खनन किया था।

सेनुवार में उत्खनन के फलस्वरूप चार सास्कृतिक कालो के अवशेष प्रकाश मे आए। जिन्हे क्रमश निम्न कालखण्डो मे विभाजित किया गया है

कालखण्ड प्रथम I इस कालखण्ड को पुन दो कालो मे विभाजित किया गया है। 1A तथा 1B

1A शुद्ध नवपाषाणिक अथवा धातु विहीन है।

1B नवपाषाणिक–ताम्रपाषाणिक है।

कालखण्ड द्वितीय (II) ताम्र पाषाणिक

कालखण्ड तृतीय (III) काली ओपदार मृद्भाण्ड परम्परा सस्कृति (NBPW)

कालखण्ड चतुर्थ (IV) कुषाणकालीन

कालखण्ड प्रथम IA शुद्ध नवपाषाणिक अथवा धातु विहीन

इस कालखण्ड का सम्पूर्ण जमाव 15 मी0 है। इस जमाव से तीन प्रमुख पात्र परम्पराओ के अवशेष मिले हैं।

1 लाल पात्र परम्परा (Red ware)

2 चमकदार लाल पात्र परम्परा (Burnished Red ware)

3 चमकदार धूसर पात्र परम्परा (Burnished Grey ware)

लाल पात्र परम्परा (Red ware)

इस पात्र परम्परा के बर्तनो का गठन साधारण अथवा मोटा है। उनके ऊपर गाढा मोटा चमकीला लाल रंग का लेप है। इनको क्षैतिज प्रकार से रगकर चमकाया गया है। इनके बर्तनो की गर्दन लम्बी तथा नतोदर प्रकार की है लेप छोटे बर्तनो मे एक तरफ मिलता है। इस पात्र परम्परा के सबसे अधिक पात्र मिलते हैं। इन पर किसी प्रकार का लेप नही है। इनकी बारी ककरीली तथा सरध्र है।

चमकदार लाल पात्र परम्परा (Burnished Red ware)

इस प्रकार के बर्तनो पर लाल रग का लेप लगाकर उसे रगडकर चिकना बनाया गया है। मुख्य पात्र प्रकार कटोरे तथा घडे हैं।

चमकदार धूसर पात्र परम्परा (Brnished Grey ware)

इस प्रकार के अधिकाश बर्तनो मे धूसर रग का पतला लेप बर्तन के दोनो ओर लगाकर उसे रगडकर चमकाया गया है। ये पात्र अपेक्षाकृत रूक्ष, ककरीले सरध्र है। इनमे मुख्य रूप से कटोरे तथा घडे मिलते है। 1A कालखण्ड मे इन पात्रो पर उनकी बारी तथ गर्दन के भागो पर लाल गेरू से चित्रण मिलता है। अलकरण बर्तनो को पकाने के बाद करते थे। इनके अतिरिक्त रस्टिकेटेड पात्र परम्परा तथा डोरी छाप पात्रो के भी अवशेष मिले है। डोरी छाप पाटारी का अनुभाग महीन तथा औसत प्रकार का है। बाहरी सतह पर डोरीछाप मिलती है। जो बहुत हल्की है। इस पात्र परम्परा मे केवल कटोरे मिलते हैं।

इस कालखण्ड के प्रमुख पात्र प्रकारो मे चौडे मुँह के छिछले कटोरे, टोटीदार कटोरे घडे, होठदार बर्तन आदि है। अधिकाश बर्तनो का निर्माण चाक पर किया गया है। किन्तु हस्तनिर्मित बर्तन भी प्रभूत सख्या मे मिलते है।

लघुपाषाण उकरणो मे फलक तथा विविध प्रकार के ब्लेड है। इनमें छोटे ब्लेडो की सख्या सबसे अधिक है। उपकरणो के निर्माण मे चर्ट, चाल्सेडनी, अगेट, क्वार्ट्ज तथा क्वार्टजाइट,

पत्थरो का प्रयोग किया गा है। छोटे आकार के बसाल्ट के त्रिकोणात्मक सेल्ट मिले है जो पूर्णतया घर्षित तथा ओपदार है। इनके अतिरिक्त सिल, लोढे, घिसने के पत्थर, हथौडे तथा अगेट ओर चाल्सेडनी के मनके मिले है। इनके अतिरिक्त हड्डी के प्वाइट/शर भी मिले है, जिनका निर्माण पशुओ की लम्बी हड्डियो से किया जाता था।

पशुओ की बहुत सी जली/अधजली हड्डियॉ मिली हैं, जिनपर काटने के निशान है। इनका उपयोग भोज्य सामग्री के रूप मे होता था।

सबसे निम्नवर्ती स्तर से जले हुए अन्न मिले हैं, जो क्रमश· चावल, जौ, मटर, मसूर है। ऊपर के स्तर से बौना गेहूॅ, ग्रास पी मिले है। इनके अतिरिक्त कोदो के दाने भी मिले है। चावल इनका प्रमुख भोज्य प्रतीत होता है। कोलडिहवा तथा महगडा से सातवी छठी सहस्त्राब्दी ईसापूर्व मे इसकी खेती होती थी। खेती के अतिरिक्त पशुपालन भी उनकी अर्थव्यवस्था का अग था।

पुरावशेषो मे मिट्टी के मनके, चकरी जो कभी–कभी छिद्रयुक्त भी होती थी मिले है। मिट्टी को पीटकर फर्श बनाते थे तथा उस पर बांस बल्ली से छाजन करते थे।

कालखण्ड IB (नवपाषाणिक / ताम्रपाषाणिक)

इस कालखण्ड का सम्पूर्ण जमाव 2.20 मीटर था। इस कालखण्ड मे पूर्ववर्ती सास्कृतिक उपदानो के अतिरिक्त ताबे की मछली पकडने की कटिया, एक तार, सूई (?) तथा एक वस्तु और मिली है, जिसकी पहचान नही की जा सकी।

इसके अतिरिक्त सीसे के आयताकार अनुभाग के छड का टुकड भी मिला था। यहॉ से प्राप्त ताबे की वस्तुये शुद्ध ताबे की थी। यह उल्लेख्य है कि बगाल तथा बिहार में अन्य स्थलों से प्राप्त ताबे में मिलावट है।

पूर्ववर्ती कालखण्ड की सभी पात्र परम्पराये इस कालखण्ड में भी प्रचलित थी। अन्तर मात्र इतना था कि उनका गठन पहले से बहुत अच्छा था। उनकी सतह अपेक्षाकृत अधिक चिकनी तथा चमकदार थी। इस काल के डोरी छाप मे विविधता मिलती है। इस काल के चमकीले लाल पात्र मे भी चित्रण मिलता है। पात्रो को पकाने के बाद उन पर अलकरण करना सेनुवार तथा चिराद की नवपाषाणिक पात्र परम्पराओ की विशेषता है जो विन्ध्य क्षेत्र में अन्यत्र नही मिलती। कभी–कभी पकाने के पूर्व भी चित्रण के प्रमाण मिले है। चित्रण के अतिरिक्त अगूॅठे अथवा उगॅुलियो के

निशान, रस्सी के निशान से युक्त चिपकाई हुई मिट्टी की पट्टियो पर मिलते है। चाक पर बने बर्तनो के अतिरिक्त हस्त निर्मित पात्र भी मिले है। पात्रो के प्रकार पहले के ही समान थे। प्रस्तर उपकरण अधिक सख्या मे मिले है। सेल्ट बसाल्ट के बने है। लघुपाषाण उपकरण पूर्ववर्ती काल के समान मिले है। अन्य प्रस्तर उपकरण जैसे घिसने के पत्थर, सिल लोढे आदि इस काल मे भी पूर्ववत् मिले हैं। इनके अतिरिक्त धार लगाने के पत्थर तथा कुछ ऐसे पत्थर भी मिले है जिनके ऊपर रखकर सम्भवत. मनको मे छेद करते थे। इस काल मे कुछ नवीन अन्न ब्रेड गेहूँ, चना तथा मूग मिले है।

सौन्दर्य प्रसाधनो मे सीप की वस्तुये—विविध प्रकार के लटकन, अगेट, कार्नेलियन जैस्पर आदि के मनके मिले हैं। इनके अतिरिक्त सिलखडी के भी पचीस मनके मिले है, सम्भवत आयातित है।

उपकरणो मे छेनी तथा छिद्रक जो कि विविध आकार प्रकार मे मिले है उल्लेखनीय है। इस कालखण्ड के जमाव से प्राप्त बैल की हस्त निर्मित टेराकोटा आकृति उल्लेख्य है। इस प्रकार की बैल की आकृतियॉ चिराद से भी मिली है। टेराकोआ की

अन्य वस्तुओ मे सीटी (?) मनके, लघु आयताकार पिण्ड, चकरी आदि की गणना की जा सकती है।

इस काल के अनेक फर्शे मिली है, जो 20 सेमी0 तक मोटी है। चार स्तम्भगर्त 10 से 15 सेमी0 परिधि तथा 10 से 34 सेमी0 गहरे तक मिले है। ये बास बल्ली के झोपडे बनाते थे।

इस काल के निम्नवर्ती जमाव से जो कार्बन तिथियॉ प्राप्त है वे क्रमशः 1770±120 ईसापूर्व, 1660±120 ईसापूर्व तथा 1500±110 ईसापूर्व, 1400±110 ईसापूर्व है। इन तिथियो के आलोक मे अनुमानत 1B काल का प्रारम्भ 1800 ईसापूर्व के लगभग होता है तथा 1A का तृतीय सहस्त्राब्दी अथवा कुछ और पहले।

कालखण्ड द्वितीय II (ताम्रपाषाणिक)

इस कालखण्ड का सम्पूर्ण जमाव 2 30 मीटर था। इसके निम्नवर्ती जमाव 1B तथा इसमे अतिछादन था। इस काल के जमाव से अनेक पिटी हुई फर्शे मिली थी। जिनकी मोटाई 6 से 30 सेमी0 तक थी। लोग बास बल्ली के झोपडों में रहते थे। इनकी भूमितल योतना गोलाकार थी। कछ मिट्टी की सरचनाये मिली है। जिनके अन्दर तथा बाहर का व्यास क्रमश 4.26 और

38 मी0 है। इस काल के कुछ जले किनारो के गोलाकार अण्डाकार तथा आयताकार गड्ढे मिले हैं, जिनमे राख, कोयला, मिट्टी के ठीकरे आदि थे।

इस काल की पात्र परम्परा को निम्न वर्गो मे विभाजित कर सकते है। (I) अलेपित तथा लेपित लाल पात्र परम्परा। (II) काले रग से चित्रित लाल पात्र परम्परा। यह इस कालखण्ड के प्रारम्भ से ही मिलती है। इसमे चित्रण हल्के काले रग से किया गया है। चित्रण मे केवल रेखीय अभिप्राय बाहरी सतह पर मिलते है। बर्तनो की सतह चमकदार है। इसमे छोटे घडे तथा कटोरे मुख्यत मिलते हैं। (III) कृष्ण–लोहित चित्रित तथा अचित्रित (IV) काली लेपित पात्र परम्परा– इनमे चित्रिण श्वेत रग से किया गया है। चित्रण अभिप्रायो मे मूलतः सीधी तथा आडी–बेडी रेखाये है। (V) चमकदार काली पात्र परम्परा (VI) डोरीछाप पात्र परम्परा, (VII) रस्टिकेटेड पाटरी इस प्रकार पात्र परम्परा लाल पात्र परम्परा पर ही मुख्यता मिलती है। इसके ऊपर की सतह मोटी होती है तथा बालू लगाकार खुरदुरी बनाई जाती थी। (VIII) चमकदार काली पात्र परम्परा इनमे न0 II, VI, तथा

अधिकाश पात्र चाक पर निर्मित थे। यद्यपि पूर्ववर्ती पात्र प्रकार अभी भी प्रचलित थे किन्तु कुछ नवीन पात्र मिलने लगते है। पात्रो के गठन मे भी परिवर्तन मिलता है। इसी प्रकार चित्रण शैली मे भी अन्तर मिलता है। अब कुछ नवीन चित्रण अभिप्रायो का प्रयोग होने लगा जैसे लैटिस समानान्तर आडी रेखाये, लघु लहरदार रेखायें आदि। चित्रण पात्र पकाने के पूर्व करने लगे थे। यद्यपि, लाल गेरू से चित्रण पकाने के बाद भी करने के प्रमाण मिलते हैं। चित्रण मे नवीन रगो श्वेत, मटमैले सफेद रग तथा काले का प्रयोग है। इनके अतिरिक्त उत्कीर्णन तथा पट्टी चिपकाकर भी अलकरण करते थे। ताबे का प्रयोग होता था। उससे बने कडे तथा बहुत से पिन, कान की बाली (?), लटकन (?), तांबे के टुकडे मिले थे। कुछ बर्तन के टुकडे ऐसे मिले थे जिनमे अन्दर की ओर ताबा लगा था, ये सम्भवत. ताबा गलाने के लिए प्रयुक्त होते थे। लघु पाषाणोपकरणो मे ब्लेड, फलक आदि की बहुलता थी। चल्सेडनी तथा चर्ट का प्रयोग अधिक हुआ है। ओपदार उपकरण स्तरित जमाव से मिले थे। जिनमे हथौडे, सिल, गोला, डिस्क, ऊखली आदि प्रमुख हैं। हड्डी

की चूडियॉ, अगेट चल्सेडनी तथा सिलखिडी के मनके मिले थे। सम्भवतः यहॉ सिलखिडी का कारखाना था। हड्डी के उपकरणो मे छिद्रक, शर (?), सुई, छेनी तथा बाणाग्र–साकेट तथा पुच्छल युक्त मिले हैं। सीप के लटकन भी उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त मिट्टी के मनके, पशु तथा पक्षी भी आकृतियॉ चकरी, आदि है।

खेती बडे पैमाने पर होने लगी थी। चावल, गेहूॅ ज्वार, मटर, मूंग, चना, तिल, तीसी आदि के बीज मिले हैं। इसके अतिरिक्त बेर आदि भी मिले है। गाय बैल आदि की हड्डियॉ प्रभूत सख्या में मिली है। उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि यहॉ की ताम्रपाषाणिक सस्कृति पूर्ववर्ती नवपाषाणिक सस्कृति से विकसित हुई थी।

तृतीय कालखण्ड

इस कालखण्ड मे उत्तरी काली मार्जित पात्र परम्परा का प्रयोग प्रारम्भ होता है तथा साथ मे अब लोहा भी मिलने लगता है इस कालखण्ड मे तथा पूर्ववर्ती कालखण्ड मे अतिछादन के प्रमाण मिलते है जिससे स्पष्ट है कि दोनो कालखण्डो मे कोई अन्तराल नही था। किन्तु यह उल्लेख्य है कि यहॉ पर उत्तरी काली मार्जित पात्र परम्परा (एन0बी0पी0) के प्रारम्भिक काल ही

अवशेष मिलते है तथा उसको उत्तरवर्ती काल के अवशेष यहॉ पर उपलब्ध नही है।

चतुर्थ कालखण्ड

तृतीय कालखण्ड के उपरान्त एक अन्तराल मिलता है तथा उसके बाद के चतुर्थकाल को कुषाणकालीन कहा जा सकता है।

हस्तिनापुर

'हस्तिनापुर पुरास्थल (Lat. 29^0 9' and Long. $78^0$3') मेरठ जिले के मवाना तहसील मे दिल्ली से 100 किमी0 उत्तर पूर्व में स्थित है। इसका उल्लेख महाभारत तथा पुराण एव जैन तथा बौद्ध साहित्य मे कौरव नरेशो की राजधानी के रूप मे मिलता है। हस्तिनापुर के पुरातन टीले साठ फीट की ऊॅचाई तक वर्तमान है। गगा नदी यहॉ से लगभग 8 किमी0 की दूरी पर है, तथा 15 किमी0 की दूरी पर पूर्व मे ही 'बूढी गंगा' बहती है। अनुमनत प्राचीन काल मे गगा की मुख्य धारा यहीं से बहती रही होगी।

पुरातन टीले जो आज बिखरे हुए से प्रतीत होते है। पहले एक रहे होगे। इस समय ढीलो के प्रमुख वर्ग है उत्तरी तथा दक्षिणी। इनको एक बरसाती नाला अलग करता है। उत्तरी टीले को उल्टा खेडा के नाम से भी अभिहित करते है। इसे पुन पूर्व–पश्चिम मे बहने वाले एक बरसाती नाले ने दो भागो मे विभाजित कर दिया है। इसमे उत्तरी भारी पर एक मध्यकालीन भवन तथा जैन मन्दिर है। दक्षिणी भाग पर भी मध्यकालीन सरचनाये हैं। इसी प्रकार शेष टीलो पर भी मध्यकालीन सरचनाये दिखायी पडती है।

अन्य ज्ञात मृदभाण्ड परम्पराओं से तथा उनका हडप्पीय संस्कृति से क्या सम्बन्ध हो सकता है आदि समस्याओ के निराकरण के लिए बी0बी0लाल ने यहॉ पर गत शताब्दी के पॉचवे दश मे (1950–52) मे उत्खनन किया। यहॉ सर्वेक्षण के दौरान लाल को टीलो के पादस्थलो से चित्रित धूसर भाण्ड के टुकडे मिले थे तथा इसके उपर के स्तर से उत्तरी काली मार्जित पात्र परम्परा के टुकडे मिले। इस प्रकार की पाटरी महाभारत मे उल्लिखित अनेक स्थलो से मिली थी।

यहॉ पर चार खनतियो HST-1 से HST-4 मे उत्खनन किया गया। इनमे HST-1तथा HST-2 मे चार कालो

के आवासीय जमाव प्रकाश मे आए। शेष दो खनितयो मे केवल मध्यकालीन अवशेष थे जिसे कालखण्ड V की सज्ञा प्रदान की गई। प्रत्येक काल की अपनी विशिष्ट पात्र परम्परा तथा सास्कृतिक उपादान थे।

कालखण्ड प्रथम

इस काल का जमाव 30 सेमी0 45 सेमी0 मोटा था। इस सबसे निम्नवर्ती जमाव से एक पात्र परम्परा मिली थी जो घिसी हुई तथा कम पकी हुई थी। उस पर गेरू से लेप था जिस पर नारगी लाल रग से गहरे लाल रग का लेप था तथा छूने पर रग छोडता था। यह कहना कठिन है कि ये पात्र चाक पर निर्मित थे।

इस काल की न तो कोई सरचना मिली और न ही कोई पुरावशेष इस प्रकार की पाटरी राजपुर परसु तथा बिसौली से भी मिली थी जहॉ से ताम्र निधियॉ जैसे ताबे की कुल्हाडी, हारपून तथा मानवाकृति आदि भी मिले थे। इस पात्र परम्परा को गैरिक पात्र परम्परा के नाम से अभिहित किया गया। द्वितीय कालखण्ड के प्रारम्भ के पूर्व ही इस कालखण्ड की आबादी समाप्त हो चुकी थी।

कालखण्ड द्वितीय

इस कालखण्ड का आवासीय जमाव 2 10 मीटर था। द्वितीय कालखण्ड की विशिष्ट पात्र परम्परा चित्रित धूसर पात्र परम्परा के नाम से जानी जाती है। इसका रग हल्के राखी के रग से गहरा धूसर रंग थ। यह भली-भांति पकी थी। इसके प्रमुख पात्र प्रकार कटोरे तथा सीधे अथवा उन्नतोदर बारी की गोल तश्तरियॉ थी। ये मुख्यतया चाक पर निर्मित थी यद्यपि कुछ हस्तनिर्मित भी मिली है। इनके ऊपर काले रग से चित्रण मिलता है। कुछ पर चाकलेट तथा लालिमायुक्त भूरे रग से भी चित्रण अभिप्रायो मे बारी के किनारे अन्दर-बाहर धारी, शैर्षिक तथा आडी-बेडी लाइने प्राय बाहर किन्तु कभी-कभी अन्दर भी मिलती है। इसके अतिरिक्त बिन्दु रेखिका, बिन्दु तथा रेखा वर्धमानवृत्त, अर्धवृत्त, सिगमा तथा स्वास्तिक आदि अभिप्राय सजोए जाते थे।

इसके साथ अल्प सख्या मे धूसर बारी की लालितायुक्त भूरे रग की पाटरी सम्मिलित थी। इसके ऊपर गहरे चाकलेट रग से चित्रण है। इनके अतिरिक्त एक काले लेप की पाटरी भी मिलती है। किन्तु उस पर काली मार्जित पात्र परम्परा की चमक नही है। इस प्रकार की कुछ पाटरी का बाहरी सतह काला तथा लाल है। जिससे अनुमान किया जाता है कि वह

अन्दर से पकई गई थी। इसके साथ एक लाल पाटरी जिस पर चमकदार लेप है, भी मिली है।

सीमित उत्खनन के कारण विस्तृत सरचनाये नही मिली है किन्तु मिट्टी तथा मिट्टी की ईटो की दीवाले चिन्हित की गई थी, परन्तु उनके आकार की जानकारी नही की जा सकी। दीवालो पर मिट्टी का लेप करते थे कुछ मिट्टी के थक्को पर बॉस बल्ली के निशान मिले है। लोहे के उपकरण इस उत्खनन मे नही मिले किन्तु बाद मे किये उत्खनन से इस काल मे लोहे के उपकरण भी प्राप्त हुये। ताबे की कुछ वस्तुये– एक बाणाग्र तथा सुरमे की शलाका मिली थी। चर्ट तथा जैस्पर के बटखरे तथा शीशे की चूडियॉ भी मिली। मृत्तिका पशु आकृतियॉ टूटी हैं किन्तु कुछ बैल अथवा घोडे के समान है। कुछ चकरी मे दो छिद्र है। सम्भवत उनका उपयोग सूत कातने के लिए किया जाता हो। इनके अतिरिक्त अगेट, जैस्पर, कार्नेलियन हड्डी आदि की गुरियॉ भी मिली थी।

इस काल के एक गर्त से जला चावल भी मिला था। इस काल के निक्षेप से चौपायो– गाय, भैस, भेड, सुअर आदि की जली अधजली हड्डियॉ मिली है जिनका उपयोग भोज्य सामग्री के रूप मे किया गया होगा। हिरन के हड्डियॉ भी मिली थी जिनका

आखेट ये लोग करते थे। घोड की हड्डियॉ भी यहॉ से मिली है। इस काल के अन्त मे भयकर बाढ के प्रमाण मिले है।

कालखण्ड तृतीय

इस काल मे जो लोग यहॉ पर बसे वे धूसर पात्र परम्परा का प्रयोग नही करते थे ये लोग उत्तरी काली मार्जित पात्र परम्परा (Nortyhern Balck Polished Ware) का प्रयोग करते थे। इस पाटरी का निर्माण अच्छी प्रकार से गूथी मिट्टी से होता था। यह भलीभॉति पकी हुई थी जिसमें धातु की खनक मिलती है। इसके विविध रग—सुनहरा, चॉदी अथवा पारे के रग तथा अन्य विविध रग है जो शीशे के समान चमकते है। इसके बर्तनो के प्रकार पूर्ववर्ती काले लेप वाली तथा चित्रित धूसर पात्र परम्रा से उद्‌भूत प्रतीत होते है। इनके अतिरिक्त कुछ नवीन प्रकार के बर्तन जैसे हाण्डी जिसके मध्य भाग में तीक्ष्ण कूट (Sharp carinatian) होता था, बेसिन (पकडयुक्त) तथा पेदीदार कटोरे मिले है।

घरो के निर्माण के लिए पकी ईटो का प्रयोग प्रभूत मात्रा मे मिलता है। तीन आकार की ईटे 17½x10x2¾ इच, 14½x9x2½ तथा विषम चतुर्भुजाकार 12 X9 तथा 6x2½ के

के आकर मे मिले हैं। प्रथम आकार मे प्राय मिट्टी की ईटे मिली है। तृतीय आकार की ईटो का उपयोग गोलाकार सरचनाओ मे प्रयोग के लिए किया जाता था। घरो की तल योजना के सम्बन्ध मे कुछ कहना सम्भव नही है। पक्के फर्श, पकी ईटो की नालियॉ, सोख्ता जार तथा वलय कूप के प्रमाण भी उत्खनन मे मिले है। जो उनकी आवासीय गृहयोजना के अग थे।

इस काल मे लोहे के उपयोग के प्रभूत प्रमाण मिले है।

अब ताबे तथा चादी के सिक्के–आहत सिक्के तथा लेखविहीन ढले सिक्के भी मिले है। मिट्टी के खिलौन बनाने में काफी प्रगति हो गयी थी। एक हाथी की सुन्दर आकृति मिली थी। इसके अतिरिक्त सिह तथा घोडे की भी आकृतियॉ मिली है। मानव आकृतियॉ भी मिली है। मिट्टी के खिलौने हस्त निर्मित तथा सांचे मे ढले दोनोप्रकार प्राप्त हुए है। एक मानव–पशु संयुक्त आकृति भी प्राप्त हुई थी। इसके अतिरिक्त कुछ प्रसाधन एव श्रृंगार की सामग्रियॉ भी प्राप्त हुई थी। इनमे चूडियॉ अगूठी आदि उल्लेखनीय है। ये ताबे, चल्सेडनी, अगेट, कार्लेलियन, काच तथा सीग से निर्मित है। इस काल का अन्त भयकर अग्निकाण्ड से हुआ था।

कालखण्ड चतुर्थ

लगभग एक शतक के उपरान्त चतुर्थ काल–खण्ड मे यह पुन आबाद हुआ। इस काल मे पूर्व कालो की पाटरी नही मिलती। अब एक लाल पात्र परम्परा मिलती है जो चाक पर निर्मित थी। पात्र प्रकारो मे प्रमुख है। कटोरे जिनकी बारी अन्दर मुडी हुई थी, टोटीदार बेसिन, बटनदार ढक्कन, दवात प्रकार का ढक्कन, शीशीनुमा गर्दन के बर्तन हाडी आकृति के लघुपात्र आदि। इन पात्रो पर छापे तथा उत्कीर्णित अलकरण मिलता है। अभिप्रायों मे स्वास्तिक, त्रिरत्न, मछली, पत्ती, फूल लूप, चतुष्कोण, वृत्त तथा इसी प्रकार के अन्य ज्यामितिक अभिप्राय उल्लेख्य है। इनके अतिरिक्त कुछ पात्रो मे काले रग से अभिप्राय बने है। इस पात्र परम्परा को प्रथम–द्वितीय शताब्दी अथवा कुछ बाद मे रखते हैं।

घर पकी ईटो के बनते थे। ईटो के आकार 14½x9x12½" था। फर्श के लिए 11x11x4" आकार की ईटो का प्रयोग किया गया था। गृहो की पूर्ण तल योजना तो नही मिली थी। किन्तु उनका दिकविन्यास प्रमुख दिशाओ में था। इस काल से वलय कूप भी मिला था। इस काल के स्तरों से ताबे तथा लोहे के उपकरण प्रभूत सख्या मे मिले है।

हस्तनिर्मित तथा साचे दोनो मे बने मिट्टी के खिलौने मिले थे। एक स्त्री तथा बोधिसत्व मैत्रेय की प्रतिमा कला के उत्कृष्ट नमूने हैं। डीलदार बैल की बहुत से आकृतियॉ मिली है। मिट्टी की बनी अन्य वस्तुओ मे चक्र, तकली, खिलौने की गाडियॉ, पहिये आदि उल्लेखनीय है।

पूजा के तालाब भी प्रभूत सख्या मिले हैं। इस प्रकार के तालाब अन्य पुरास्थलो से भी मिले है।

इस काल के प्रारम्भिक स्तरो से मथुरा नरेशो के द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व के सिक्के, मध्य स्तरो से यौधेय सिक्के जिन्हे प्रथम शताब्दी के निकट रखते है तथा अन्तिम स्तर से कुषाण नरेश वासुदेव के सिक्के जिन्हे तृतीय शती के अन्तर्गत रखते है, मिले है।

इस काल के भवन समृद्धिशाली प्रतीत होते हैं। मिट्टी के दो बर्तनो पर लेख मिले हैं।

कालखण्ड पाँच

समुचित अन्तराल के उपरान्त ग्याहरवी शती के लगभग पुन एक नवीन आबादी का विकास हुआ जो पन्द्रहवी शती तक रहती है।

तिथिक्रम

लाल ने पुरातात्विक आधार पर हस्तिनापुर के विभिन्न कालखण्डो की तिथि निर्धारण निम्न प्रकार से की है :

कालखण्ड I	प्राक् 1200 ईसापूर्व – गैरिक मृदभाण्ड परम्परा
कालखण्ड II	लगभग 1100 से 800 ईसापूर्व चित्रित धूसर मृदभाण्ड परम्परा
कालखण्ड III	प्रारम्भिक छठीं शताब्दी ईसापूर्व से तृतीय शताब्दी ईसापूर्व तक उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा
कालखण्ड IV	प्रारम्भिक द्वितीय शती ईसापूर्व से तृतीय शताब्दी तक

प्रो0 लाल ने हस्तिनापुर के विभिन्न कालखण्डो का निर्धारण पुरातात्विक आधार पर तत्कालीन ज्ञानालोक मे किया था। उस समय तक गैरिक मृदभाण्ड परम्परा तथा उससे सम्बन्धित सास्कृतिक पुरावशेषो के सम्बन्ध मे जानकारी नही थी। कालान्तर मे उत्खननो के आधार पर दोआब क्षेत्र से प्राप्त गैरिक मृद्भाण्ड परम्परा की तिथि, उष्मादीप्ति तिथियो के आधार पर 1730 से

1180 ईसापूर्व के मध्य निर्धारित की गई है यद्यपि उष्मादीप्ति की कतिपय तिथियॉ इसकी प्राचीनता को 2650 ईसापूर्व तक ले जाती है। किन्तु ये सदेह के घेरे से बाहर नही है। फिर भी, लाल की तिथि आवश्यकता से अधिक रूढिग्रस्त प्रतीत होती है।

श्रृंगवेरपुर

श्रृगवेरपुर इलाहीाबाद से 36 किमी0 उत्तर पश्चिम मे इलाहबाद उन्नाव राज्यमार्ग से लगभग 18 किमी की दूरी पर सिगरौर गाव में गगा के बाये तट पर स्थित है। प्राचीन टीला गगा नदी के किनारे उत्तर दक्षिण दिशा मे फैला हुआ है जिसकी अधिकतम ऊचाई–निकटवर्ती भूमि से लगभग 10 किमी0 है। इस पुरास्थल पर सात भिन्न स्थलो पर दिसम्बर 1977 से तीन सत्रो मे बी0बी0 लाल ने शिमला एडवास्ड स्टडी तथा पुरातात्विक सर्वेक्षण के तत्वाधान मे उत्खनन कार्य किया है।

उत्खनन के फलस्वरूप द्वितीय सहस्त्राब्दी ईसापूर्व के अन्तिम चरण से मध्यकाल तक के जमाव प्रकाश मे आए जिन्हे निम्न कालखण्डो मे विभाजित किया गया है

कालखण्ड –	I	1050-1000 B.C.
कालखण्ड –	II	950-700 B.C.
कालखण्ड –	III	700-250 B.c.
कालखण्ड –	IV	250B.C.-200 A.D.
कालखण्ड –	V	300 B.C. - 600 A.D.
कालखण्ड –	VI	600-1300 A.D.
कालखण्ड –	VII	17^{th} - 8^{th} A.D.

कालखण्ड प्रथम (Period I, 1050-1000 B.C.)

सबसे निम्नवर्ती जमाव 30–50 सेमी0 मोटा पीली मिट्टी का था जिसे लेयर 19E कहा गया है। यह परती मिट्टी पर आधारित था। इस जमाव से लाल मृदभाण्ड प्राप्त हुए थे, जिन्हे दो वर्गो मे विभाजित कर सकते हैं। प्रथम वर्ग के बर्तन भली–भॉति गूॅथी मिट्टी से बने थे तथा उन्हे ठीक से पकाया भी गया था। दूसरे वर्ग के बर्तन थोडा रूक्ष प्रकार के थे तथा उन्हें भलीभॉति पकाया भी नही गया था। दोनो ही वर्गो के बर्तनो पर प्राय एक प्रकार का लेप मिलता है तथा कभी–कभी प्रथम वर्ग के बर्तनो पर काले रग से चित्रण मिलता है। चित्रण साधारण रेखाओं अथवा रेखाकित हीरक (Hatched Diamonds) अभिप्रायो द्वारा काले रग से किया गया है। कुछ बर्तनो पर अलकरण क्षैतिज

पट्टी चिपकाकर (Applieue horizontal bands) तथा उत्कीर्णन (Incised designs) द्वारा किया गया है। उत्कीर्णित अभिप्रायों मे कघी अभिप्राय (Comb-like pattern), समानान्तर रेखाये आदि उल्लेखनीय है। बर्तनो के प्रकारो मे ऊपर की ओर मुडी बारी के जार, कटोरे, छिछले प्रकार के बेसिन, प्लैटर, घडे, तश्तरियॉ है। कुछ ठीकरो के आकार साधार तश्तरियो, गोलाकार टोटीवाले कटोरे अथवा बेसिन अथवा लूप हैडिल के समान है। बी0बी0 लाल की धारणा है कि यह कहना कठिन है कि कहॉ तक यह गैरिक पात्र परम्परा से मिलती है। इसका कोई सम्बन्ध ककोरिया से प्राप्त पाटरी से भी नही प्रतीत होता है।

उत्खनन से प्राप्त साक्ष्यो के आधार पर अनुमान किया जाता है कि ये लोग बास, बल्ली आदि से घरो का निर्माण करते थे। पुरावशेषो के रूप मे मात्र कुछ मिट्टी की छिद्रयुक्त अथवा बिना छेद की चकरी तथा कार्नेलियन का एक फलक प्राप्त हुआ है।

इस कालखण्ड से तीन ऊष्मादीप्ति (TL) तिथियॉ प्राप्त है जो क्रमश 3015±280 वर्ष पूर्व (BP) 2850±270 वर्ष पूर्व (BP) तथा 2900±380 वर्ष पूर्व (BP) है। चूॅकि इस कालखण्ड

का जमाव बहुत कम था अत इसे 1050–1000B.C. के अन्तर्गत रखा गया है।

बी0बी0 लाल यहॉ से प्राप्त लाल पाटरी को गैरिक मृदभाण्डो के समकक्ष रखते है। उनके अनुसार गगा घाटी मे गैरिक पात्र परम्परा द्वितीय सहस्त्राब्दी ईसापूर्व के अन्तिम चरण तक थी। श्रृंगवेरपुर इस पात्र परम्परा के अन्तिम चरण का निर्देश करता है।

इस कालखण्ड के बाद तथा दूसरे कालखण्ड के बीच अन्तराल मिलता है।

कालखण्ड द्वितीय (Period II, 950-700 B.C.)

इस कालखण्ड का औसत जमाव 1 50 मीटर है जिसके अन्तर्गत लेयर 19 से 14 तक आती है। इस काल खण्ड के जमाव से काली लेपित, कृष्ण लोहित, बर्निश्ड धूसर तथा लाल पाटरी मिलती है। इस काल खण्ड को भी IIA तथा IIB मे विभाजित कर सकते है। कालखण्ड IIA मे कृष्ण लोहित मृद्भाण्डो का आधिक्य है जो IIB मे समाप्त होने लगते हैं। जिन कृष्णलेपित मृदभाण्डो से लेप हट गया था वे साधारण धूसर पात्रों के समान प्रतीत होते हैं। पुरावशेषो मे शर पुच्छयुक्त हड्डी के

बाणाग्र, हड्डी के लटकन तथा मिट्टी एव उपरत्नो–जैस्पर तथा एक साने का मनका उल्लेखनीय है।

इस काल खण्ड के 19 लेयर से कार्बन तिथि 2856± वर्षपूर्व है। जो MASCA शुद्धि के बाद 900–1010 ईसा पूर्व निर्धारित की गई है। अत Pd.IIA को C. 950–900 ईसापूर्व मे रखा गया है।

कालखण्ड IIB के लिए 2743±300 वर्ष पर्वू की ऊष्मादीप्ति (TL) तिथि है तथा एक C-14 तिथि 2700±130 वर्ष पूर्व है। लेयर 17 से भी तीन ऊष्मादीप्ति तिथियॉ है, जो क्रमश 2690±280 वर्ष पूर्व, 2769+400 वर्ष पूर्व तथा 2660±2800 वर्ष पूर्व है। सम्मिलित रूप से इन तिथियो के आधार पर इस कालखण्ड को 950–700 ईसापूर्व मे रखा गया है।

कालखण्ड तृतीय (Period III, 700-250 B.C.)

तृतीय कालखण्ड मे उत्तरी–कृष्ण–मार्जित मृदभाण्ड परम्परा के पात्र मिलने लगते है। इस जमाव की औसत मोटाई 2 80 मीटर है तथा इसे A B तथा C उपकालो मे विभाजित किया जा सकता है। कालखण्ड A मे उत्तरी–कृष्ण मार्जित मृदभाण्ड को

बाहुल्य था जो विविध रगो–सुनहले, रजत नीले, स्पात रग, धूसर तथा काले मे मिलते हैं। इसके साथ कृष्ण–लेपित पात्र भी सम्बन्धित थे। चित्रित धूसर प्रकार के भी कुछ बर्तनो के चित्रण अभिप्रायो आदि के आधार पर कहा जा सकता है कि इनका चित्रित धूसर पात्र परम्परा के लोगो से घनिष्ठ सबध था। उपकाल III B मे अहिछत्र XA प्रकार के लघुपात्र तथा कोखदार हाण्डी प्रयोग मे आ जाती है। उपकाल IIIC मे उत्तरी–कृष्ण मार्जित पाटरी की गुणवत्ता तथा संख्या मे कमी आ जाती है तथा रूक्ष धूसर पात्रो की अधिकता होने लगता है। उपकाल I तथा II मे पकी ईटो से निर्मित सरचनाये उपलब्ध नही थी किन्तु IIIC मे इनके प्रयोग के प्रमाण मिलने लगते हैं।

इस काल से प्राप्त प्रमुख पुरावशेषो मे तीन ताम्रपात्रो (जिसमे से एक टोंटीदार था) एक लम्बे हाथ वाली कलछी, मिट्टी की बनी स्त्री प्रतिमा तथा गेदे, उपरत्नो, सोने तथा चॉदी के मनके मिट्टी के मनके, अगेट तथा चाल्सेडनी के बेलनाकार माप, हड्डी के शर, ताबे तथा लोहे की वस्तुए, लेखविहीन आहत तथा ढले ताबे तथा चादी के सिक्के आदि है। चूकि इस तथा इसके पूर्ववर्ती काल मे अन्तराल नही है अत. इसका प्रारम्भ भी 700 ईसा पूर्व मे रखा गया है। बी0बी0 लाल के अनुसार उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र

परम्परा NBPW का प्रारम्भ 700 ईसापूर्व से तथा अन्त 300 ईसापूर्व के लगभग निश्चित किया जा सकता है।

कालखण्ड चतुर्थ (Period IV, C. 250 B.C. - 200 A.D.)

इस काल खण्ड का सम्पूर्ण औसत जमाव 2.75 मीटर है जिसे दो उपकालो मे विभाजित कर सकते हैं। इस काल की प्रमुख पाटरी लाल पाटरी है तथा उत्तरी कृष्ण मार्जित (NBPW) तथा चित्रित धूसर पात्रो (PGW) का नितान्त अभाव है। लाल पात्रो के अन्दर की ओर मुडे बारी के कटोरे तथा चौरस आधार के सीधी बारी की तश्तरियॉ IV A उपकाल के उल्लेखनीय पात्र प्रकार हैं। IV B उपकाल के पात्र प्रकारो मे सीधी तीक्ष्ण बारी के कटोरे, छिद्रयुक्त बर्तन, लम्बी सीधी गर्दन मे पात्र, दवात की आकृति के ढक्कन तथा गहरी धारीदार तश्तरी प्रमुख है। पकी ईटो से निर्मित सरचनाये इस काल के उपकालो मे चिन्हित की गई थी, जिनमे SVP-I की एक सरचना विशेष उल्लेखनीय थी जिसमे अनेक कमरे तथा उनसे सम्बन्धित पकी ईटो से निर्मित फर्शे एक नाली तथा सोकेज पिट थे। सोकेज पिट को चार मीटर तक की गहराई तक खोदा गया था किन्तु उसका अन्त नही मिला।

उपकाल VI A के महत्वपूर्ण पुरावशेषो मे लैकीबुल प्रकार का सिक्का अयोध्या नरेशो के सिक्के तथा शुग मृण्मूर्तियॉ थी। उपकाल IV B के पुरावशेषो मे कुछ सील तथा सीलिग जिसमे से एक पर 'धनकश' पहली शती ईसा पूर्व– ईसवी की लिपि मे लिखा था तथा विम कैडफसीस के सिक्के थे, उल्लेख्य हैं।

उपकाल IV B मे पकी ईटो से निर्मित एक विशाल तालाब मिला था। इसकी दो इकाइयॉ थी तथा पानी आने तथा निकलने की बहुत सुन्दर व्यवस्था थी। यह टैक ऊँचे टीले के उत्तर मे निचले क्षेत्र मे परती भूमि मे खोदा गया था। टैक के किनारे तीन सोपान पकी ईटो से निर्मित थे। भारत मे उत्खनित यह विशालतम तालाब है।

तालाब मे पानी एक नहर के द्वारा आता था जो तालाब के उत्तरी किनारे पर थी। इसमे गगा का पानी एक नाले से आता था जब गगा मे बाढ होती थी। गगा का पानी पहले एक जलाशय मे जाता था जिसकी तलहटी तालाब से काफी नीची थी जिसकी वहज से सभी कीचड तथा मिट्टी उसकी तलहटी मे रह जाता था तथा केवल स्वच्छ जल ही तालाब मे जाता था। पानी का प्रवेश जहॉ से होता था वहॉ एक चॉप के आकार की पकी

ईटो की संरचना थी। इस चाप के मध्य मे 1 60 मी0 चौडे जल प्रवेश मार्ग था जो कुछ सोपानो से होता हुआ गिरता था। टैक मे पानी जिस स्थान पर गिरता था वहॉ पर 64x48x12 सेमी0 आकार की ईटे बिछी थी। जब कि ईटो का औसत आकार 42-43x27.5-28.5x6-7 सेमी0 का था।

जल प्रवेश की दिशा से तालाब की प्रथम ईकाई (Tank A) 34 मीटर लम्बी तथा 13 मीटर चौडी तथा चार मीटर गहरी है। तालाब की दूसरी ईकाई (Tank B) की वास्तविक लम्बाई का आकलन नही किया जा सका किन्तु यह कम से कम 43 मीटर लम्बी, 26 मीटर चौडी तथा 4 मीटर गहरी है। दोनो तालाब 5 30 मीटर लम्बी तथा 1 35 मीटर चौडी नहर से जुडे थे। इस नहर से थोडा पूर्व की ओर पॉच सोपानो की सीढियॉ थी, जिससे स्नान करने वाले नीचे जा सकते थे।

टैक 2 (Tank-2) प्रथम की अपेक्षा अधिक बडा तथा गहरा था। इस तालाब मे भी एक स्थान पर सात सीढ़ियॉ बनी थी जिसके द्वारा नीचे उतरा जा सकता था।

इस टैक के धरातल से गोद मे बच्चे के साथ हारीति की मिट्टी की प्रतिमा मिली थी।

कालखण्ड पंचम (Period V, A.D. 300-600)

इस काल खण्ड की प्रमुख पात्र परम्परा गहरी लाल लेपित पात्र परम्परा (Bright Red Slip bed Pottery) थी। इस काल के प्रमुख पात्र प्रकारो मे साधार व कटोरे, नीचे झुके बारी के जार थे। इस काल के पुरावशेषो मे गुप्तयुगीन मृण्मूर्तियॉ उल्लेखनीय थी।

कालखण्ड षष्ठम (Period VI, A.D. 600-1300)

इस काल के पुरावशेषो मे गहडवाल नरेश गोविन्द चन्द्र के 13 चादी के सिक्के थे जो कुछ आभूषणों के साथ एक पात्र मे रखे थे।

कालखण्ड सप्तम (Period VII, A.D. 17th - 18th Century)

इस काल का एक बडा घर मिला था जिसकी अधिकाश दीवाले चोरी दीवाले चोरी हो गयी थी किन्तु प्लास्टर अभी भी उपलब्ध था जिससे उसकी रूपरेखा निर्मित की जा सकी।

झूँसी

झूँसी अथवा प्राचीन प्रतिस्थापनपुर ($25^{0}26'10''$उ0, $81^{0}54'30''$पू0) इलाहाबाद जिले मे गगा–यमुना सगम के बाये तट पर इलाहाबाद से 7 किमी0 पूर्व मे स्थित है। इलाहाबाद से यहॉ तक पक्की सडक शास्त्री पुल से होकर जाती है। पुरास्थल गगा के किनारे उत्तर मे झूँसी रेल स्टेशन से दक्षिण मे छतनाग तक फैला है। यह लगभग 1 5 किमी0 चौडा है। झूसी कोहना, झूसी हवेलिया तथा छतनाग पुरास्थल के अधिकांश भाग पर स्थित गाव है। इस सम्पूर्ण क्षेत्र मे अनेक टीले विद्यमान है। किन्तु उन सभी मे समुद्रकूप का टीला सबसे अधिक ऊँचा तथा सुरक्षित अवस्था मे हैं।

प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्त्व विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय के वी0डी0 मिश्र, जे0एन0 पाल तथा मानिक चन्द्र गुप्त के निर्देशन मे यहॉ पर 1995, 1999 तथा 2002 मे उत्खनन हुआ है। इसके आगे भी उत्खनन की योजना है। जिसे फलस्व0रूप गगाघाटी के सास्कृतिक अनुक्रम पर समुचित प्रकाश पडा है। चार सत्रो मे उत्खनन के फलस्वरूप 6 सास्कृतिक कालो के जमाव प्रकाश मे आए है। 1999 तक केवल 5 सास्कृतिक कालो के सम्बन्ध मे ज्ञात था जो क्रमश ऊपर से निम्न है।

संस्कृति	लेयर	मुटाई
प्रारम्भिक मध्यकालीन	1–4	1 10 मी0
गुप्तकालीन	5–8	1 68 मी0
कुषाण–शुंग कालीन	9–20	3 15 मी0
उत्तर कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा	21–44	5 84 मी0
प्राक् उत्तर कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा (ताम्रपाषाणिक)	45–63	4 36 मी0

2002 के सत्र मे समुद्रकूप टीले के दक्षिण क्षेत्र मे दो खनतियो मे उत्खनन किया गया। इस स्थान का सास्कृतिक अनुक्रम निम्न था।

कुषाणकालीन	1 मीटर
उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा	1 मीटर
....	अन्तराल

नवपाषाणिक संस्कृति

यह जमाव केवल एक मीटर ही खोदा जा सका तथा उत्खनन परती भूमि प्राप्त करने के पूर्व ही बन्द करना पडा। यह उल्लेख्य है कि इस क्षेत्र मे ताम्र पाषाणिक स्तर के स्थान पर सास्कृतिक अन्तराल था।

संस्कृति

काल खण्ड प्रथम : नवपाषाणिक संस्कृति

अभी तक झूँसी उत्खनन से ज्ञात सबसे निम्नवर्ती सस्कृति नवपाषाणिक सस्कृति है, यद्यपि निम्नतमस्तर अभी तक (22 जुलाई) उत्खनित नही है। अत निश्चयात्मक रूप से कुछ कह सकना सम्भव नही है। चूकि निकट क्षेत्र मे ही मध्य पाषाणिक पुरास्थल प्रतिवेदित किए जा चुके है अत इस बात की सम्भावना से नकारा नही जा सकता है कि यहाँ भी सस्कृति का प्रारम्भ कम से कम मध्यपाषाण काल से हुआ होगा।

उत्खनन मे हस्तनिर्मित डोरी–छाप पाटरी, रस्टिकेटड वेयर, चमकदार काली पात्र परम्परा, लघुपाषाण उपकरण, लोढे के टुकडे तथा पशुओ की हड्डियाँ प्राप्त हुई है। धान की भूसी का प्रयोग मिट्टी मे सालन के रूप मे किया गया है। पात्र मोटी बारी के तथा भली–भाँति पके नही है। बारी का रग काला है तथा मिट्टी को भलीभाँति गूँथा नही गया था।

कालखण्ड द्वितीय : प्राक् उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्र परम्परा

काल 2A खण्ड ताम्र पाषाणिक

काल 2B खण्ड लौह युगीन

अभी तक प्राप्त साक्ष्यो के आधार पर ताम्रपाषाणिक तथा निम्नवर्ती नवपाषाणिक जमाव के बीच निरन्तरता के प्रमाण नही हैं क्योकि जिस क्षेत्र मे नवपाषाणिक सस्कृति के जमाव प्राप्त हुए है वहॉ पर ताम्रपाषाणिक नही है तथा जहॉ ताम्रपाषाणिक जमाव है वहॉ नीचे परती भूमि मिली है। इस जमाव को प्राक् उत्तरी कृष्ण मार्जित काल भी कहा गया है। इसका सम्पूर्ण जमाव 4 36 मी0 (लेयर 45 से 63) था। जमाव का रग कालापन लिए है। राख की अधिकता के कारण इसमे भूरापन भी है। लोहे की उपलब्धता के आधार पर इसे दो वर्गो मे विभाजित कर सकते है। निम्नवर्ती जमाव (लेयर 52 से 63) जिसे 2A कहा गया है, मे लोहा नही है तथा उसके ऊपर के लेयर 45 से 51) 2B मे लोहा भी मिला है।

इस काल के जमाव से कृष्ण लेपित पात्र, कृष्ण लोहित पात्र तथा लोहित पात्र (लाल पात्र) मिले हैं। लाल रंग को पुन साधारण लाल, चाकलेट रग तथा नारगी रगो मे भी विभाजित कर सकते है। बर्तन चाक पर निर्मित है। पात्रो मे साधार कटोरे, गहरे कटोरे, उन्नतोदर किनारे के कटोरे, टोटीदार कटोरे तथा बेसिन तथा साधार छिद्रयुक्त बर्तन आदि। चाकलेट रग की पाटरी पर रेखीय अलकरण है। अन्य पुरावशेषो मे हड्डी के साकेटेक

सरचनाये नही मिलती केवल स्तम्भगर्त, चूल्हे तथा जले हुए मिट्टी के पिण्ड मात्र मिले है। उत्तरवर्ती वर्ग से पकी ईटे तथा पकी ईटो से निर्मित सरचनाये भी मिली है। इस काल के जमाव से गेहूँ, सरसो, मूँग तथा उरद के जले हुए दाने मिले हैं। सम्भवत इस काल मे वृहद् पैमाने पर अग्निकाण्ड हुआ था।

इस काल खण्ड की अन्य पात्र परम्पराओ मे कृष्ण लेपित पात्र परम्परा, कृष्ण लोहित पात्र परम्परा, धूसर पात्र परम्परा तथा लोहित पात्र परम्परा प्रमुख है। उत्तरवर्ती वर्ग के उत्तर वर्ग से उत्तरी कृष्ण मार्जित पात्रो पर चित्रण भी मिलता है।

इस काल खण्डड के लिए भी दो कार्बन तिथियॉ PRL No. 2074, PRL 2072 तथा PRL 2070 जो क्रमश 640±90BC, 550±90 ईसापूर्व तथा 250±90 ईसापूर्व है। इसके आधार पर इस काल खण्ड को 700 ईसा पूर्व से 300 ईसा पूर्व के अन्तर्गत रख सकते है।

शुंग कुषाण काल

इस काल खण्ड का सम्पूर्ण जमाव 3 15 मीटर (लेयर 9 से 20) है। इसमे लेयर 20 तथा 19 शुगकालीन तथा शेष कुषाण कालीन है। शुग स्तर से छापयुक्त पात्र, उपरत्नो तथा

मिट्टी के मनके तथा कुछ मृण्मूतियॉ भी मिली है। पकी ईटो की जली दीवाले तथा जला फर्श भी मिला है।

कुषाण कालीन जमाव से कुषाण पाटरी, मिट्टी, लोहे तथा ताबे की वस्तुये उपरत्नो तथा मिट्टी के बने मनके आदि मिले हैं। इस काल से पकी ईटो की दीवाले फर्श तथा चूल्हे मिले है। कुछ लेखाकित सीलिग भी मिली है। इस काल खण्ड को द्वितीय शताब्दी ईसापूर्व से द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व से द्वितीय शताब्दी (IInd century BC से II century ईसवी) के अन्तर्गत रखा गया है। इसके लिए भी एक कार्बन तिथि PRL No. 2068, 40±90 ईसवी उपलब्ध है।

गुप्तकालीन जमाव

इस काल खण्ड का सम्पूर्ण जमाव 1 68 मी0 (लेयर 8 से 5) है। गुप्तकालीन पात्र परम्परा के अतिरिक्त मृण्मूर्तियॉ, तराशी हुई ईटे, उपरत्नों तथा मिट्टी के मनके हड्डी, लोहे तथा ताबे की वस्तुये तथा लेखाकित सीले भी मिली है। कुछ घरो की रूपरेखा तथा पकी हुई ईटो की फर्शे मिली थी।

इस काल के लिए चतुर्थ, पाचवी शताब्दी की तिथि प्रस्तावित की गयी है।

गुप्तकाल के बाद कुछ समय के लिए यह पुरास्थल वीरान हो गया था।

मध्यकालीन संस्कृति

इस काल से प्रारम्भिक मध्य पाषाण कालीन पाटरी मिली है। इसके अतिरिक्त मृण्मूर्तियॉ, ताबे तथा लोहे की वस्तुये और पशुओ की हड्डियॉ मिली है। कुछ लघु आकार के हिन्दू देवताओ–गणेश आदि की मूर्तियॉ भी मिली थी।

इस काल खण्ड को दस ग्यारह शती से पन्द्रहवी शती (10^{th} - 11^{th} century ईवसी से 15^{th} शताब्दी) के अन्तर्गत रखते है।

चोपनी माण्डो (बेलन घाटी)

चोपनी मण्डो नामक मध्यपाषाणिक पुरास्थल बूढी बेलन के बाये तट पर द्वितीय वेदिका पर देवघाट से लगभग तीन किलोमीटर पूर्वोत्तर दिशा मे स्थित है। इलाहाबाद से पूर्व तथा दक्षिण पूर्व दिशा मे इसकी दूरी 77 किमी0 है। यह पुरास्थल 15000 वर्गमीटर के क्षेत्र मे फैला है। इस सम्पूर्ण क्षेत्र का धरातल लघुपाषाण उपकरणो, फलको आदि से भरा पडा था। यह पुरास्थल बेलन नदी के परितत्यक प्रवाह क्षेत्र के अन्तर्गत है।

इस पुरास्थल पर सर्वप्रथम 1967 (आई0ए0आर0 1966–67 पृ0 38) से वी0डी0 मिश्र ने जी0अर शर्मा के निर्देशन मे उत्खनन किया था जिसके द्वारा इस स्थल का कालानुक्रम निर्धारित हुआ। इस उत्खनन मे 1 55 मी0 की अधिकतम गहराई तक उत्खनन हुआ था। कालान्तर मे पुनः 1978–82 के बीच बृजबिहारी मिश्र ने जी0अर0 शर्मा के निर्देशन मे क्षैतिज उत्खनन किया। 5X5 मीटर की 21 खन्तियो मे उत्खनन किया गया। इनमे से अधिकांश खन्तियॉ 30–35 सेमी0 की गहराई तक खोदी गयी किन्तु दो खन्तियो मे आधार शिला तक क्रमशः 60 तथा 80 सेमी0 तक खोदी गयी थी। उत्खनन के फलस्वरूप सम्पूर्ण सास्कृतिक जमाव को दस लयेरो मे विभाजित किया गया जिन्है चार सास्कृतिक कालो के अन्तर्गत रखते हैं

(I) अनुपुरापाषाण काल

(II) प्रारम्भिक मध्यपाषाण काल 'अ'

(III) प्रारम्भिक मध्यपाषाण काल 'ब'

(IV) विकसित मध्यपाषाण काल अथवा आद्य नवपाषाण काल

(I) अनुपुरापाषाण काल

20 सेमी0 मोटाई की लेयर (10) से इस कालखण्ड के सास्कृतिक स्तर प्राप्त हुए हैं। यह उच्च पूर्ण पाषाण काल से मध्यपाषण काल के विकास परिवर्तन का द्योतन करता है। इस

जमाव से उपलब्ध सामग्री मे लगभग 20% उपकरण अपेक्षाकृत बडे, मोटे तथा चौडे ब्लेड है जो उच्चपूर्वपाषाणिक ब्लेड परम्परा के अनुरूप त्रिकोणात्मक है यद्यपि नालीमत कोरो का भी विकास होने लगा था। 80% उपकरण–ब्लेड, भुथडे पृष्ठ ब्लेड तथा छिद्रक आदि मध्यपाषाण युगीन उपकरणो के लगभग अनुरूप है। सम्मिलित रूप से न तो ये उच्चपूर्व पाषाणकाल के अन्तर्गत रखे जा सकते हैं और नही मध्यपाषाण युगीन उपकरण समुदाय के अन्तर्गत।

(IIA) प्रारम्भिक मध्यपाषाण काल

इस वर्ग मे लेयर (9) तथा (8) की सामग्री समाहित है। इसमे अज्यामितिक प्रकार के उपकरण है जो अधिकाशतया चर्ट पर निर्मित है। अधिकाश उपकरण ताजे लगते है तथा पूर्व वर्ग से इन पर रासायनिक रगाई भी कम है। अधिकाश ब्लेड नालीमत कोरो से निकाले गए है। इनको निकालने के लिए अप्रत्यक्ष सघात विधि अथवा निपीड प्रविधि का प्रयोग करते हैं। उपकरण समुदाय मे विविध प्रकार के ब्लेड, खातयुक्त ब्लेड छिद्रक, शर तक स्क्रेपर आदि की गणना करते हैं। इनमे मृदभाण्ड नही थे।

इस काल के दो गोलाकार झोपडियो के फर्श मिले है जिनका व्यास 3.80 मी0 था तथा जिनके स्तम्भगर्त 0.70 से 1 मी0 के अन्तराल पर थे।

(IIB) प्रारम्भिक मध्यपाषाण काल

इसमे लेयर (7) तथा (4) तक की सामग्री सम्मिलित है। इसमे सर्वप्रथम ज्यामितिक प्रकार के उपकरण मिलते है। इसके अतिरिक्त कुछ नवीन प्रकार के उपकरण यथा दन्तुरित ब्लेड, ब्लेड, ल्यूनेट, लघु ब्यूरिन, त्रिभुज, समलम्ब चतुर्भुज लेयर (7) मे तथा ल्यूनेट आदि लघु ब्यूरिन लेयर (6) मे मिले हैं। इस वर्ग मे भी मृदभाण्ड नही मिली है।

इस काल के स्तरो से 5 गोलकार झोपडियॉ मिली है जिनको दो निर्माणात्मक कालो मे विभाजित कर सकते है। इसमे से तीन झोपडियो के स्तम्भगर्त लेयर (7) मे तथा दो के लेयर (6) मे खोदे गए थे। इनका व्यास लगभग 3 मी0 था तथा स्तम्भगर्त 50 सेमी0 से 1 मी0 तक दूरी पर थे। झोपडियो के फर्श पर पत्थर बिछे थे तथा इसके स्तम्भगर्त 40 से 90 सेमी0 की दूरी पर थे। झोपडो के फर्श पर लघुपाषाण उपकरण, हड्डियो के टुकडे तथा कुछ जले हुए मिट्टी के टुकडे भी मिले थे।

(III) विकसित मध्यपाषाण काल अथवा आद्य नवपाषाणकाल

यह 40 सेमी0 का जमाव लेयर (3) से (1) तक का है। इस जमाव से प्राप्त उपकरण पूर्ववर्ती उपकरणो से अपेक्षाकृत छोटे है। इस वर्ग मे सूक्ष्मकणो के चाल्सेडनी प्रकार के पत्थरो का प्रतिशत पहले की अपेक्षा बढ जाता है। अधिकाश उपकरण लघु ब्लेडो पर निर्मित है। इनके अतिरिक्त गदाशीर्ष, हथौडे भगुर हस्तनिर्मित मृद्भाण्ड तथा ज्यामितिक उपकरण यथा त्रिभुज तथा ट्राचेट भी मिलने लगते हैं।

इस काल से 13 गोलाकार/अण्डाकार झोपडियॉ तथा चार चूल्हो के प्रमाण मिले हैं। झोपडियो के फर्श पर लघु पाषाण उपकरण, निहायी, विविध आकार प्रकार के हथौडे, सिल–लोढे, गदाशीर्ष, जले हुए मिट्टी तथा खपच्ची का छाजन आदि मिले थे। तेरह झोपडियो मे से 6 गोलाकार तथा 7 अण्डाकार थे। पूर्ण उत्खनित झोपडो का औसत व्यास 3.5 मी0 था तथा अण्डाकार गर्तो की अधिकतम औसत लम्बाई 4 70 मीटर तथा छोटी भुजा की औसत माप 3 30 मीटर थी। कुछ झोपडियो के किनारो पर पत्थरो के टुकडे मिले थे तथा उनकी फर्श पर पत्थरो के टुकडे तथा लघुपाषाण उपकरण मिले थे। इसके अतिरिक्त निहायी, हथौडे, गदाशीर्ष, गोफन पत्थर, सिल–लोढे और मृदभाण्डो के टुकडे भी

मिले थे। 7 तथा 11 नम्बर के फर्शो पर दो विशालकाय निहाइयॉ मिली थी। ऐसा प्रतीत होता है कि उनके चारो ओर बैठकर कई लोग एक साथ काम करते थे, जो निहाई के पिटे हुए सतह से स्पष्ट है। एक निहाई पर पडा हुआ एक हथौडा भी मिला था।

इनके अतिरिक्त चार गोलाकार गर्त चूल्है भी मिले थे। जिनका व्यास 0 80 से 1 मी0 के लगभग था। ये लगभग 40 सेमी0 गहरे थे। इनमे राखयुक्त मिट्टी, हड्डी के टुकडे, कोयले आदि मिले थे। यह उल्लेख्य है कि चूल्हो की संख्या झोपडो के अनुपात मे कम थी। सम्भवत· कुछ चूल्हो को सामूहिक रूप से प्रयोग मे लाते थे।

इनके अतिरिक्त कुछ गोलाकार अथवा अण्डाकार सरचनाये मिली थ जिनका व्यास 70 से 30 सेमी0 के लगभग था। ये झोपडियो के निकट थे। ऐसा प्रतीत होता है कि ये सम्भवत बास तथा मिट्टी के बने सग्रह पात्रो के आधार थे।

मृदभाण्ड

विकसित मध्यपाषाणकाल अथवा आद्य नवपाषाणिक काल मे हस्तनिर्मित मृद्भाण्ड मिलने लगते है। यह अत्यन्त भगुर

है। मिट्टी भली–भॉति गुदी नही है और बर्तन भी भली–भॉति पके नहीं हैं। सम्पूर्ण मृदभाण्डो को दो वर्गो मे विभाजित किया गया है

1 लाल मृद्भाण्ड

2 खाकी अथवा धूसर मृद्भाण्ड

दोनो ही प्रकार के पात्रो पर ठप्पो के निशान मिलते है। उत्खनन से प्राप्त अन्य वस्तुओ मे जगली जले चावल तथा बास, एक प्रस्तर का बेलनाकार मनका आदि प्रमुख है।

तिथि :

पुरातात्विक आधार पर चोपनीमाण्डो की मध्यपाषाण युगीन संस्कृति को उत्खनन कर्ताओ ने 17000 से 7000 ईसा पूर्व के अन्तर्गत रखा है।

विन्ध्य क्षेत्र (उत्तर प्रदेश)

ग्रेट डेक्कन मार्ग के किनारे हनुमना (मध्य प्रदेश) से लगभग दो मील पहले भैसोर ग्राम के निकट उसके पश्चिम मे मोरहना पहाड तथा बघहीखोर शिलाश्रयो मे तथा उनके बहार और पूर्व मे लेखहिया शिलाश्रय के अन्दर तथा बाहर 1962–63 तथा 1963–64 मे क्रमशः उत्खनन किया गया।

मोरहना पहाड

मोरहना पहाड शिलाश्रय भैसोर ग्राम के पश्चिम मे सडक से लगभग पाच किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यहॉ पर शिलाश्रय न0 1 क बाहर खुले मे तथा उसके भीतर उत्खनन किया गया था। दोनो ही एक स्थलो पर एक–एक खन्तियॉ डाली गयी थी। बघहीखरे शिलाश्रय मोरहना पहाड शिलाश्रयो के पश्चिम मे लगभग एक किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। वहॉ पर भी एक शिलाश्रय मे उत्खनन किया गया था। इन तीनो स्थलो के उत्खननो का विवरण इस प्रकार है·

शिलाश्रय के बाहर उत्खनन

प्रथम खन्ती (10X5 फीट) मोरहना पहाड शिलाश्रय नम्बर 1 के पूर्व मे, शिलाश्रय के लगभग तीन मीटर की दूरी पर, खुले में डाली गयी थी। उत्खनन के फलस्वरूप तीन फीट का जमाव प्रकाश मे आया जिसे स्तरीकरण के आधार पर नीचे से ऊपर की ओर छ· विभिन्न स्तरो मे विभाजित किया गया। जो इस प्रकार है

लेयर 5A, निम्नतम जमाव है, जो आधारशिला पर आश्रित है। यह विगलित सैण्ड स्टोन से निर्मित है तथा इसकी औसत मोटाई एक इन्च से कम है। इसमे कोई भी पुरातात्विक सामग्री नही मिली।

लेयर 5, ग्रैवेल, बालू तथा सैण्डस्टोन के घर्षित टुकडो से निर्मित ललाई युक्त 9'' मोटा जमाव है। जमाव की सरचना से प्रतीत होता है। कि इसका निक्षेपण अपेक्षाकृत तीव्र आर्द्रकाल मे हुआ थ। सर्वप्रथम लघुपाषाणोपकरण इसी जमाव से मिले है। ये अज्यामितिक प्रकार के है तथा मृद्भाण्डो से सम्बन्धित नही है। उपकरण अत्यधिक रासायनिक रगाई से युक्त है। उपकरण समुदाय मे मुथडे पार्श्व ब्लेड 17 6%, अर्ध–चान्द्रिक 2 6%, शर 8 8% तथा काफी सख्या मे (70 58%) गढित अथवा प्रयोग में लाये गये फलक है।

लेयर 4 लेयर 5 के ही समान है। अन्तर मात्र इतना है कि ग्रैवे तथा सैण्ड स्टोन पहले की अपेक्षा छोटे आकार के हैं। इस निक्षेप से अज्यामितिक तथा ज्यामितिक दोनो ही प्रकार के उपकरण उपलब्ध हुये है। ज्यामितिक उपकरणो की सख्या नगण्य है तथा वे सम्पूर्ण समुदाय मे केवल 1% है। अन्य उपकरणो मे समानान्तर बाहु ब्लेड 52 60%, भुथडे पार्श्व ब्लेड 15.40%, अर्धचान्द्रिक 20%, शर 1%, त्रिभुज 2% तथा छिद्रक 3% है। इनके अतिरिक्त कोर पुनरूज्जवान फलक, तथा कोर भी प्राप्त हुये है।

लघुपाषाणोपकरणो के अतिरिक्त इस स्तर से मृदभाण्ड के भी कुछ टुकडे मिले है। मृद्भाण्ड अत्यन्तु भगुर हैं और उसमे गेरू की मात्रा अधिक है।

लेयर 3 मे ग्रैवेल और महीन हो जाते हैं, सैण्ड स्टोन नही मिलते तथा बालू की मात्रा बहुत अधिक हो जाती है। यह भूरापन लिए हुए राखी के रग का जमाव है। इसकी औसत मोटाई 6 5 इंच हैं। इस निक्षेप से सबसे अधिक सख्या मे लघुपाषाणोपकरण प्राप्त हुए हैं। उपकरण समुदाय मे समानान्तर ब्लेड 29%, भुथडे पार्श्व ब्लेड 23%, अर्ध चान्द्रिक 6%, शर 26%, त्रिभुज 2%, फलक 5% तथा कोर 9% है। मृदभाण्ड लेयर 4 के मृदभाण्डो के ही समान है।

लेयर 2 महीन बालू का वायु निर्मित जमाव है। इसकी औसत मोटाई सात इच है। इसमे ज्यामितिक उपकरणो की सख्या बढ जाती है तथा वे सभी उपकरणो के 4% है। अन्य उपकरणों मे सामानान्तर बाहु ब्लेड 22 64%, भुथडे पार्श्व ब्लेड 20.36%, अर्धचान्द्रिक 8%, शर 40%, पुनरूज्जावन फलक 2.56% तथा कोर 2 44% है। इस जमाव मे मृदभाण्ड भी अपेक्षाकृत अधिक है।

लेयर 1 अत्यन्त महीन वायु निर्मित जमाव है जिसका निक्षेपण अपेक्षाकृत शुष्क अवस्था मे हुआ था, यह राखी के रग का है तथा इसकी औसत मोटाई 5″ है। इस जमाव के नीचे के स्तर से समानान्तर ब्लेड, शर तथा त्रिभुज मिले है जो क्रमश 33%, 50% तथ 17% है। इसमे मृद्भाण्ड सम्पूर्ण सकलन का 50% है। सतह के लगभग 1′ नीचे चतुर्भुजाकार क्रास अनुभाग का एक लोहै का बाणाग्र भी प्राप्त हुआ था।

लेयर 2 तथा 1 के उपकरण इस दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण है कि वे अन्य की अपेक्षा अधिक अल्पक हो जाते हैं।

मृद्भाण्ड

लेयर (4) तथा उसके ऊपर के जमावो से मृद्भाण्ड के टुकडे मिले थे। ये अत्यन्त भगुर है तथा उनके किनारे घिसे हुए, रंग गेरूआ तथा अनुभाग भूरा है। छूने मात्र से ही ये रग छोडते हैं। लेयर 4 तथा 3 मे कोई आकार नही मिले थे। लेयर 2 मे सबसे अधिक टुकडे मिले हैं, किन्तु आकार मात्र छ टुकडो से ही बन सका। सभी जार के टुकडे प्रतीत होते हैं।

शिलाश्रय में उत्खनन (मोरहना पहाड)

मोरहना पहाड के शिलाश्रय न0 6X4 फीट की एक खन्ती का उत्खनन 1 फीट 10 इच की अधितमक गहराई तक किया गया था। इस सम्पूर्ण जमाव मे चार लेयरे मिली थी जो नीचे से ऊपर इस प्रकार थी

लेयर 4 की अधिकतम मोटाई 3" थी तथा यह ललाई मिश्रित राखी के रग का था। इसमे बाहर के खन्ती की लेयर 4 के समान अज्यामितिक तथा ज्यामितिक उपकरण मिले थे उपकरण समुदाय मे समानान्तर ब्लेड तथा भुथडे पार्श्व ब्लेड 57%, अर्धचान्द्रिक 12 60%, शर 27 14%, छिद्रक 68%, ब्यूरिन 1. 03%, कोर 14 70%, त्रिभुज 5% तथा समलम्ब चतुर्भुज 3 3% हैं। ज्यामितिक उपकरण सभी उपकरणो के 8% थे।

लघुपाषाणोपकरणो के अतिरिक्त मृदभाण्डो के गेरूए–लाल रग के अधपके, घिसे हुए, भूरे अनुभाग के टुकडे भी मिले थे। मृदभाण्डो के टुकडे केवल 14 थे तथा लघुपाषाणोपकरण 4,107 है।

लेयर 3 की औसत मोटाई 1 5 ईंच थी तथा यह भुरभुरी जली मिट्टी से निर्मित थी जो लाल–राखी–कालापन लिये

हुये था। इस लेयर से 8,255 लघुपाषाणोपकरण मिले थे। उपकरण समुदाय मे ब्लेड–समानान्तर तथा भुथडे पार्श्व 41.30%, अर्धचान्द्रिक 20 10%, शर 12.70%, कोर 7 50%, त्रिभुज 2.50% और समलम्ब चतुर्भुज 2 5% थे।

मृद्‌भाण्ड मे कोई अन्तर नही था, किन्तु उनकी सख्या पहले की अपेक्षा अधिक थी।

लेयर 2 की औसत मोटाई 3 इच थी। यह सख्त पीले मिट्‌टी से निर्मित था जिसमे पाटरी तथा कंकड के टुकडे मिश्रित थे। उपकरण समुदाय मे ब्लेड–– समानान्तर बाहु तथा भुथडे पार्श्व 45 50%, अर्धचान्द्रिक 9 40%, शर 23%, स्क्रेपर 1 19%, ब्यूरिन 2 38%, त्रिभुज 14 32%, समलम्ब चतुर्भुज 1 19% तथा कोर 2 38% थे।

मृद्‌भाण्ड मे कोई अन्तर नही था, किन्तु वे सभी उपकरणो के 10% थे।

लेयर 1 हल्के पीले लाल रग का वायु निर्मित जमाव था। इसकी मोटाई 0 25" से 1" थी। इस लेयर से

लघुपाषाणोपकरण नही मिले थे, किन्तु इससे आच्छादित एक "Pit" से अवश्य प्राप्त हुए थे।

मृद्भाण्ड पहले की ही भॉति थे। ऊपर की सतह से एक लोहै का बाणाग्र भी मिला था।

लेयर 2 तथा 1 से प्राप्त लघुपाषाणोपकरण विशेषत ज्यामितिक आकार के पहले की अपेक्षा अल्पक थे।

मोरहना पहाड के दोनो ही स्थलो पर उपकरणो का निर्माण क्वार्टज, क्रिस्टल, चर्ट, चाल्सेडनी, अगेट, कार्नेलियन आदि पत्थरो पर किया गया है किन्तु चाल्सेडनी तथा उस प्रकार के पत्थरो का उपयोग अधिक हुआ है।

बघही खोर शिलाश्रय नं0 1

बघही खोर शिलाश्रय, मोरहना पहाड के पूर्व मे लगभग एक किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यहॉ पर शिलाश्रय नम्बर 1 मे 12X6 फीट की एक खन्ती 1 फीट 10 इच की अधिकतम गहराई तक खोदी गयी थी, जिसके फलस्वरूप नीचे से ऊपर क्रमश पॉच जमाव प्रकाश मे आये। वे इस प्रकार थे

लेयर 4 की औसत मोटाई 3 5 इच थी। यह पत्थर की चिप्पियो, राख तथा राख मिश्रित मिट्टी से निर्मित थी। इस जमाव से केलव अज्यामितिक प्रकार के लघुपाषाण उपकरण मिले थे जिसमे ब्लेड – समानान्तर बाहु तथा भुथडे पार्श्व 26%, शर 23 45%, अर्धचान्द्रिक 27 16% तथा कोर 23 45% थे।

लेयर 3 महीन बालुई मिट्टी से निर्मित था। इसकी औसत मोटाई 3 इच थी तथा रंग गेरूआ मिश्रित पीला था। लेयर 2A से लेयर 3 तथा 4 को काटते हुए कब्र बनाने के लिए एक गड्ढा आधारशिला को काटकर बनाया गया था। इस लेयर से भी केवल ज्यामितिक प्रकार के लघुपाषाण उपकरण मिले थे, जिसमे समानान्तर बाहु ब्लेड 23 30%, भुथडे पार्श्व ब्लेड 31.71%, अर्धचान्द्रिक 9 75%, शर 10 85% तथा कोर 28 49% है।

इस लेयर से मृद्भाण्ड के टुकडे भी प्राप्त हुये थे।

लेयर 2A की औसत मोटाई एक इच थी। इसका निर्माण राख मिश्रित मिट्टी तथा पत्थर की चिप्पियो से हुआ था।

लेयर 2, लेयर 2A के ही समान थी अन्तर केवल इतना ही था कि यह पहले की अपेक्षा भुरभुरी थी। इस लेयर से ढका हुआ एक मानव–ककाल मिला था।

लेयर 2A तथा 2 से बहुत अधिक संख्या मे लघुपाषाण उपकरण समुदाय मे ब्लेड– समानान्तर बाहु तथा भुथडे पार्श्व– 54 77%, अर्धचान्द्रिक 14 40%, शर 14.55%, कोर 9 84%, त्रिभुज 3 28% तथा समलम्ब चतुर्भुज 85% थे।

मृद्भाण्ड पूर्ववत् ही थे, किन्तु अब वह सभी उपकरणो का 4% था।

लेयर 1 के औसत मोटाई 1 इच थी। यह नियमित सख्त गहरे रग का जमाव था। इससे प्राप्त उपकरण समुदाय मे ब्लेड– समानान्तर बाहु तथा भुथडे पार्श्व– 56 48%, अर्धचान्द्रिक 13 63%, शर 9.74%, त्रिभुज 97%, समलम्ब चतुर्भुज .64% कोर तथा पुनरूज्जावन फलक 15 66% थे।

उपकरणो के निर्माण के लिए मुख्यतया चर्ट तथा उसी प्रकार के पत्थरो का प्रयोग किया गया था। इनके अतिरिक्त चाल्सेडनी, अगेट, कार्नेलियन आदि का भी उपयोग हुआ है।

मृद्भाण्ड

लेयर 4 मे मृद्भाण्ड नही थे। लेयर 3 से लघु पाषाण उपकरणो के साथ मृद्भाण्ड भी मिले थे जिन्है अलकरण के आधार पर दो वर्गों मे विभाजित करते हैं :

प्रथम वर्ग के मृद्भाण्ड अलकृत नही है तथा द्वितीय वर्ग के मृदभाण्ड अलकृत है।

लेयर 2, 2A तथा 1 की मृद्भाण्ड मे कोई अन्तर नही है। लेयर 1 मे उपर्युक्त मृद्भाण्ड के अतिरिक्त ऊपर के स्तर से चाक पर बने मृद्भाण्ड भी मिले थे।

ऊपर की सतह को खुरचते समय दो लोहै के बाणाग्र तथा लोहै का एक टुकडा भी मिला था।

विस्तीर्ण मानव शवाधान

सतह के लगभग 12" पर लेयर 2 के नीचे एक विस्तीर्ण मानव शवाधान प्रकाश मे आया था। शवाधान गर्त को लेयर 2A से लेयर, 3 तथा 4 मे काटा गया था। गर्त को बनाने के आधार शिला को इस प्रकार से काटा गया था कि ककाल का सिर तथा पैर का भाग अपेक्षाकृत ऊँचाई पर और शरीर का भाग नीचे स्तर पर था। कंकाल का सिर पश्चिम मे और पूर्व दिशा की ओर था। कंकाल के साथ बहुत अधिक सख्या मे लघुपाषाणोपकरण मिले थे जिन्है समाधि–सामग्री के रूप मे रखा गया था। पूरा ककाल पत्थर की चिप्पियो से ढका हुआ था।

बाद के दो गर्तो ने शवाधान को क्षति पहुँचाई थी, जिसके फलस्वरूप ककाल के कपाल तथा श्रोणीय क्षेत्र का भाग टूट गया था। पुरातत्व सर्वेक्षण के आर0एन0 गुप्त ने इस ककाल का अध्ययन किया था। उनकी धारणा है कि यह 20 से 21 वर्ष की एक युवती का ककाल था, जिसकी सम्भावित लम्बाई 152 68 सेमी0 थी। इसके नीचे के भाग अधिक पुष्ट थे।

उपर्युक्त उत्खननो से निम्नलिखित तथ्य प्रकाश मे आए

1 प्रथम अवस्था मे अज्यामितिक उपकरणो का विकास हुआ जो मृद्भाण्ड से सम्बन्धित नही थे।

2 दूसरी अवस्था मे ज्यामितिक उपकरणो का विकास होता है, किन्तु उनकी सख्या सीमित है। मृद्भाण्डो का प्रचलन अभी भी नही होता।

3 तीसरी अवस्था मे हस्तनिर्मित मृद्भाण्ड का प्रयोग होने लगता है।

4 चौथी अवस्था मे उपकरणो का आकार पहले से अधिक छोटा हो जाता है।

लेखहिया उत्खनन

लेखहिया शिलाश्रय भैसोर ग्राम के पूर्व में लगभग तीन किलो मीटर की दूरी पर स्थित है। यहॉ पर अगले वर्ष मोरहना

पहाड तथा बघहीखोर उत्खननो के परिणामो की पुष्टि के लिए शिलाश्रयों के निकट तथा शिलाश्रय न0 1 तथा 2 का उत्खनन किया गया।

शिलाश्रय के बाहर का उत्खनन

लेखहिया शिलाश्रय न0 1 के दक्षिण दो खन्तियो का तीन फीट की अधिकतम गहराई तक किया गया। प्रत्येक खन्ती 20 फीट लम्बी तथा 10 फीट चौडी थी। उत्खनन के फलस्वरूप जो जमाव प्रकाश में आये उन्है रग तथा सरचना के आधार पर नौ लेयरो मे विभाजित किया गया है। ये जमाव विगलित आधार शिला के ऊपर थे। आधारशिला का अपने स्थान पर (in-situ) विगलन, जमाव मे घर्षित प्रस्तर–पिण्डो तथा लैटेराइट के छर्रो का आधिक्य इस बात की ओर निर्देश करता है कि लेयर 9 तथा 8 की सरचना तीव्र जलवायु–गर्म से आर्द्र–के उतार–चढाव के फलस्वरूप हुआ था।

लेयर 7 तथा 6 की सरचना के आधार पर कहा जा सकता है कि जिस समय इनका निर्माण हुआ था उस समय जलवायु पहले की अपेक्षा कम तीव्र थी।

लेयर 5 की सरचना पूर्ववर्ती लेयर 9 से 6 तथा परतर्वी लेयर 4 से 1 के सक्राति काल का निर्देश करता है।

लेयर 4 से लेयर 1 का जमाव बढती हुई शुष्कता के फलस्वरूप हुआ था।

उपर्युक्त विभिन्न जमावो से प्राप्त पुरातात्विक सामग्री मोरहना पहाड तथा बघहीखोर की सामग्री के ही समान थी। लेयर 8 तथा 7 से अज्यामितिक प्रकार के उपकरण प्राप्त हुये थे। उपकरण समुदाय मे समानान्तर बाहु ब्लेड, भुथडे, शर, अर्ध चान्द्रिक, स्क्रेपर तथा कोर थे। इनके अतिरिक्त काफी सख्या मे अवशिष्ट फलक भी प्राप्त हुए थे

लेयर 6 तथा 5 मे उपर्युक्त उपकरणो के अतिरिक्त त्रिभुज भी मिले थे। समलम्ब चतुभुर्ज नही मिले और पाटरी का भी नितान्त अभाव था। इसका तात्पर्य है कि ज्यामितिक आकारो में त्रिभुज का प्रयोग समलम्ब चतुभुर्ज के पहले होता था तथा पाटरी का प्रयोग ज्यामितिक आकारो के प्रयोग के बाद आरम्भ होता है।

लेयर 4 से 1 मे ज्यामितिक तथा अज्यामितिक दोनो ही प्रकार के उपकरण मिले थे। लेखहिया की अन्य खन्तियो से भी इसी प्रकार की सामग्री उपलब्ध हुई थी। एक खन्ती (LKH-II-B)

मे सबसे नीचे की स्तर से अपेक्षाकृत लम्बे तथा चौडे ब्लेड मिले थे जो उच्च पूर्वपाषाणिक परम्परा के ब्लेडो के सन्निकट है।

लेखहिया शिलाश्रय 1 का उत्खनन

लेखहिया शिलाश्रय 1 मे 17X8 फीट की एक खन्ती का उत्खनन 1 फीट 5 इच की अधिकतम गहराई तक किया गया था। इस खन्ती के उत्खनन के फलस्वरूप 17 ककाल प्रकाश मे आए। इनमे से प्रत्येक विस्तीर्ण शवाधान थे। इनके साथ बहुत अधिक सख्या मे लघुपाषाणोपकरण प्राप्त हुए थे। स्तरीकरण के आधार पर चौदह ककालो को आठ काल खण्डो मे विभाजित किया गया है .

सभी ककालों का, ककाल न0 II तथा XII को छोडकर, सिर पश्चिम की ओर तथा पैर पूर्व की ओर था। ककाल नं0 II का सिर दक्षिण तथा XII का उत्तर की ओर था। कंकालों के अस्थि परीक्षण के उपरात ज्ञात हुआ कि उनमे से दस ककाल पुरूष के तथा तीन ककाल स्त्री के थे । यहॉ के ककालो के अस्थि अवशेषो का अस्थिपरीक्षण लूकास (J.R. Luckas) ने किया था। उनकी धारणा है कि चौदह ककालो के अतिरिक्त और भी ककाल थे जिनकी आशिक अस्थियॉ मिली थी। आशिक

अस्थियो के आधार पर यह अनुमान किया जा सकता है कि यहॉ पर कम से कम 27 मानव शवाधान रहै होगे।

कंकालो के साथ कुछ पशुओ की हड्डियॉ जैसे हिरन के सीग तथा एक घोघा तथा भैस की पसली भी मिली है। लघुपाषाणोपकरणो के साथ गेरू तथा घिसे हुए लैटेराइट की छर्रियॉ भी मिली थी जिनका उपयोग सम्भवत रग बनाने के लिए किया गया होगा।

लेखहिया से दो कार्बन तिथियॉ उपलब्ध थी जो क्रमश निम्न है

TF 419 - 2410±115 ईसा पूर्व

TF 417 - 1710±910 ईसा पूर्व

इनके अतिरिक्त दो कार्बन तिथियॉ और हाल मे उपलब्ध हुई है :

GX-20983-AMS---8,370±75

GX-20984-AMS---8,000±75

महगड़ा ($24^0$54'50'' उ0; $82^0$3'30'' पू0)

महगडा इलाहाबाद की मेजा तहसील मे इलाहाबाद से 85 किमी० की दूरी पर, नवीन तथा बूढी बेलन के सगम के पश्चिम मे कोलडिहवा के सामने, नई बेलन धारा के बाये तट पर स्थित है। चोपनीमाण्डो से यह दक्षिण पश्चिम दिशा मे 3 किमी० की दूरी पर है।

महगडा पुरास्थल लगभग अण्डाकार है, तथा इसका क्षेत्र विस्तार लगभग 8000 वर्गफीट है। इसके दक्षिण–पूर्व मे बूढी बेलन तथा दक्षिण पश्चिम मे नई धारा है। इसके अतिरिक्त सभी दिशाओ मे यह एक प्राकृतिक कटक से सुरक्षित है।

यह पुरास्थल 1975–76 मे प्रकाश मे आया था। 1976 से 1978 तक यहॉ पर क्षैतिज उत्खनन किया गया। जिससे यहॉ की नवपाषाणिक सस्कृति पर समुचित प्रकाश पडता है। यह उल्लेख्य है कि महगडा एकाकी सास्कृतिक स्थल है। इसका सास्कृतिक जमाव 2 60 मी० था।

नवपाषाणिक काल मे यहॉ के लोग गोलाकार अथवा अण्डाकार झोपडियो मे रहते थे। जिनका व्यास 4 30 से 6 40 मी० होता था। झोपडियो के फर्श के किनारे–किनारे स्तम्भगर्त मिले हैं, जिससे अनुमान किया जाता है कि स्तम्भों के ऊपर सरकण्डो तथा घासफूस से छाजन बनाते थे। छाजन के नीचे के भाग में भी

स्तम्भ गर्त मिले है। दीवाले भी टट्टर से बनायी जाती थी। खपच्ची, सरकण्डे तथा घासफूस लगाकार उस पर मिट्टी से दोनो ओर प्लास्टर करते थे। दो या तीन झोपडियो के समूह एक पास मिलते है। इनमे से प्राय एक झोपडी रहने के लिए तथा अन्य भोजन बनाने अथवा अन्य कार्यो के लिए प्रयुक्त होती थी। झोपडो के फर्श पर मृद्भाण्ड, पशुओ की हडियॉ, सिल—लोढे, लघुपाषाणोपकरण तथा कुल्हाडियॉ आदि मिले है।

ये अपने उपकरणो के निर्माण के लिए बसाल्ट, ग्रेनाइट तथा क्वर्ट्जाइट का उपयोग करते थे। इनकी कुल्हाडियॉ छोटी, गोलाकार, समान्तर, आयताकार अथवा प्रलम्ब अण्डाकार अनुभाग की पूर्णतया ओपदार होती थी। यह उल्लेख्य है कि आवासीय क्षेत्र मे कोई उद्योग स्थ्ल नही प्राप्त हुआ है। दक्षिण भारत के त्रिकोणात्मक प्रकार की कुल्हाडी उत्खनन मे प्राप्त नही हुई। इनके अतिरिक्त सिल—लोढे, हथौडा—पत्थर तथा पूर्ण निर्मित उपकरणो यथा समानान्तर द्विबाहु ब्लेड, भुथडे पार्श्वब्लेड, दन्तुरित ब्लेड, तिरछा पार्श्वान्त ब्लेड, शर, बेधक, स्क्रेपर, त्रिकोण, समलम्ब चतुर्भुज, अर्धचान्द्रिक तथा ट्राचेट आदि मिले है। इनके अतिरिक्त लघुपाषाणोपकरण जिनमे उपकरणो के अतिरिक्त ब्लेड, कोर तथा अनुपयोजित प्रस्तर सामग्री भी प्राप्त हुई है। इनके निर्माण के लिए

चाल्सेडनी, चर्ट, अग्रेट, कार्नेलियन, क्वार्ट्ज तथा क्रिस्टल आदि का उपयोग किया गया था। इनके अतिरिक्त चार एकल–स्कधित हड्डी के शर, मिट्टी के छिद्रयुक्त चकरी, गोलाकार मिट्टी की गुरियॉ, छिद्रयुक्त सीपी की लटकन आदि महगडास से मिले है।

इनकी अर्थव्यवस्था कृषि, पशुपालन तथा आखेट पर आश्रित थी। धान के प्रमाण मृद्भाण्डो के सालन मे तथा कार्वनीकृत रूप मे मिले है। चावल ही इनका प्रमुख भोज्य था। विष्णुमित्रे तथा ते–जू–चाग ने इनका परीक्षण किया था। इनके अध्ययन के आधार पर यहॉ से प्राप्त धान ओरिजा सतीवा प्रकार का था। तिथि क्रम के आधार पर इसे चावल के खेती का प्राचीनतम प्रमाण कहा जा सकता है। यह वेवीलाव की इस धारणा की भी पुष्टि करता है कि भारत चावल की जन्मस्थली हो सकती है।

उत्खनन मे बेर की गुठलियॉ भी प्राप्त हुई है। जिनका उपयोग खाद्य सामग्री के रूप मे होता होगा।

खाद्यान्न इनकी अर्थव्यवस्था मे अहम् भूमिका का निर्वहन करते थे। इसकी पुष्टि यहॉ से प्राप्त सिल लोढे तथा सग्रहोपयोगी पात्रो से किया जा सकता है। बेलन का कछार धार की खेती के लिए बहुत उपयुक्त रहा होगा।

तालिका – 5

जौनपुर जनपद के सर्वेक्षित स्थलों की सूची

क्रम संख्या	स्थलों का नाम
1	बसहरा
2	भटपुरा
3	दमनपुर
4	धनी का पूरा
5	गजाधर पुर
6	केथोरा
7	केयोटली खुर्द
8	लोहिना
9	नचरौला
10	नगौली
11	पहितियापुर
12	पूरेगगामनी
13	पूरे गम्भीर शाह
14	शिवनगर

आखेट का महत्व इनकी अर्थव्यवस्था मे यथेष्ट था। मवेशियो, भेड, बकरी, घोडे, हिरन, जगली सुअर, कछुआ, मछली तथा चिडियो की हड्डियॉ समुचित मात्रा मे मिली है। इन पशुओ की हड्डियो मे पालतू तथा जगली दोनो प्रकार के पशु मिश्रित रूप से मिलते है।

जौनपुर जनपद के सर्वेक्षित महत्त्वपूर्ण पुरातात्त्विक स्थल

जौनपुर जनपद पुरातात्त्विक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है और अब तक सर्वेक्षणों से अनेक महत्त्वपूर्ण स्थल प्रकाश मे आए हैं लेकिन अभी तक किसी भी स्थल का उत्खनन नही किया जा सका है। सर्वेक्षित महत्त्वपूर्ण स्थलो का विवरण निम्नवत् है :—

प्रमुख पुरातात्त्विक स्थल[12]

बजरा—टीकर [13]

बजरा टीकर वाराणसी से जौनपुर जाने वाली रेलवे लाइन तथा सडक पर रास्ते मे स्थित जलालगज स्टेशन तथा जलालपुर चौमुहानी से लगभग तीन मील दूर पश्चिम ओर उत्तर के कोने पर मडियाहूँ से केराकत जाने वाली पक्की सडक पर, पुर्रेव गाव एव बाजार से लगभग एक फर्लाग पूर्व की ओर सई नदी के दाहिने किनारे पर स्थित है। इस स्थान तक पहुंचने के लिए जलालगज

स्टेशन एव जलालपुर चौमुहानी से टैक्सी, कार एव इक्के, रिक्शे, तागे की सुविधा है। यद्यपि इस स्थान तक पहुचने के लिए नदी के रास्ते से नावे ज्यादा सुविधाजनक है।

प्रस्तुत टीला एक वर्गमील क्षेत्र मे फैला हुआ है। यह टीला जमीन की सतह से काफी ऊँचा है। इसका सबसे ऊँचा स्थान लगभग 60 फीट है। आजकल टीले का अधिकाश क्षेत्र कृषि कार्य के अन्तर्गत आ गया है, किन्तु आज भी टीले का प्रमुख भाग उसी रूप मे विद्यमान है।

जौनपुर गजेटियर के आधार पर यह सम्भावना व्यक्त की जा सकती है कि 'करारबीर' एक शक्तिशाली राजा था जिसका अधिकार जौनपुर के सम्पूर्ण क्षेत्र पर रहा होगा। सम्भव है कि बजरा–टीकर पर भी इसका अधिकार रहा हो। इसके आतक के बढ जाने के कारण श्री रामचन्द्र जी ने इस पर आक्रमण करके इसे विनष्ट कर दिया। तत्पश्चात् वे अयोध्या लौट आये। रामचन्द्र जी के लौट आने के बाद इन क्षेत्रो का किसका अधिकार रहा इस विषय मे ऐतिहासिक साक्ष्य मौन है। अतएव साक्ष्य के अभाव मे निश्चित रूप से कुछ भी नही कहा जा सकता।

बजरा–टीकर के विषय में अनेक जनश्रुतियां हैं। इनके अनुसार इस पर भरो एव सोइरियो का अधिकार था। आज भी बलिया, बगाल, शाहाबाद आदि स्थानो मे सोइरी लोग निवास करते

हैं, जो अपने को सूर्यवशी क्षत्रिय कहते है। इनके विषय मे साक्ष्य नही मिलता, अत निश्चित रूप से कुछ भी कहना कठिन है। फिरोजशाह तुगलक के पूर्व जौनपुर का इतिहास नही मिलता है। इसका मूल कारण यह है कि जौनपुर एव उसके निकटवर्ती स्थान मिर्जापुर एव बनारस मे उस समय भरो एव सोइरियो को अधिकार था।

जौनपुर गजेटियर का लेखक लिखता है कि "सर्वप्रथम जौनपुर पर सोइरी और भर जाति का राज्य था। सोइरियों का दुर्ग चन्दवक मे था तथा बनारस की सीमा तक उनका अधिकार था। चन्दवक मे इस समय थी एक बडा भीटा दीख पडता है। भर जाति जौनपुर मे अधिक सख्या मे आबाद थी। अन्त मे मुसलमान एव राजपूतो ने नष्ट कर दिया। भरो का भिन्न–भिन्न स्थानो पर व्यवस्थित रूप से अधिकार था। इन भरो के भिन्न–भिन्न दुर्ग भी थे। एक बडा दुर्ग सुल्तानपुर मे था। कन्नौज के राजपूतो के शासनकाल मे छोटी–छोटी जातियां भर, मुसहर तथा सोइरी मिर्जापुर के दक्षिणी भाग तथा इसके निकट अपना अधिकार जमाये हुए थी। ये लोग बुन्देलखण्ड और बनारस के निकट के रहने वाले थे। कुछ बनारस का भी भू–भाग अधिकार मे कर लिया था और भिन्न–भिन्न स्थानो पर गढी तथा कोट बनाकर प्रशासन करना प्रारम्भ कर दिया था।"

जौनपुर गजेटियर[14] के लेखक का कहना है कि सोइरी और भर जातियो का चन्दवक से बनारस की सीमा तक अधिकार था। जौनपुर और बनारस की सीमा पर बजरा–टीकर स्थित है। अत. यह सम्भावना व्यक्त की जा सकती है कि इस स्थान पर भी भरो एव सोइरी जातियो की गढी या कोट रहा होगा। जनश्रुतिया भी इस बात का समर्थन करती है।

श्री वाकर तथा कुछ अन्य इतिहासकारो ने जौनपुर पर महमूद गजनवी के आक्रमण के विषय मे इस प्रकार उल्लेख किया है–[15]

1017 ई0 मे जब महमूद गजनवी ने जौनपुर एव बनारस पर आक्रमण किया, उस समय यहाँ पर भरो एवं सोइरियो का अधिकार था। जब कन्नौज के राजपूतो को मुसलमानो ने पराजित किया ता, उन्होने क्रमश. उनको निकाल कर अपना शासन बारहवी–तेरहवी और चौदहवी शताब्दी में स्थापित किया, परन्तु इसमे भी देहली के बादशाहो ने हस्तक्षेप किया। मुहम्मद बिन–साम ने 'मझ' नाम स्थापन पर राजपूतो पर आक्रमण किया और जयचन्द्र को पराजित किया। परन्तु उसने जयचन्द्र के खजाने को ही पर्याप्त समझा। उसने इस आक्रमण के बीच बनारस के बहुत से मन्दिरों को तोडा और सम्भवत जौनपुर, जफराबाद, बजरा–टीकर एव कोठवा के मन्दिरो को भी नही छोडा।

उपर्युक्त कथन के आधार पर यह सम्भावना व्यक्त की जा सकती है। कि बजरा–टीकर पर अधिकार किये हुए सोइरी एव भर जातियो को पराजित करके गाहडवाल–नरेश जयचन्द्र ने इस पर अपना अधिकार कर लिया होगा। जनश्रुतियो से भी यह ज्ञात होता है कि यह स्थल जयचन्द्र के समय कोट गढी या बाजार था।

जौनपुर जिले मे स्थित मछलीशहर तहसील से हरिश्चन्द्र का 1198 ई0 का एक अभिलेख प्राप्त हुआ है, जिस पर उपाधियॉ अकित है, ये उपाधियॉ उसकी स्वतत्र सत्ता की परिचायक हैं।[16] इसका समर्थन 1197 ई0 के राणक श्री विजय कर्ण के मिर्जापुर जिले के बेलखरा स्तम्भ से भी होता है। इससे ज्ञात होता है कि मिर्जापुर, वाराणसी तथा जौनपुर के क्षेत्र पर हरिश्चन्द्र का 1197–98 ई0 तक अधिकार था। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि जौनपुर पर गाहडवालो का अधिकार था।

शहाबुद्दीन गौरी के सम्बन्ध मे श्री ए0सी0 वाकर का यह कथन है कि उसने जफराबाद के पश्चात् जौनपुर मे मन्दिरो को तोडा। इसकी सत्यता स्वीकार की जा सकती है, यदि किसी ग्रन्थ मे जफराबाद के पश्चात् जौनपुर मे आगमन का वर्णन मिले। किन्तु विशेष छान–बीन के बाद भी यह ज्ञात नही होता कि यहॉ पर मन्दिर थे या नही। इसमे सन्देह नही है कि जफराबाद मे

जयचन्द्र आदि के मन्दिर, भवन और कोटे थी जिनके तोड–फोड के सम्बन्ध मे गौरी के प्रति आरोप लगाया जाता है।

श्री राघव जी ने 1962 ई0 मे जौनपुर–जनपद के पुरातात्विक सर्वेक्षण मे बजरा–टीकर से एक शालमजिला की मूर्ति प्राप्त की थी। उन्होने इसे भग्न मन्दिर का अवशेष माना है। उन्होने इसकी तिथि ग्यारहवी, बारहवी शताब्दी मे निश्चित की है। इस मूर्ति से दो बाते प्रगट होती है। प्रथम तो यह कि बजरा–टीकर पर जयचन्द्र का कोई मन्दिर रहा होगा जिसे शहाबुद्दीन गौरी ने जफराबाद पर आक्रमण कर वहॉ के मन्दिरो को तोडने के पश्चात् नष्ट किया होगा। दूसरी सम्भावना यह हो सकती है कि यह कही अन्यत्र से यहॉ लाया होगा। गाहडवालो के शासन के बाद इस पर मुसलमानो का अधिकार रहा होगा। सभी सुझाव अनुमान पर आधारित है। अत ठोस पुरातात्विक साक्ष्यो के अभाव मे संदेह व्यक्त किया जा सकता है।

प्राप्त–सामग्री

इस स्थल से प्राप्त मृद्भाण्डो के आधार पर इस टीले की प्राचीनता के विषय मे हम कुछ अनुमान कर सकते है। यहॉ के सर्वेक्षण मे धरातल के ऊपरी सतह पर पर्याप्त मात्रा मे बिखरे हुए मृद्भाण्डो के अवशेष प्राप्त हुए हैं। इन्हे हम दो भागो में विभाजित

कर सकते हैं। प्रथम भाग मे वे मृद्भाण्ड आते है। जिनसे तिथि–क्रम–निर्धारित करने मे कोई सहयोग प्राप्त नही होता। दूसरे भाग के आधार पर तिथिक्रम–निर्धारण किया जा सकता है।

उपर्युक्त स्थान से प्राप्त पात्रो को पाच भागो मे विभक्त किया जा सकता है। गेरूओ रग, उत्तरी काली चमक वाले बर्तन तथा लाल रग के बर्तन एव काले लाल रग वाले बर्तन। इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है –

(1) गेरूए रंग के मृद्भाण्ड

इस स्थान से एक कटोरे का पेदा मिला है, जिसकी मिट्टी मध्यम प्रकार की है। इसका रग गेरूओ है। सम्भवत यह चाक द्वारा बनाया गया है। यह अन्य प्रकार के पात्रों से अलग दृष्टिगोचर होता है। यहॉ से प्राप्त कुछ मृदभाण्डो समीकरण हस्तिनापुर के उत्खनन मे सबसे निचले स्तर के मृद्भाण्डो से किया जा सकता है। प्रो0 बी0बी0 लाल ने इसे गेरूए रग का बर्तन माना है। किन्तु अन्य पुरातत्वविद् इन मृद्भाण्डो को गेरूए रग का मृद्भाण्ड नही मानते है। उत्तर प्रदेश मे राजपुर परसू (जिला बिजनौर), विसौली (बदायू), राजघाट (वाराणसी), आदि स्थानो के उत्खनन मे भी इसी प्रकार के बर्तन मिलते है। बजरा–टीकर से प्राप्त टुकडा कटोरे की आकृति का है। अत सदेह के साथ इनका

समीकरण गगा घाटी से प्राप्त गेरूए रग के बर्तनो से किया जा सकता है। इसके काल के निर्धारण मे सूक्ष्म उत्खनन द्वारा ही प्रकाश डाला जा सकता है।

(2) धूसर मृद्भाण्ड

इस स्थान से कुछ ऐसे मृद्भाण्ड प्राप्त हुए है जो चित्रित नही है। इनके निर्माण मे प्रयुक्त मिट्टी उच्च एव मध्यम दोनो श्रेणियो की है। मृद्भाण्डो की मोटाई मे भी अन्तर दिखायी देता है। कुछ अत्यधिक पतले प्रकार के हैं तथा कुछ अपेक्षाकृत मोटे प्रकार के है। इन पर भूरे रग की पालिस की गयी है। ये छोटे एव बडे दोनो प्रकार के है। इनके प्रकारो मे प्रमुख रूप से थाली एव कटोरे ही है।

(3) उत्तरीकाली चमक वाले मृद्भाण्ड

(एन0बी0पी0डब्ल्यू0) इस प्रकार के मृद्भाण्ड अत्यधिक सख्या मे प्राप्त हुए हैं। इन मृद्भाण्डो पर काली पालिस की गयी है। इनके दो उप प्रकार है –

(अ) इनमे अच्छी मिट्टी का प्रयोग किया गया है। इनकी मोटाई कम है। पालिस का प्रयोग अच्छी तरह किया गया है जिसके कारण इनमे चमक काफी अधिक है। इस प्रकार के मृद्भाण्ड सम्भवत अमीर लोग प्रयोग मे लाते रहे होगे।

(ब) इनमे प्रयुक्त मिट्टी मध्यम श्रेणी की ही है। मोटाई की मात्रा भी अधिक है। पालिश उतनी अधिक स्वच्छ एव चमकीली नही है। इस प्रकार के मृद्भाण्ड सम्भवत निम्नवर्ग के लोग प्रयोग मे लाते रहे होगे।

वस्तुत यह सम्भावना व्यक्त की जा सकती है कि दोनो प्रकार दो विभिन्न स्तरो की सूचना देते है। इन दोनो प्रकार के बर्तनो के निर्माण की शैली में कोई विशेष अन्तर दृष्टिगोचर नही होता है।

कटोरे – यहॉ से प्राप्त कटोरो का समीकरण राजघाट एव कौशाम्बी से प्राप्त कटोरो से किया जा सकता है।

थाली – आकार एवं बनावट के आधार पर इसके भी कई आकार किये जा सकते हैं।

लाल एवं काले रंगों से युक्त मृद्भाण्ड

कुछ मृद्भाण्डो के ऊपरी भाग मे लाल रग का प्रयोग किया गया है और निचले भाग मे काले रग का प्रयोग किया गया है। कभी–कभी क्रम इसके विपरीत दृष्टिगोचर होता है। इसके अलावा कभी–कभी बाहर एव भीतर की ओर भी ऐसा देखने को मिलता है। यह वास्तव मे काली चमक वाले उद्योग का ही

विकसित प्रारूप है। इनमें कटोरे एवं थालियां ही आती हैं जिनका आकार भिन्न–भिन्न है।

लाल रंग के मृद्भाण्ड

बटरा टीकर के ऊपरी धरातल से बहुत से लाल मिट्टी के मृद्भाण्डों के अवशेष प्राप्त हुए हैं, जिन्हें तीन उप प्रकारों में विभक्त किया जा सकता है।

उप प्रकार नं0 1 –

इसके अन्तर्गत वे पात्र आते हैं, जिन्हें पुरातत्वविदों ने उत्तरीकाली चमक वाले बर्तनों के साथ रखा है।

उप प्रकार नं0 2 –

ये उप प्रकार सम्भवतः बाद के प्रतीत होते हैं। जिनका समीकरण हड़प्पा एवं हस्तिनापुर के खुदायियों से प्राप्त मृद्भाण्डों से किया जा सकता है।

उप प्रकार नं0 3 –

इस श्रेणी के पात्र बहुत मोटे, भद्दे, बड़े एवं कुरूप हैं, सम्भवतः निर्माण के मिट्टी में भूसी का मिश्रण किया गया होगा, जिससे मिट्टी में कड़ापन आ जाय।

अन्य प्राप्त सामग्रियां –

(1) बजरा टीकर से कुछ ईटे भी मिली है जिसकी माप अधोलिखित है –

लम्बाई – 16 सेटीमीटर।

चौडाई – 11 सेटीमीटर

मोटाई – 4 सेटीमीटर।

यह हाथ से पाथा गया है। सम्भव है कि उस समय साचे का प्रयोग न होता रहा होगा। कुछ ऐसी ईटे भी मिली है जिन पर सम्भवत स्त्री का अकन खडी मुद्रा मे किया गया है। जो वस्त्र एव आभूषण से युक्त है। उस पर फूल–पत्ती की डिजाइने भी बनी हुई हैं।

(2) अन्नागार –

बजरा टीकर से कुछ ऐसे मृद्भाण्डों के अवशेष मिले हैं, जो हल्के एव लाल रग के हैं। इनका आकार बडा है। इनके किनारे के भाग काफी मोटे हैं। यह सम्भवत हाथ से बनाया जाता रहा होगा। यह अनाज तथा पानी रखने के प्रयोग मे लाया जाता रहा होगा।

(3) मिट्टी का बट्टा –

मिट्टी का एक लाल रग का बेलनाकार ऐसा अवशेष मिला है, जिसका उपयोग सम्भवत शील पर बट्टे के रूप मे किसी वस्तु को मलने के उपयोग मे किया जाता रहा होगा। इसे निम्न वर्ग के लोग प्रयोग मे लाते रहे होगे।

(4) मिट्टी के डिस्क (तस्तरी) –

बजरा टीकर से चार प्रकार की मिट्टी के डिस्क मिले हैं।

(क) यह वृत्ताकार लाल रग का है। इसके किनारे पर नख अलकरण किया गया है। इसके मध्य मे छेद है। इसका व्यास 6 सेमी0ण मोटाई 1 46 सेमी0 तथा वजन 77 06 ग्राम है। इसका समीकरण प्रहलादपुर, हस्तिनापुर, राजघाट आदि स्थानो से प्राप्त डिस्को से किया जा सकता है। सम्भवत यह बच्चो के खेलने के लिए गाडी के पहिए के रूप मे प्रयुक्त होता रहा होगा।

(ख) यह लाल रग का मिट्टी का गोलाकार है। इसके किनारे पर रेखाओ का अकन है। इसका व्यास 4 4 सेमी0, मोटाई 1 35 सेमी0 तथा वजन 31 180 ग्राम है। इसके बीच मे सूर्य प्रतीक बना हुआ है। जिससे इसका धार्मिक महत्व स्पष्ट होता है।

(ग) यह मिट्टी का वृत्ताकार लाल रग का है। इसके किनारे पर दोनो तरफ नख–अलकरण किया गया है इसके एक तरफ सूर्य प्रतीक तथा दूसरे तरफ स्वास्तिक निशान बने हुए है। इसका धार्मिक महत्व रहा होगा। इसका व्यास 4 सेमी0, मोटाई 0 98 सेमी0 तथा वजन 22 260 ग्राम है।

(घ) यह वृत्ताकार भूरे रग का मिट्टी का है। इसके किनारे एव बीच के दोनो तरफ नख–अलकरण है। इसका व्यास 3 सेमी0, चौडाई 0.93 सेमी0, वजन 12 307 ग्राम है। उपर्युक्त चारो प्रकार के डिस्क राजघाट, हस्तिनापुर, प्रहलादपुर आदि स्थानो से उत्तरीकाली चमक वाले मृद्भाण्डो के साथ मिलते हैं। इसकी तिथि 600 ई0 पू0 मानी जाती है।

तिथि–क्रम–निर्धारण

किसी भी प्राचीन ऐतिहासिक स्थल के तिथिक्रम–निर्धारण कराने मे दो बाते प्रमुख रूप से सहायता प्रदान करती है। प्रथम स्तर रचना, द्वितीय प्राप्त सामग्रियो के आकार–प्रकार एव स्वभाव आदि। बजरा टीकर का उत्खनन नही हुआ है। इसलिए स्तर रचना नही ज्ञात है। प्राप्त सामग्री के आधार पर अन्य स्थानो के वैज्ञानिक उत्खनन द्वारा निर्धारित क्रम के

आधार पर प्रस्तुत स्थान तिथि–क्रम सामान्य रूप से तीन कालो मे विभक्त किया जा सकता है।

प्रथम काल –

इस निवास के तिथि–क्रम के निर्धारित करने के लिए हमारे पास कोई ठोस प्रमाण उपलब्ध नही है। वस्तुत अपरिचित रूप से कुछ ऐसे साक्ष्य उपस्थित किये जा सकते है। जो उत्तरी काली चमक वाले पात्रो से पूर्व के एक निवास की परिकल्पना करने के लिए हमे प्रेरित करते हैं। गगा घाटी मे उत्तरी काली चमक वाले मृद्भाण्डो के साथ माइक्रोलिथ किसी भी स्थान से प्राप्त नही हुए है। दूसरे कुछ भूरे रग वाले पात्रो के साथ किया जा सकता है। साथ ही साथ कथित गेरूए रग के पात्रो से कुछ टुकडे हमे स्थान की प्राचीनता सिद्ध करने मे सहयोग प्रदान करते हैं। वस्तुत इस स्थल पर निवास की प्राचीनता का कोई निश्चित तिथि–निर्धारित करना सम्भव नही है। मात्र यह सम्भावना व्यक्त की जा सकती है कि यह निवास उत्तरी काली चमक वाले पात्रो से पहले का था। प्राप्त मृद्भाण्ड उत्तरी काली चमक वाले पात्रो से पूर्व के हैं तो इनका तिथ्याकन हम लगभग 800–700 ई0 पूर्व के बीच रख सकते हैं।

द्वितीय काल –

इस काल का प्रतिनिधित्व उत्तरी काली चमक वाले मृद्भाण्ड करते है। इनकी तिथि सामान्यतया 600 ई0 पूर्व से 200 ई0 पूर्व तक मानी जाती है। इसका समर्थन जौनपुर से प्राप्त आहत सिक्के भी करते है। डॉ0 परमेश्वरी लाल गुप्त को जौनुपर से आहत सिक्के एक अन्य व्यापारी द्वारा प्राप्त हुए है। इनके मतानुसार ये आहत सिक्के मौर्यो के पहले से चले आ रहे है। आहत सिक्को की तिथि 1000 ई0 पूर्व से 245 ई0 पूर्व तक विभिन्न विद्वानो के अनुसार है। किन्तु सामान्यतया 400–300 ई0 पूर्व सर्वमान्य तिथि मानी जाती है। आहत सिक्के तथा उत्तरी काली चमक वाले मृद्भाण्ड साथ ही साथ मिलते हैं। अतः तिथि भी समान होगी।

तृतीय काल –

इस काल का प्रतिनिधित्व लाल रग के मिट्टी के मृद्भाण्ड करते है। सम्भवत ये उत्तरी काली चमक वाले पात्रो के बाद के हैं। अत इस काल का तिथि–क्रम 200 से 100 ई0पू0 के बाद तक माना जा सकता है।

कोठवाँ –

कोठवॉ गॉव जलालपुर रेलवे स्टेशन से दो मील पूर्व और दक्षिण की ओर मडियाहूँ से केराकत जाने वाली पक्की सडक

के दाहिनी ओर सडक से लगभग चार फर्लांग दूर हटकर कच्ची सडक पर स्थित है।, इस गॉव मे पश्चिम की ओर आबादी से अलग एक टीला–स्थित है, जिसे लोग कोट कहते है। और वह ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसी कोट के परिणाम स्वरूप गॉव का नामकरण बाद मे कोठवॉ पडा, जिसे वर्तमान समय मे भी कोठवॉ कहा जाता है।

इस समय टीले की ऊँचाई लगभग 53 फीट है, उसको देखने से ऐसा ज्ञात होता कि इस स्थान पर पहले कोई विशाल इमारत थी। इस समय 449x209 फीट क्षेत्र घेरे हुए है। प्रस्तुत इमारत का मुख्य द्वार पूर्व दिशा मे आधुनिक गाव की ओर था। यह तथ्य जनश्रुति के आधार पर आधारित है। इसके बाहरी रूप के विषय मे और कुछ नही कहा जा सकता, अतिरिक्त इसके कि प्रस्तुत टीला चारो ओर की एक गहरी खाई से घिरा है, जिसका उल्लेख यथास्थान किया जायेगा।

जनश्रुति के अनुसार इस गाव का प्राचीन नाम मथुरापुर था, बाद मे प्रस्तुत कोट के कारण इसका नाम कोठवॉ पडा। सामान्य जनता के अनुसार यहा पहले सोइरी जाति के लोग रहते थे जो बहुत ही समृद्ध एव शक्तिशाली थे। ये समकालीन राजपूतों पर हावी थे। बाद मे राजपूतो ने छल–छद्म द्वारा सोइरियो को भगाकर स्वय यहा के मालिक बन बैठे और पुन.

मुसलमानो ने राजपूतो को हराकर नये भवन का निर्माण कराया जिनके ध्वसावशेष आज विद्यमान है। मुसलमानो के आक्रमण के समय की कथा कुछ व्यवस्थित रूप मे मिलती है। जनश्रुति के अनुसार राजपूतो के समय मे यह स्थान काशी के राजा की सार्वभौमिक सत्ता के अन्तर्गत था। यहॉ उनके सामन्त सम्भवत रहते थे। मुसलमानो के आक्रमण के समय काशी के राजा हार जाने के बाद यही आये थे, किन्तु दुश्मनो ने यहां भी उनका पीछा किया। इसके बाद मुसलमानो का शासन इस स्थान पर लगभग चार सौ वर्षों के लिए स्थापित हो गया। राजपूत यहॉ से भगा दिये गये किन्तु कुछ दिनो के बाद पुन राजपूतो के भाग्य ने पलटा खाया और वे यहॉ से मुसलमानो को भगाने मे सफल हुए। सिराजुद्दौला के समय मे काशी पर पुन मुस्लिम आक्रमण हुआ। अपनी विजय की कोई आशा न देख, काशी राज ने सामन्तो, दरबारियो एव अन्य नौकरो को सम्पूर्ण सम्पत्ति उठा ले जाने की आज्ञा दे दी। प्रस्तुत स्थान के सामन्त राजा ने भी बहुत सी सम्पत्ति उठा लाये जो गाव वालो के अनुसार इसी के अन्दर मलवे रूप में पडी है।

जौनपुर एव बनारस के बीच स्थित होने के कारण अवश्यमेव इन स्थानो की राजनीति से प्रस्तुत स्थान प्रभावित हुआ होगा। महमूद गजनवी ने पजाव के राजा जयपाल का पीछा

मनहेच तक किया था। मनहेच इस समय बनारस के राजा के अधीन रहा। महमूद ने अस्सी के राजा पर भी आक्रमण किया। यह अस्सी सम्भवत वाराणसी रहा, अत हो सकता है कि उसके आक्रमण के समय बनारस के राजा ने यही आकर शरण ली हो और मुसलमानो द्वारा बनारस लूट कर चले जाने के आद पुन वहॉ गये हो और अन्त मे सिराजुद्दौला के आक्रमण के समय तक पुन बनारस के स्वतन्त्र शासक के रूप मे राज्य किये हो।[17]

प्राप्त सामग्रियाँ

(अ) किला – जनश्रुतियो के अनुसार प्रस्तुत स्थान पर जहॉ आज किला है, वहॉ किसी समय एक किला था जिसे मुसलमानों ने बनवाया था। ऐसा कहा जाता है कि मुस्लिम काल का भवन तीन मजिलो वाला था जिसकी ऊपर की दो मजिले जमीन के ऊपर की थी और तीसरी मजिल जमीन के नीचे। किन्तु इस समय कोई भी मजिल दृष्टिगोचर नही होती। अतिरिक्त इसके कि टीले के ऊपर एक कमरे का अवशेष है जिसका माप 10X8 फीट है तथा उनमे प्रयुक्त ईंटे कुछ बडे आकार की है। जिनका माप 9 5 इंच, 8.5 इच X 2 इच है। इस कमरे के पश्चिम एव पूरब दो तरफ द्वार है जो काफी चौडे है। किले का द्वार सम्भवत. पूर्व दिशा मे ही था जिसका अनुमान चारो ओर की खाई से लगाया जा सकता है।

खाई –

टीले के चारो तरफ एक गहरी खाई बनी है। जिसकी चौडाई भिन्न–भिन्न दिशाओ मे भिन्न–भिन्न है। उत्तर और दक्षिण की ओर उसकी चौडाई लगभग 35 गज है। पूर्व की ओर 25 गज तथा पश्चिम की ओर 51 गज के लगभग है। इस खाई से लगभग 1 या डेढ फर्लाग की दूरी पर अनेक तालाबो के अवशेष हैं। कुछ पत्थर के टुकडे इन तालाबो के आस पास बिखरे है। सम्भवत इन तालाबो की सीढियॉ पत्थर से बनी थी। यह भी अनुमान किया जाता है कि खाई के लिए पानी का स्रोत यही तालाब थे। खाई किले की सुरक्षा की दृष्टि से बनाई जाती थी। यह परम्परा सिन्धुघाटी की सभ्यता मे भी देखने को मिलती है।

मिट्‌टी के मृद्‌भाण्ड –

धरातल से प्राप्त सामग्रियो मे केवल मिट्‌टी के मृद्‌भाण्ड की पाये गये हैं। यहॉ मुख्य रूप से लाल रग के ही मृद्‌भाण्ड मिले है। यद्यपि टीले से दूर खेतो मे अथवा रास्तो पर काले चमकीले बर्तन के टुकडे भी मिले हैं, किन्तु उनकी वास्तविकता पर विश्वास नही किया जा सकता। उसे हम दूसरे चमक वाले बर्तन नही कह सकते क्योकि इनमे सभी विशषताये उपलब्ध नही है। यहॉ से प्राप्त मृद्‌भाण्डो को इनके आकार–प्रकार के आधार पर दो भागो मे बाटा जा सकता है – प्रथम श्रेणी मे वे

बर्तन आते हैं, जिनके निर्माण में अच्छी मिट्टी का प्रयोग है तथा ये बडी ही कुशलता एव कलात्मकता से बनाये गये हैं। दूसरी श्रेणी मे भद्दे और मोटे बर्तन आते हैं, इनकी मिट्टी मे बालू अथवा भूसी आदि मिलायी गयी रहती है। प्रथम श्रेणी के बर्तनो मे तीन प्रकार मुख्य है –

घड़े –

आकार मे छोटे–बडे होने के अतिरिक्त इसके कोर एव ग्रीवा मे विभिन्नता है। चूकि घडे की केवल गरदन ही प्राप्त हुई हैं, अतः इन्ही के आधार पर इनके उपविभाजन किये जा सकते है

हांडी –

हांडियो के दो प्रकार मुख्य रूप मे मिले हैं। प्रथम जिनका कोर कम मोटा और ग्रीवा आरम्भ मे लम्बवत् तदोपरान्त इनका आकार वर्तुलाकार है। दूसरे प्रकार के गोलाकार बर्तनो की गर्दन बाहर की ओर मुडी हुई है, इसका कोर पहले की अपेक्षा मोटा है।

लोटा –

लोटे के दो उदाहरण प्राप्त हुए हैं, इनके निर्माण मे प्रयुक्त मिट्टी अच्छे किस्म की है तथा इन पर लाल रग की रगाई

की गयी है। प्रथम आकार मे थार समतल है ग्रीवा बाहर की ओर क्रमश निकला हुआ है और उस पर अनेक ग्रूव बने है। दूसरे प्रकार के बर्तनो की गर्दन सादी है तथा पहले की अपेक्षा इनका कोर मोटा है।

द्वितीय श्रेणी मे मोटे एव भद्दे किस्म के मृद्भाण्ड आते है जिनका आकार बहुत बडा है। इस प्रकार के बर्तन प्रारम्भ से ही मिलते चले आ रहे है।

इस स्थान की प्राचीनता के विषय मे नि·सन्दिग्ध रूप से कहा जा सकता है कि यह स्थान परिवर्तित काल मे बहुत ही महत्वपूर्ण था। किन्तु लोक कथाओ के आधार पर नवी शताब्दी तक की प्राचीनता मानने मे कोई सन्देह नही रहता। विष्णु की प्रतिमा के आधार पर भी इसकी तिथि दशवी शताब्दी निश्चित की जा सकती है। इसके अतिरिक्त अन्य कोई ऐसी पुरातात्विक सामग्री नही है जिसके आधार पर इस स्थान का तिथिक्रम निश्चित किया जा सके।

इस टीकर का ध्वसावशेष हमारी प्राचीन सभ्यता, सस्कृति, कला आदि की समृद्धता का द्योतक है। इसके गर्भ मे पुरातात्विक वस्तुए सचित है। अस्तु इस टीले का उत्खनन कराया जाय तो सम्भव है कि यहॉ से प्राप्त वस्तुए प्राचीन जौनपुर के अन्धकाराच्छन्न इतिहास के निर्धारण मे महत्वपूर्ण भूमिका

निभायेगी। अत. पुरातत्व वेत्ताओ से मेरा अनुरोध है कि इस स्थान का उत्खनन कर प्राचीन जौनपुर ही नही अपितु प्राचीन भारतीय इतिहास को समृद्ध बनाने का कष्ट करे।

महल टीला –

महल गॉव जौनपुर शहर से लगभग 9 मील दूर पूर्व की ओर स्थित है। इसकी स्थिति गोमती नदी के दाहिने किनारे पर बिल्कुल सट कर है। जफराबाद स्टेशन एव बाजार से दोहरी घाट होते हुए महल गॉव स्थित है जो कि कई सौ वर्ष पहले वास्तव मे एक महल के रूप मे था। इस स्थान तक पहुॅचने के लिए सडक से जाने के लिए रिक्शा, कार, जीप आदि वाहनो की सुविधा है। यद्यपि नदी के रास्ते से नाव द्वारा जाने मे अधिक सुविधा होगी।

इस समय टीले की ऊॅचाई जमीन के स्तर से लगभग 54 फीट है। इसका विस्तार लगभग 245 गज के क्षेत्र मे है। यह क्षेत्र एक टीले के रूप मे आज स्थित है। इसको देखने से यह अनुमान नही लगाया जा सकता है कि यह किस ढग की इमारत का अवशेष, जिस पर इस क्षेत्र के कृषि कार्य के अन्तर्गत आ जाने से यह निष्कर्ष निकालना और भी कठिन कार्य हो गया है।

लोगो का कथन है कि आज से कई सौ साल पहले यहॉ एक राजा का महल था, जो बाद मे ध्वस्त होकर एक टीले मे बदल गया। इसके महल के नाम पर ही इसके समीप वाले बस्ती को महल कहकर पुकारा जाता है। इसके लगभग एक फर्लांग के क्षेत्र का ध्यानपूर्वक अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि जहॉ आज महल गॉव है, वहॉ किसी समय वास्तव मे महल रहा होगा। कारण कि जफराबाद से केराकत जाने वाली सडक से एक शाखा महल गॉव में जाती है और नये बसे गॉव मे आकर समाप्त हो जाती है। सडक की स्थिति से अनुमान लगाया जा सकता है कि यह शाखा जफराबाद से आने वाली सडक मे से महल मे जाने के लिए ही बनाई गई थी। इसी आधार पर यह भी अनुमान लगाया जा सकता है कि महल का मुख्य द्वार सम्भवत इसी पूर्व और दक्षिण की दिशा की ओर ही था।

इस टीले के विषय मे जो लोक कथाये प्रचलित है, उनके आधार पर भी यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि प्राचीन समय मे यहॉ पर जयचन्द्र नामक राजा का एक महल था, जिसमे उसकी रानिया रहती थी। उसकी सेना एव किला तथा दरबार मनहेच गॉव मे स्थित थे। परन्तु इस महल के विषय मे कोई विशेष सामग्री नही मिलती।

सबसे रोचक बात तो यह है कि महल गॉव के पूर्व गोमती नदी के किनारे ही सटा हुआ गॉव बीबीपुर के नाम से प्रख्यात है, यहॉ पर कुछ मुस्लिम काल के अवशेष आज भी ध्वस्त रूप मे अवशिष्ट है। यदि 'बीबीपुर' शब्द की व्युत्पत्ति पर विचार किया जाये तो ज्ञात होता है कि यह स्थान बीबियो अर्थात् रानियो का निवास था। इस सम्बन्ध से भी यह अनुमान लगाया जा सकता है कि पहले यहॉ पर हिन्दू–राजाओ का महल था और उनमे उनकी रानियॉ रहती थी, उसको नष्ट कर मुसलमान बादशाहो ने अपने महल बनवाये और उसका नाम बीबीपुर रख दिया। वैसे इस स्थान की शोभा देखने योग्य है। वातारण इस ढग के निर्माण कार्य के लिए अत्यन्त उपयुक्त जान पडता है।

लोक कथाओ मे वर्णित राजा जयचन्द्र के समीकरण की समस्या पर अगले अध्याय मे विस्तृत विचार किया गया है। यह उल्लेखनीय है कि जफराबाद एव महल की दूरी लगभग डेढ मील ही है और जो पुरातात्विक सामग्री दोनो स्थानो से प्राप्त होती है, वह बहुत अशो मे समान है यही नही दोनो स्थान परस्पर एक सडक द्वारा सम्बद्ध भी है। इसको दृष्टिगत करते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि जफराबाद का चन्द्र एवं महल का जयचन्द्र एक ही व्यक्ति के नाम है।

इस महल के सम्बन्ध मे कुछ लिखित एव साहित्यिक साक्ष्यो के अभाव मे कुछ भी निष्कर्ष निकालना सम्भव नही प्रतीत होता। किन्तु पुरातात्विक सामग्री अवश्य कुछ यहॉ के प्राचीन निवासियो के मौलिक–जीवन के गतिविधियो पर प्रकाश डालती है।

प्राप्त सामग्रियां –

ऊपरी सतह से यहॉ के अवशेष कुछ विशेष दृश्यमान नही है। ऐसा ज्ञान होता है कि नदी की ओर एक दीवार रही होगी। जो सम्भवत महल की एक प्रमुख दीवार थी। टीले के दक्षिण ओर एक लम्बा रास्ता है, जो गॉव और टीले को अलग बॉट देता है। यह रास्ता पूर्व से पश्चिम की ओर है। रास्ते की चौडाइ 11 फीट है। इस रास्ते के दोनो ओर का अन्त दोनों तरफ स्थित नाले मे हो जाता है। सम्भवत यह रास्ता महल के ध्वस्त हो जाने के पश्चात् ही कभी बना। रास्ते के पास टीले की ऊॅचाई लगभग 20 फिट है और गॉव की ओर लगभग 10 फिट है। तात्पर्य यह कि दो टीलो के बीच का रास्ता स्वय नाला जैसा लगता है। इसके अतिरिक्त महल के पूर्वी एव पश्चिम किनारो पर भी दो नाले है। नालो का प्रारम्भ चहारदीवारी से होता है। अत इन दोनो को तथा चौडे रास्ते को हम एक खाई मान सकते हैं जो तीन ओर से महल की सुरक्षा मे अत्यन्त ही सहायक रही होगी, एक ओर स्वय गोमती नदी महल की सुरक्षा कर रही थी।

चहारदीवारी के बाद नाले को पार कर महल तक पहुँचने के लिए अस्थाई पुल बना रहा होगा, जो रात को चहारदीवारी बन्द कर देने के बाद हटा दिया जाता होगा। वैसे यह सब बाते अधिकतर अनुमान पर ही आधारित है।

ईंट – टीले की सतह पर बहुत से ईटो के टुकडे पडे मिले हैं, जिनको देखने से ज्ञात होता है कि ये ईटे चौडे किस्म की हैं। जो जफराबाद के कोट मे नीचे की सतहो से प्राप्त होती है। इस प्रकार की ईटे मौर्य–शुग कालीन कहलाती है। इनमे भूसी आदि के ढग की कुछ सामग्री मिली रहती है। कोई पूरी ईट नहीं मिली है। अस्तु इसकी माप के विषय मे कुछ निश्चय पूर्वक नही कहा जा सकता।

महल द्वार – जिधर से रास्ता गया है उसी ओर टीले का ढाल अधिक है साथ ही बीच मे एक स्थान पर कुछ गहरा है। जिसको देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि उस ओर द्वार रहा होगा जिससे होकर महल तक लोग जा सकते हैं। वैसे महल का द्वारा नदी की ओर भी रहा होगा क्योकि उस ओर एक कुआ है जो इस समय नदी के अन्दर है जिसके ऊपर नदी बह रही है।

चहारदीवारी –

वर्तमान भीटे को ध्यानपूर्वक देखने से यह पता लगाया जा सकता है कि महल के चारो ओर एक चहारदीवारी रही होगी। पहले हम एक रास्ते का वर्णन कर आये हैं जिसके दक्षिण की ओर की जमीन रास्ते से 20 फीट ऊँची है और रास्ते की चौडाई लगभग 11 फीट है। रास्ते के बगल की ऊँचाई आस–पास के जमीन से ऊँची है, ऐसा प्रतीत होता है कि महल की रक्षा हेतु तीन ओर सुदृढ दीवार थी और नदी की ओर से सुरक्षा का भार प्रकृति के हाथो सौंप दिया गया था। यह परम्परा प्रागैतिहासिक काल से ही देखने को मिलती है।

कुऑ –

इस पूरे क्षेत्र से तीन कुए मिले हैं, जो नि.सन्देह इस महल के और जफराबाद के किले के समकालीन रहे हे। इसमे एक कुऑ वर्तमान महल गॉव मे स्थित है। इस कुए की चौडाई लगभग 3 फीट है। इसका ऊपरी हिस्सा आधुनिक ईटो से बना है, जो बाद की मरम्मत की सूचना देता है। इसके लगभग 4 फीट नीचे मौर्य–शुग–कालीन ईटो की लगभग ढाई फीट की पट्‌टी है। अन्त के सबसे निचले हिस्से मे प्लास्टर कार्य के कारण कुछ कहा नही जा सकता। इस प्रकार उपर्युक्त कुआ निश्चित रूप से महल

का समकालीन रूप है उसमे प्रयुक्त विभिन्न काल की ईटे उसकी समय–समय पर की गई मरम्मत का प्रमाण प्रस्तुत करती है।

दूसरा कुआ महल के दक्षिण पूर्वी कोने पर मिला है। इसकी खोज जमीन को समतल बनाते समय हुई थी। इसकी बनावट भी पहले प्रकार के कुए की तरह ही है। आजकल इसका उपयोग सिचाई के लिए होता है।

तीसरा कुआ नदी के अन्दर वर्तमान है। सन् 1958 ई0 मे नदी के अत्यन्त सूख जाने से कुआ दिखलाई पडा जिसके ऊपरी हिस्से की ईट मौर्य–शुग–कालीन थी। ऐसा जान पडता है कि या तो यह कुआ अपनी वास्तविक स्थिति मे रह गया था, यदि मुसलमानो ने उसकी मरम्त कभी कराई होगी तो ऊपरी हिस्सा पुन पानी के बहाव से नष्ट हो गया होगा। किन्तु इस समय यह अथाह जल के अन्दर है, इसकी स्थिति महल के उत्तरी पूर्वी कोने पर है। इसी के आधार पर महल का द्वारा सम्भवत उत्तर की ओर भी कहा जा सकता है।

इन्ही उपर्युक्त वर्णनो के आधार पर हम महल का काल्पनिक वर्णन कर सकते है, जिसके तीन ओर एक चहारदीवारी थी जिसका द्वार दक्षिण की ओर था। चहारदीवारी के बाद एक खाई थी जो पानी से भरी रहती रही होगी। उसको पार करने के लिये एक अस्थाई पुल बना रहा होगा जो रात मे हटा दिया जाता

रहा होगा। इसके बाद महल था। इसका द्वारा उत्तर की ओर था जिसके सामने काफी चौडा मैदान था तथा दाहिने कोने पर एक कुआ था।

अन्य सामग्रियां

सतह से प्राप्त सामग्रियो मे सबसे महत्वपूर्ण स्थान मिट्टी के मृद्भाण्डों की है। इसके अतिरिक्त चूडियॉ एव शीशे व मिट्टी के मनके भी प्राप्त हुए हैं। इनका वर्णन नीचे की पक्तियो में किया जायेगा।

मनके (ठमके) –

महल टीले से कुछ मिट्टी एव शीशे के मनके प्राप्त हुए है, जो अधोलिखित है –

मिट्टी का मनका –

इस प्रकार का एक ही मनका मिला है जो पडे रूप में आवे से टूट गया है। इसका आकार दो कोणो का है, इसके मध्य मे छेद है। अन्य पुरातात्विक खुदाईयो से भी इस ढग के मिट्टी के मनके मिले है। अहिक्षत्रा के तीसरे स्ट्रेट्स से , जो गुप्त काल का माना गया है, इस ढग के 26 मनके मिले हैं। ब्रह्मगिरि से इस तरह के दो मनके, मेगालिथिक स्तर से तथा तीन आध्र स्तर से

मिले हैं। अरिकमेडु से इस प्रकार के 16 मनके मिले है। हस्तिनापुर की खुदाई मे इस ढग के मनके तृतीय काल के मध्य स्तरो से प्राप्त हुए हैं। इस प्रकार हम देखते है कि इस ढग के मनके प्राय सभी प्राचीन स्थानो से प्राप्त हुये हैं, जो कम से कम गुप्तकाल का प्रतिनिधित्व करते हैं।

शीशे का मनका –

इस ढग का एक ही मनका प्राप्त हुआ है जिसका आकार नारंगी के समान है। अहिक्षत्रा और तक्षशिला से इस ढग के बहुत से मनके मिले हैं जिनका प्राप्ति स्थान पहले से चौथे सतह के मध्य है। इसके काल के विषय मे कुछ नहीं कहा जा सकता।

चूडियॉ –

महल स्थान से चूडियो के बहुत से टुकडे मिले हैं। इनका आकार एव रग विभिन्न है। रगो के आधार पर इनके तीन विभाग किये जा सकते हैं – एक रगी, द्विरगी एव बहुरंगी। एक रगी चूडियो का रग प्राय. काला, नीला एव लाल है, इनका आधार विभिन्न है। दो रगो वाली चूडियो का रग प्राय काला, नीला, लाल एव हरा रगो मे से किसी दो रग के सहयोग से इनका निर्माण हुआ है। बहुरगी चुडियॉ वे है जिनके ऊपर कई रंगो की लाइनें हैं

तथा जो देखने मे अत्यन्त सुन्दर लगती है। इनके अतिरिक्त कुछ विशिष्ट प्रकार की चूडियों के टुकडे प्राप्त हुये हैं, जिनके ऊपरी हिस्सो पर मोती के दाने के सदृश थोडी–थोडी दूरी पर सफेद शीशा पिघलाकर लगाया गया है। इस प्रकार की चूडिया अनेक स्थानो की खुदाई मे प्राप्त हुई हैं। इनके काल के विषय मे कुछ नही कहा जा सकता।

मिट्टी के मृद्भाण्ड –

धरातल से प्राप्त सामग्रियो मे मिट्टी के मृद्भाण्ड मुख्य हैं। सुविधा के लिए इन्हे दो भागो मे बॉटा जा सकता है। प्रथम श्रेणी मे वे मृद्भाण्ड आते हैं, जिसके आधार पर तिथि–क्रम–निर्धारित किया जा सकता है। द्वितीय श्रेणी मे वे पात्र आते हैं जिनका तिथि से कोई सम्बन्ध नही है। तिथि– निर्धारित करने वाले टीकरो मे उत्तरीकाली चमक वाले मृद्भाण्ड मुख्य हैं। इनके अतिरिक्त तिथि से सम्बन्ध न रखने वाले लाल मिट्टी के पात्रो के बहुत से टीकरे मिले हैं। इनके साथ धरातल से कुछ भूरे रग के मृद्भाण्ड के टुकडे भी मिले हैं। जो या तो उत्तरीकाली चमक वाले बर्तनो के है अथवा समकालीन है – यह निश्चित रूप से नही कहा जा सकता है।

(ब) भूरे रंग का मृदभाण्ड –

कुछ ऐसे पात्रो के टुकडे मिले है जिन पर भूरे रग का लेप है। लेप के पश्चात् उनको रगडकर चमकाया गया है। परन्तु इनकी चमक उत्तरी काली चमक वाले बर्तनो के समान नहीं है, इस प्रकार के बर्तन अच्छी तरह से पके हुए है। उनके धातु जैसी आवाज भी निकलती है। इनमे प्रयुक्त मिट्टी कुछ मे अच्छी किस्म की है और कुछ मे मध्य किस्म की है। कुछ बर्तनो की मोटाई अधिक है तथा कुछ बहुत ही पतले है। सक्षेप मे इनमे प्रसिद्ध चित्रित भूरे रंग के मृद्भाण्ड की प्राय सभी विशेषताये दृष्टिगोचर होती है। केवल यहॉ से प्राप्त पात्रो मे काले रग से चित्र नहीं बने हैं। सामान्यतया इनमे दो प्रकार के बर्तन मिलते हैं – कटोरे और थाली, इनमे कुछ का आकार बडा है और कुछ का छोटा इनका सक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है –

(1) कटोरे – भूरे रग के कटोरे जिनका कोर ऊपर की ओर मुड़ा है इनमें प्रयुक्त मिट्टी अच्छे किस्म की है तथा इसे रगडकर चमकाये गये हैं। इनमे कुछ छिछले और कुछ गहरे हैं।

(2) थाली – इनका रग पीछे वर्णित कटोरो की तरह भूरा है प्रयुक्त मिट्टी अच्छे किस्म की है। बनाने की शैली पहले जैसी ही है। इनका कोर अन्दर की ओर झुका है तथा पेदा चौडा हैं। इस प्रकार मे भी छोटे और बडे कई आकार के मिले हैं तथा

इनमे भी कुछ अपेक्षाकृत खराब किस्म के हैं, जिनमे प्रयुक्त मिट्टी मध्यम श्रेणी की है तथा बर्तनो की मुटाई भी अधिक है।

(आ) उत्तरीकाली चमक वाले मृद्भाण्ड (एन0बी0पी0डब्ल्यू0)

उत्तरीकाली चमक वाले मिट्टी केबर्तन यहा के प्रमुख बर्तन है। इनके आधार पर यहा की तिथि–निर्धारित की जाती है। यहा से प्राप्त बर्तनो के निर्माण मे दो प्रकार की मिट्टी अत्यन्त चिकनी और उच्च श्रेणी की तथा कुछ मध्यम श्रेणी की प्रयुक्त है। इसी से कुछ मृद्भाण्ड बहुत ही पतले, चिकने और चमकते हुए है। तथा कुछ मोटे, भद्दे एव बिना चमक के है। तथा दोनो प्रकार के बर्तन सम्भवत दो कालो का प्रतिनिधित्व करते है। इनमे मुख्य रूप से दो प्रकार के पात्र प्राप्त हुए है – प्रथम कटोरे द्वितीय थालियां। कटोरे–1 पहली प्रकार के कटोरो का ऊपरी कोर थोडा बाहर की ओर झुका है, इसकी मोटाई मध्यम है तथा बाहर एवं भीतर दोनो ओर पालिस की गयी है। इसी प्रकार के कटोरे हस्तिनापुर के तृतीय काल से भी प्राप्त हुए है। गगा घाटी के अन्य प्राचीन स्थान कौशाम्बी, राजघाट आदि स्थानो की खुदाई में अत्यधिक सख्या मे पाये गये हैं। दूसरे प्रकार के कटोरो का उपर्युक्त हिस्सा लम्बा रूप मे है जिनका कोर बहुत पतला है, इनकी गहराई अपेक्षाकृत ज्यादा रही होगी। तीसरे प्रकार के कटोरो मे ऊपर ग्रूव बने हुए है इनमे छोटे बडे दो आकार मिलते है, ये बहुत छिछले होते है।

इनका आधार गोल होता है। चौथे प्रकार मे वे कटोरे आते हैं जिनके ऊपर एक दो अथवा कई ग्रूव बने हुए है, इनकी मोटाई कम है इनमे कुछ बडे आकार के एव छिछले हैं। तथा कुछ छोटे आकार में और गहरे है।

थाली – थाली चमक वाले बर्तनो का दूसरा प्रकार थाली है, इनमें प्रयुक्त मिट्टी बनाने की शैली एव पालिश इसी काल के कटोरों जैसी ही है। इनके आकार पर ये कई उप प्रकारो मे विभाजित किये जा सकते हैं।

विशिष्ट प्रकार के द्विरंगी मृद्‌भाण्ड

कुछ ऐसे बर्तन मिले है जिनके ऊपरी भाग मे लाल रग का लेप है एव निचले भाग मे काले रग का। कभी–कभी क्रम ठीक विपरीत है इसके अतिरिक्त कभी–कभी बाहर एव भीतर की ओर भी ऐसा देखने को मिलता है, यह वास्तव मे उत्तरकाली चमक वाले उद्योग का ही विकसित रूप है। इनका आकार–प्रकार पहले जैसा ही है। इसमे नीचे का हिस्सा काला और ऊपर का हिस्सा लाल है।

(इ) लाल मिट्‌टी के मृदभाण्ड –

प्रस्तुत स्थान के लाल रग के मिट्‌टी के बर्तनो को तीन श्रेणियो मे विभाजित किया जाता है। प्रथम श्रेणी के बर्तन

उत्तरीकाली चमक वाले बर्तनो के साथ मिले हैं। इनका आकार–प्रकार भी इन्ही जैसा है, इनमे मुख्य रूप से दो प्रकार के बर्तन प्राप्त हुए हैं – प्रथम कटोरे और दूसरी थाली।

द्वितीय श्रेणी के वे बर्तन आते हैं जो बहुत ही मोटे तथा भद्दे हैं। इनके निर्माण मे प्रयुक्त मिट्टी खराब किस्म की है तथा उसमे भूसी आदि मिला रहता है।

तिथि–क्रम–निर्धारण

प्राप्त सामग्रियो के आधार पर प्रस्तुत स्थान का तिथि–क्रम सामान्य रूप से तीन कालो मे विभाजित किया जा सकता है –

प्रथम काल – इस काल का प्रतिनिधित्व भूरे रग के मृदभाण्ड करते हैं जिनकी तिथि 600 ई0 पूर्व मानी जाती है।

द्वितीय काल – द्वितीय काल का प्रतिनिधित्व उत्तरीकाली चमक वाले मृद्भाण्ड करते है, जिनकी तिथि साधारणतया 600 ई0 पूर्व से 200–100 ई0 पूर्व मानी जाती है। यही तिथि महल के द्वितीय काल के लिए निश्चित की जा सकती है।

तृतीय काल – इस काल का प्रतिनिधित्व लाल रग के मिट्टी के मृद्भाण्ड करते है, जिनकी तिथि के विषय मे निश्चित

रूप से कुछ नही कहा जा सकता। परन्तु इतना तो निश्चित ही है कि ये उत्तरी काली चमक वाले पात्रो के बाद के है। अत इस काल के लिए 200—100 ई0 पूर्व के पश्चात् की कोई तिथि दी जा सकती है।

उपर्युक्त तथ्यो से ज्ञात होता है कि महल जो आज ध्वस्त रूप मे वर्तमान है कभी राजाओ की रानियो का महल था, जिसकी प्राचीनता लगभग 600 ई0 पूर्व तक जाती है और काफी समय तक आबाद रहा। किन्तु अन्त मे सभवत मुसलमानो ने अथवा स्वयं गोमती नदी ने इसके गौरवपूर्ण वैभव एव इतिहास को समाप्त कर उस एक टीले के रूप मे बना दिया। अस्तु पुरातत्ववेत्ताओ से मेरा अनुरोध है कि इस स्थान का सर्वेक्षण कर उत्खनन करावे।

स्थिति –

जफराबाद जौनपुर शहर से लगभग 5 किलोमीटर दूर दक्षिणी और पूर्वी कोने पर स्थित है। आधुनिक जफराबाद बाजार जफराबाद रेलवे स्टेशन से लगभग तीन किलोमीटर पूर्व की ओर है। जफराबाद बाजार एव ग्राम से लगभग 2 5 फर्लांग दक्षिण वह टीला है, जो आज से बीसो शताब्दी पूर्व सम्भवत एक किले के रूप मे आबाद रहा होगा। इस टीले के बगल से होती हुई जफराबाद से केराकत जाने वाली एक पक्की सडक है। इस स्थान

पर पहुचने के लिए जफराबाद स्टेशन अथवा जौनपुर सिटी से रिक्शा, इक्का, टैम्पो, कार, जीप आदि साधन उपलब्ध है।

इस टीले की ऊँचाई लगभग 59 फीट है। इसका अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि यह प्राचीन काल मे सम्भवत कोई किला रहा होगा। यह टीला लगभग 5 एकड भूमि मे फैला हुआ है। आजकल इन सभी क्षेत्रो पर कृषि होती है।

जफराबाद का प्राचीन नाम मनहेच है। यद्यपि इस भूभाग के आबाद करने और ऐसा सुन्दर नाम रखने वालो का ठीक–ठाक पता नही चलता, किन्तु इतिहास के प्राचीन–ग्रन्थो के अवलोकन से इतना तो ज्ञात हो ही जाता है कि मनहेच का सस्थापक कन्नौज का राजा विजय चन्द्र राठौर था। उसने अपने पुत्र जयचन्द्र को मनहेच जागीर के रूप दिया था। उस समय इसकी गणना एक छावनी के समान थी। कन्नौज उस समय उत्तर भारत का एक विशाल राज्य था। जहा पर विजय चन्द्र और जयचन्द्र के विशाल भवन थे जो उसका निवास स्थान था।

यह स्थान बहुत दिन तक अपने प्राचीन नाम मनहेच से प्रसिद्ध था। किन्तु जब मुसलमानो का आगमन हुआ और कुतुबुद्दीन ऐबक ने बनारस तथा मनहेच पर आक्रमण किया, साथ ही साथ मखदूम चेरागे–हिन्द और मखदूम आफताबे–हिन्द तथा शाहजादाजफर पुत्र गयाशुद्दीन तुगलक का अधिकार हो गया

और यहा विजय के बाद के एक स्थायी राज्य की स्थापना हो गयी तो, इस स्थान का नाम जफराबाद रखा गया।

इस नामकरण के दो कारण है। प्रथम यह कि मुसलमानो ने मनहेच को युद्ध तथा वाद विवाद के बल पर जीता था और जफर का शाब्दिक अर्थ 'जीत' या 'विजय' है। इसलिए जफराबाद नाम पडा।

दूसरा कारण यह था कि इस युद्ध मे शाहजादा–जफर खॉ सेनापति थे और विजय श्री के बाद यहा का शासक नियुक्त हुआ। अत. उसके नाम के सम्बन्ध से भी इस स्थान का नाम सम्भवत: जफराबाद पड गया। वस्तुत चाहे जो भी हो जफराबाद नाम पडने का मुख्य कारण उस पर मुसलमानो की विजय ही है।

विजय के पश्चात् यहा मुसलमानो का राज्य स्थापित हो गया और मखदूम आफताब हिन्द और चेराग हिन्द ने यही निवास ग्रहण कर लिया जिसके परिणाम स्वरूप जफराबाद महात्माओ का निवास स्थान बन गया।[18] फीरोज शाह तुगलक इन महात्माओ के प्रति विशेष श्रद्धा रखता था। अत वह जफराबाद गया तो इसका ऐतिहासिक नाम 'शहर अनवर' रखा। किन्तु यह नाम जनसाधारण मे प्रसिद्ध न हो सका। चूकि यहॉ पहले से उच्च कोटि का कागज भी निर्मित होता था और यह स्थान कागज के लिए बहुत प्रख्यात था। इसके परिणाम स्वरूप इसे 'कागज का

नगर' भी कहा जाता था। किन्तु उपर्युक्त सभी नाम जफराबाद नाम के सामने मद्धिम पड गये।[19]

जफराबाद के विषय मे अनेक जनश्रुतिया हैं।[20] इनके अनुसार इस पर भरो एव सोइरियो का प्राचीन काल मे अधिकार था। जौनपुर गजेटियर के अनुसार सोइरी और भर जातियो का चन्दवक से बनारस की सीमा तक अधिकार था। जौनपुर और बनारस की सीमा पर जफराबाद (मनहेच) स्थित है। अत. यह सम्भावना व्यक्त की जा सकती है कि इस स्थान पर भरो एव सोइरी जातियो की गढी या कोट रहा होगा। जनश्रुतिया भी इस बात का समर्थन करती है।

श्रीवाकर तथा कुछ अन्य इतिहासकारो ने जौनपुर पर महमूद गजनवी के आक्रमण के विषय मे इस प्रकार उल्लेख किया है – 1017 ई0 मे जब महमूद गजनवी ने जौनपुर एव बनारस पर आक्रमण किया, उस समय यहॉ पर भरो एवं सोइरियो का अधिकार था। जब कन्नौज के राजपूतो को मुसलमानो ने पराजित किया तो उन्होने क्रमश उनको निकाल कर अपना शासन बारहवी, तेरहवी, और चौदहवी शताब्दी मे स्थापित किया, परन्तु इसमे भी देहली के बादशाहो ने हस्तक्षेप किया। मुहम्मद बिन साम ने मझ नामक स्थान पर राजपूतो पर आक्रमण किया और जयचन्द्र को पराजित किया। परन्तु उसने जयचन्द्र के खजाने को ही पर्याप्त समझा।

उसने इस आक्रमण के बीच बनारस के बहुत से मन्दिरो को तोडा और सम्भवत जौनपुर–जफराबाद के मन्दिरो तथा किलो को भी नही छोडा।

उपर्युक्त कथन के आधार पर यह सम्भावना की जा सकती है कि जफराबाद (मनहेच) पर अधिकार किये हुए सोइरी एव भर जातियो को पराजित करके गाहडवाल नरेश जयचन्द्र ने इस पर अपना अधिकार कर लिया होगा। जनश्रुतियो से भी यह ज्ञात होता है कि यह स्थल जयचन्द्र के समय का किला असनी था। यह भी ज्ञात होता है कि एक राजा, जिसका नाम चन्द्र, विजयचन्द्र अथवा जयचन्द्र था, ने सम्भवत इस किले का निर्माण कराया था।

मुसलिम इतिहासकार के अनुसार सन् 1019 ई0 मे महमूद गजनवी ने पजाब के राजा जयपाल को यमुना के पार हटने के लिए मजबूर करने के बाद कन्नौज तक पीछा किया। इसके परिणामस्वरूप जयपाल ने गगा नदी पार किया और मनहेच अर्थात् रातगढ के किले में शरण लिया।[21] इस समय यह किला महाराजा बनारस के अधिकार मे था जो कि जयपाल के आश्रित सामन्त राजा था। महमूद वहा भी आया और रातगढ पर अधिकार कर लिया। अन्ततोगत्वा महमूद ने बनारस के तत्कालीन राजा चन्द्रपाल को भी मार कर अपना अधिकार जमा लिया।

महमूद से सम्बन्ध रखने वाले ग्रन्थो मे अस्सी का नाम कई स्थलो पर आया है। श्री त्रिपुरारी भाष्कर का कथन है कि उसने अस्सी के राजा को हराया था। यह अस्सी सम्भवत वाराणसी रही हो या असनी। इस प्रकार सारा साम्राज्य छिन्न–भिन्न हो गया। इसी बीच गगा घाटी के छोटे–छोटे राजाओ मे अपनी–अपनी सत्ता स्थापित करने के उद्देश्य से आपस मे युद्ध होते रहे और मनहेच का शासन कई राजवशो के अधिकार मे हो गया। अन्ततोगत्वा इसका शासन गाहडवाल राजा चन्द्रदेव के हाथ में आया। **इसी वश** के चतुर्थ पीढी के राजा जयचन्द्र के हाथो मे इसका शासन था।

डॉ0 अल्तेकर ने अपनी पुस्तक **'हिस्ट्री ऑफ वाराणसी'** मे इसका समर्थन किया है।[22] अल्तेकर के अनुसार गाहडवाल वश के राजा चन्द्रदेव ने चेदिवश का अन्त कर गगा घाटी के मैदान मे अपनी शक्ति स्थापित की। प्रारम्भ मे बनारस ही उसके साम्राज्य की राजधानी थी, किन्तु कन्नौज विजय के उपरान्त उसने कन्नौज को अपनी राजधानी बनाया। परन्तु बनारस गाहडवाल राजाओ की द्वितीय राजधानी के रूप मे चलता रहा, किन्तु जयचन्द्र के कन्नौज का राजा होने पर बनारस की समृद्धि एव सम्पन्नता का अन्त हो गया। इसके समय मे सन् 1193 ई0 मे गोर देश के राजा मोहम्मद गोरी का आक्रमण हुआ उसके सेनानायक कुतुबुद्दीन

ऐबक ने 1184 ई0 मे बनारस पर अधिकार कर लिया। उसने बनारस के मन्दिरो, मठो का विनष्ट कर डाला और उनके स्थान पर मसजिदे बनवाई। सम्भवत इन्हीं मन्दिरो मे से विश्वनाथ का प्रसिद्ध मन्दिर था, जिसके लूट के समान ले जाने मे 1400 ऊँटो की आवश्यकता पडी थी।[23]

डॉ0 अल्तेकर के अनुसार 12वी शताब्दी के अन्तिम चतुर्थाश मे इस क्षेत्र मे गाहडवालो का राज्य था, और इस शाताब्दी के अन्त मे मुसलमानो ने इन स्थानो पर आक्रमण कर राजनीतिक कार्यों मे बाधा डाली होगी।[24]

जौनपुर जिले मे स्थित मछली शहर तहसील से हरिश्चन्द्र का 1198 ई0 का एक अभिलेख प्राप्त हुआ है, जिस पर उपाधियॉ अकित है ये उपाधियां उसकी स्वतत्र सत्ता की परिचायक हैं। इसका समर्थन 1197 ई0 के राणक श्री विजय कर्णक मिर्जापुर जिले के बेखरा स्तम्भ से भी होता है। इससे ज्ञात होता है कि मिर्जापुर, वाराणसी तथा जौनपुर जफराबाद आदि क्षेत्रों पर 1197–98 ई0 में हरिश्चन्द्र का अधिकार था। इससे स्पष्ट हो जाता है कि जौनपुर पर गाहडवालो का अधिकार था।

श्री ए0सी0 वाकर का मत है कि शहाबुद्दीन गोरी ने जफराबाद पर अधिकार के पश्चात् जौपुर मे मन्दिरो को नष्ट–भ्रष्ठ किया। इसकी सत्यता स्वीकार की जा सकती है, यदि किसी ग्रन्थ

विशेष मे जफराबाद के पश्चात् उसके जौनपुर के आगमन का उल्लेख मिले। किन्तु विशेष छान–बीन के बाद भी यह ज्ञात नही होता कि यहा पर मन्दिर थे या नही। सम्भव है कि जफराबाद मे जयचन्द्र आदि राजाओ के मन्दिर, भवन और कोटे थी, जिनके तोड–फोड के सम्बन्ध मे गोरी के प्रति आरोप लगाया जाता है।

उपर्युक्त विवरण से यह ज्ञात होता है कि जफराबाद में वर्तमान मस्जिद सम्भवत जयचन्द्र का बैठका या सभा भवन या मन्दिर रहा हो, जिसे गोरी ने अपने आक्रमण के बाद मस्जिद के रूप में परिवर्तित करा दिया। इतिहासकार सय्यद इकबाल अहमद का कथन है कि 'मनहेच' का सस्थापक कन्नौज का राजा विजय चन्द्र राठौर था। उसने अपने पुत्र जयचन्द्र का 'मनहेच' जागीर के रूप मे दिया था। उस समय इसकी गणना एक छावनी के समान सम्भव है कि उपर्युक्त वर्णित मस्जिद जयचन्द्र का बैठका या सभा–भवन आदि रहा होगा।

इस साक्ष्यो के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि राजा चन्द्र जो लोगो के अनुसार 'मनहेच' के किले का निर्माता रहा, सम्भवत राजा चन्द्रपाल रहा होगा। क्योकि मुसलमानो के आक्रमण के समय बनारस क्षेत्र का वही राजा अनेक स्थलो पर वर्णित है किन्तु जब तक अन्तरग एव वहिरग साक्ष्यो से

इस कथन की पुष्टि न हो जाय तब तक निश्चित रूप से कुछ कहना सम्भव नही है।

प्राप्त सामग्रियाँ

चहारदीवारी[25] –

नष्टप्राय अवशेषो को देखने से यह ज्ञात होता है कि अपने पूर्व रूप मे यह सम्भवत. एक किला था। जो चहारदीवारी से घिरा हुआ था। प्राचीनकाल मे किले प्राय. चहारदीवारियो से घिरे रहते थे। यह परम्परा सिन्धु घाटी सस्कृति के काल से देखने को मिलती है। इसकी लम्बाई एवं चौडाई क्रमश. 500 और 200 फिट के लगभग। किन्तु ऊँचाई लगभग 59 फिट है। उसमे प्रयुक्त ईटे दो नाप की मिलती हैं, बडी और छोटी। बडी आकार की ईटो की नाप 14 7'' , 8 75'' तथा मोटाई 2 5'' है। इस प्रकार की ईटें मौर्य और शुग–कालीन मानी जाती है। दूसरी प्रकार की ईटे आकार मे छोटी है। इसकी माप 8 इच 4 5 इच तथा मोटाई 2 या डेढ इच है। इसकी तिथि अपेक्षाकृत बाद की है। इसक उद्भव मुसलमान काल से माना जाता है। इन दोनो मापो की ईटो के बीच मे मिट्टी की एक मोटी तह है। इससे यह ज्ञात होता हे। कि मुसलमानों के आक्रमण के कारण इस चहारदीवारी का अधिकाश भाग विनष्ट हो गया था। परन्तु मुसलमानो का अधिकार हो जाने

पर उन लोगो ने सम्भवत उसका जीर्णोद्धार कराया। इसमे यत्र–तत्र लखैरी ईटों का प्रयोग मिलता है। इस रक्षा भित्ति से तीन काल की सूचना मिलती है। प्राचीनतम् काल की सूचना मौर्य एव शुंग–काल की ईटें करती है। इसके नष्ट प्राय हो जाने के पश्चात् किले का पुनर्निर्माण केवल मिट्टी से किया जो सम्भवत गुप्त एव राजपूत काल का प्रतिनिधित्व करती है। मुसलमानो के आक्रमण से विनष्ट हो जाने के पश्चात् इसका जीर्णोद्धार लखौरी ईटो से किया गया है।

चारों रक्षा भित्तियो मे चार स्थानो पर कटाव साफ–साफ दिखाई पडता है। जिन्हे सम्भवत द्वार कहा जा सकता है। मुख्य द्वार अन्य द्वारो के अपेक्षाकृत अधिक चौडा है।

खाई –

प्राचीन परम्परा के अनुकूल ही किले के चारो तरफ सम्भवत एक खाई थी। जो शत्रु को किले के पास तक आने से रोकती थी। इसकी चौडाई 80 फिट के लगभग है। तथा भिन्न–भिन्न स्थानो पर भिन्न–भिन्न हैं। वर्षा–ऋतु मे यह खाई पानी से भरी रहती है।

नाली –

टीले के पूर्वी एव उत्तरी कोने पर एक मुसलमान–कालीन नाली भी सुरक्षित मिली है। जो लखौरी ईटो से बनी है। अधिक जल वृष्टि होने पर एकत्रित पानी को किले के बाहर निकालने का विधि–विधान होता है। प्राचीन काल मे इसका उपयोग किले के अन्दर का पानी बाहर निकालने के लिए होता था। यह परम्परा सिन्धु–सभ्यता से देखने को मिलती है।

कुआँ –

किले से सटा हुआ एक कुऑ है। जिसका क्षेत्रफल तीन फिट के लगभग है। कुएं के ऊपरी भाग मे लखौरी ईटो का प्रयोग दिखाई पडता है। किन्तु नीचे की तरफ इतनी अधिक काई लगी होने से यह स्पष्ट नहीं होता है कि किस प्रकार की ईटो का प्रयोग हुआ है। वर्तमान समय मे इस कुए द्वारा सिचाई की जाती थी। सम्भव है कि उस समय जल पीने के एव सिचाई के उद्देश्य से इस कुए का निर्माण किया गया था।

मिट्टी के पात्र –

टीले के ऊपरी भाग से प्राप्त सामग्रियो मे मिट्टी के कुछ ठीकरे उल्लेखनीय है। वर्तमान समय मे सम्पूर्ण टीला कृषि कार्य के अन्तर्गत आ गया है। अत. अन्य सामग्रिया नही प्राप्त होती है। जफराबाद से श्री रामनारायण बैकर ने चन्द्रगुप्त द्वितीय

विक्रमादित्य के 'दत्र–प्रकार' एव 'सिह–निहन्ता' प्रकार के सिक्को को प्राप्त किया था। समुद्रगुप्त के 'ध्वजधारी' प्रकार के सिक्के भी मिले हैं। इसके अतिरिक्त जौनपुर से समुद्रगुप्त एव काच के भी सिक्के भी मिले है। प्रथम श्रेणी मे वे पात्र आते है जिनके आधार पर तिथि–क्रम निश्चित किया जा सकता है। दूसरे प्रकार मे वे आते है जो तिथिक्रम निर्धारण मे सहायक नही होते।

उत्तरीकाली चमक वाले मृद्भाण्ड

(एन0वी0पी0) उत्तरीकाली चमक वाले मिट्टी के मृद्भाण्ड यहा के प्राचीनतम पात्र हैं। इस प्रकार के पात्र गगा घाटी के प्राचीन स्थल कौशाम्बी राजघाट, हस्तिनापुर आदि से मिले हैं। चूकि प्रस्तुत स्थान राजघाट और कौशाम्बी के बीच स्थित है। अत सम्भव है कि इन्ही स्थलो से ये मृद्भाण्ड ले जाये गये हो। इनको दो भागो मे बाटा जा सकता है। प्रथम श्रेणी मे वे मृदभाण्ड आते है जिन पर काली पालिस का अभाव है। इन बर्तनो का रग भूरा है। इस विषय मे दो मत प्रतिपादित किये जाते है। प्रथम तो यह कहा जाता है कि ये मृद्भाण्ड ग्रेवेयर की परम्परा मे बनाये गये हैं। अन्तर मात्र इतना है कि इन पर किसी प्रकार का लेप नही हैं। दूसरी ओर यह कहा जाता है कि ये वास्तव मे उत्तरीकाली चमक वाले पात्र ही है, केवल उन पात्रो के समान इन मृद्भाण्डो मे काले पालिस नही किये गये हैं।

दूसरे प्रकार के बर्तन वे है जिन पर काली पालिस अच्छी तरह से की गयी है। आकार–प्रकार मे दोनो प्रकार के मृद्भाण्ड समान है इस प्रकार के पात्रो मे कटोरा एव थाली प्रमुख हैं।

लाल पात्र परम्परा के मृदभाण्ड

काली मिट्टी के मृद्भाण्डो के साथ–साथ लाल रंग के मृदभाण्डो की प्राप्ति होती है। इनको तीन श्रेणियो मे बाटा जा सकता है। प्रथम श्रेणी मे वे बर्तन आते हैं। जो हस्तिनापुर तथा राजघाट की खुदाई के अनुसार उत्तरीकाली चमक वाले पात्रो के साथ प्राप्त होते हैं। इनका आकार–प्रकार एव बनावट सभी उत्तरीकाली चमक वाले बर्तनो के समान ही है।

द्वितीय श्रेणी –

इसका मुख्य प्रकार कटोरा है। इस श्रेणी मे बडे–बडे घडे एव हाडी होते हैं। इस तरह के मृद्भाण्ड काली चमक वाले पात्रो के ऊपरी सतह से प्राप्त होते हैं। इन पात्रो पर प्रायः रगो का प्रयोग किया गया है। लेप किया गया एक भी पात्र नही मिला।

मुस्लिम कालीन चमकीले मृद्भाण्ड –

इस काल मे ऐसे मृद्भाण्ड बनते थे, जो विभिन्न प्रकार के फूल–पत्तियो एव ज्यामितीय डिजाइनो से चित्रित रहते थे। इनको अत्यधिक चमकीला बनाने के उद्देश्य से मिट्टी मे शीशा अथवा अभ्रक अदि मिलाकर इन्हे निर्मित किया जाता था। इस तरह की चमक मुस्लिम काल की ईटो अथवा दीवालो मे भी देखने को मिलती है। इस प्रकार के मृद्भाण्डो में मुख्य रूपा से कटोरे एवं प्याले आते हैं। इस काल मे धातु के पात्र भी बनने लगे थे। इसलिए सम्भवत इनका प्रयोग घर आदि की सजावट के लिए होता रहा होगा। विलासी किस्म के मुसलमान शासको ने उनका प्रयोग शराब पीने के लिए किया होगा। इस स्थान से पात्रो के कुछ विशेष मिलते हैं, जो रेखाओ से चित्रित एवं चॉदी जैसे चमकदार है।

काल–निर्धारण –

प्रस्तुत स्थान से प्राप्त सभी सामग्री समान स्तर से मिली है, किन्तु इनके आकार–प्रकार एव स्वभाव तथा अन्य पुरातात्विक–स्थलो के वैज्ञानिक–उत्खनन द्वारा निर्धारित–क्रम के आधार पर इस स्थान का काल–क्रम तीन भागो मे बाटा जा सकता है।[26]

प्रथम काल –

इस काल का प्रतिनिधित्व उत्तरी काली चमक वाले मृदभाण्ड (एन0वी0पी0) तथा शुगकालीन ईटे करती है। यह काल इसका प्राचीनतम काल रहा होगा। इसमे उत्तरीकाली चमक वाले पात्रो की तिथि साधारणतया 600 ई0पू0 से 200 ई0 पू0 तक मानी जाती है। उपर्युक्त तथ्यो के आधार पर प्रस्तुत स्थान की प्राचीनता 600 ई0 पूर्व मानी जा सकती है।

द्वितीय काल –

इस काल मे लाल रग के मृद्भाण्ड आते है, जिनके साथ काली चमक वाले पात्र नही प्राप्त होते है। प्राय. जिन पुरातात्विक स्थलो के वैज्ञानिक उत्खनन हुआ है। वहा पर लाल रग के मिट्टी के मृद्भाण्ड काली चमक वाले पात्रो के बाद के तथा मुस्लिम चमकदार पात्रो के काल का प्रतिनिधित्व करते है। अस्तु इनका काल पहली शताब्दी ई0 से 12वी, 13वी शताब्दी ई0 तक कुछ भी हो सकता है।

तृतीय काल –

इस काल का निर्धारण मुस्लिम काल के चमकदार मृदभाण्ड करते हैं। इस प्रकार के मृदभाण्ड हस्तिनापुर के उत्खनन मे पांचवे काल के ऊपरी स्तर से प्राप्त हुए हैं। जिनका काल

बी0बी0 लाल के अनुसार चौदहवी शताब्दी के प्रथम चतुर्थांश है। अस्तु इस स्थान से प्राप्त इस प्रकार के मृदभाण्डो का काल भी चौदहवी शताब्दी का प्रारम्भिक काल हुआ। यह काल मुस्लिम काल था।

उपर्युक्त तथ्यो से ज्ञात होता है कि बस्ती निश्चय ही 1600 ई0पू0 की रही होगी। ठोस प्रमाण के अभाव में इसके विषय में निश्चित रूप से कुछ नही कहा जा सकता है।

जिस तरह हमारा प्राचीन साहित्य हमारी प्राचीन–सस्कृति का द्योतक है, उसी प्रकार प्राचीन कालीन 'मनहेच' का ध्वंसावशेष हमारी प्राचीन सस्कृति–कला एव विज्ञान की समृद्धता का परिचायक है। उस स्थान के कण–कण मे इतिहास की विभूति सन्निहित है। वहा के प्राचीन अवशेष मूक वाणी मे अपनी अतीत की कहानी कहने के लिए पुरातत्ववेत्ताओ की प्रतीक्षा कर रहे है।

मुसलमानाके के पूर्व जौनपुर के प्राचीन इतिहास के विषय मे साक्ष्य के अभाव मे कोई ठोस जानकारी नही प्राप्त होती है। सम्भव है कि जफराबाद (मनहेच) पुरातात्विक–स्थल का उत्खनन किया जाय तो, यहा से प्राप्त पुरातात्विक सामग्री जौनपुर ही नही वरन् प्राचीन भारत के इतिहास के पुनर्निर्धारण मे महत्वपूर्ण भूमिका निभायेगी। यहा के अधिकाश भाग पर कृषि होती है। अत.

ऐतिहासिक—सामग्रिया विनष्ट होती चली जा रही हैं। इन्हे विनष्ट होने से बचाने के इस स्थल की खुदाई अवश्य होनी चाहिए। इससे जौनपुर का अन्धकाराछन्न प्राचीन इतिहास प्रकाशित हो सकेगा।

अत पुरातत्ववेत्ताओ से हमारा अनुरोध है कि प्रस्तुत स्थान का सर्वेक्षण कर इस स्थान का व्यापक उत्खनन करे। इसके साथ ही साथ पुरातात्विक सर्वेक्षण से अनेक महत्वपूर्ण पुरातात्विक स्थल प्रकाश मे आये हैं जिनका संक्षिप्त विवरण निम्नवत् है —

जौनपुर जनपद के पुरातात्विक स्थलों की प्रकृति

कई महत्वपूर्ण स्मारको के अतिरिक्त जनपद में लगभग 40 पुरातात्विक महत्व के स्थलो (स्थानों) की जानकारी प्राप्त की गयी है। यह अन्वेषण धरातल तक ही सीमित था इसलिए स्थानो के सामान्य स्वभाव की जानकारी ही प्राप्त हो सकी है। हमारे निष्कर्ष परीक्षा की रीति मे दिये जा रहे हैं। जिन पर प्रकाश डालने के लिए जौनपुर के पुरातत्व पर विशेष अन्वेषण की आवश्यकता है। स्थापत्य—कला के स्मारक जौनपुर और जफराबाद मे तथा आस—पास अवस्थित है। इनमे से करीब सभी मध्यकालीन हैं क्योकि जौनपुर शर्की शासन काल मे एक महत्वपूर्ण राजनैतिक क्रिया—कलापो का केन्द्र बिन्दु था। इसके पूर्व के स्मारक मूर्ति

तोडने वालो द्वारा या तो नष्ट कर दिये गये या समय के दौरान स्वय मिट गये। अध्ययन के दौरान ज्ञात हुआ कि कोई भी इमारत शर्की काल के पूर्व काल की विद्यमान नही है। उस काल के मूर्ति कला के बारे मे सीमित जानकारी है।

अन्वेषण के उपरान्त अधिकाश स्थलो से उत्तरी काली चमक वाले मृद्भाण्डो के उपरान्त पण्य या द्रव्य, लाल बर्तन भी पाये गये और काली चमक पालिस वाले बर्तन, काले एव लाल मृद्भाण्ड, भूरे बर्तन पाये गये। दूसरे वर्ग के स्थल नदियो के किनारे अवस्थित है। यह विशेषता देश के प्रागैतिहासिक एवं ऐतिहासिक काल के शुरूआत के स्थलो से समानता रखती है। अतीव भूतकाल मे नदियो के किनारे आवास के लिए दो कारणो से चुने जाते थे। प्रथम जल की उपलब्धता एव दूसरे नदिया व्यापारिक मार्ग प्रदान करती रही होगी। किसी दिशा मे शत्रुओ से रक्षा के विचार को भी ध्यान दिया जाता था। उस समय मे आवास नालियो (खाइयो) द्वारा घिरे होते थे परन्तु कही भी सुरक्षा दिवाल के अवशेष नही पाये गये।

लोग सुरक्षात्मक दृष्टि से प्राकृतिक वातारण की उपयोग करते थे। इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण शाहगज तहसील का 'माझीपुर' है जो तीन तरफ नाले से घिरा है तथा अन्य तरफ गोमती नदी द्वारा घिरा है। समय बीतने के साथ लोग अपेक्षाकृत

सभ्य होने लगे तथा जीने के नये तरीके खोज निकाले। अब इसाई सन् ई0 में लोगो को जल के लिए नदियों पर निर्भरता नही रही क्योकि अब वे कुआ, तालाब इत्यादि बनाना जान गये थे। अतएव उत्तरीकाली चमक वाले मृद्भाण्डो के बाद के स्थल आवश्यक रूप मे नदियों के किनारे स्थित नही हैं। अब तक पकाये गये ईटो का प्रयोग आवासीय तथा इमारती स्थलो मे पर्याप्त मात्रा मे प्रयुक्त है। कस्बे नियोजित होते थे, जो दो या चार दरवाजो के साथ सुरक्षा दीवाल से घिरे होते थे। जफराबाद स्थल उत्तरीकाली चमक वाले मृद्भाण्डों के बाद के काल के नियोजित कस्बे का प्रतिनिधित्व करता है। जब कभी आवास पूर्णत. नदी के किनारे होता था। बाढ से रक्षा हेतु एक लम्बी दीवाल बनायी जाती थी। मडियाहूँ तहसील का भवरपुर–स्थल इसी प्रकार का है।

साधारणत ऐसे प्राचीन आवास जनपद मे बहुत कम है विशेषकर लाल बर्तन। शाहगज तहसील का माझीपुर एवं जौनपुर तहसील का जफराबाद स्थल काफी बडे है। इसमें से पहला आस–पास के धरातल से लगभग 15 मीटर उँचा है। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि अधिकाश स्थल सतत् कृषि एव उनके प्राचीन समय के पदार्थ यथा ईटे चोरी आदि से नष्ट हो गये। स्थानीय परम्पराए अधिकाश स्थलो को कुछ जन–जातियो से जोडती है, जैसे – भर, सोइरी इत्यादि।

कुछ स्थलों का सक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है जिससे उनके स्वरूप की जानकारी हो सकेगी। उनके माप अनुमानित रूप मे दिये गये है।

बांध गॉव – यह शाहगज तहसील मे स्थित है। यह 70 मीटर लम्बा, 50 मीटर चौडा एव 7 50 मीटर ऊॅचा है। यहॉ के प्राचीन अवशेषो मे प्रमुख लाल मृद्भाण्ड, बडे आकार की ईटे, पशुओ के नाद इत्यादि है।

गैरवहा डीह – यह शाहगज तहसील मे अवस्थित है। यह 70 मी0 लम्बा, 30 मी0 चौडा एव 5 मी0 ऊॅचा है। यहॉ के प्रमुख अवशेषो मे लाल बर्तन एव दो टेराकोटा चित्रण एक तो आदमी का और दूसरा किसी जानवर का है।

अड़सिया बाजार – यह शाहगज तहसील मे स्थित है। यह 120 मी0 लम्बा, 100 मी0 चौडा और 7 मी0 ऊॅचा है। यहॉ के प्राचीन भग्नावशेषो मे लाल बर्तन, पशु का टेराकोटा चित्र, पत्थर एवं शीशे के टुकडे तथा टेराकोटा गेद प्रमुख हैं।

असैथा का डीह – यह लगभग 25 मी0 लम्बा, 17 मी0 चौडा तथा 3 मी0 ऊॅचा है। यहॉ से लाल मिट्टी के बर्तन एव बडे आकार की ईटे पायी गयी है।

गोरहरी की कोट – यह 30 मी0 लम्बा, 20 मी0 चौडा एव 8 मी0 ऊँचा हे। यहॉ के प्राचीन अवशेषो मे लाल बर्तन प्रमुख हैं।

हुसेनाबाद की कोट – यह शाहगज तहसील मे स्थित है। यह 95 मी0 लम्बा, 60 मी0 चौडा तथा 20 मी0 ऊँचा पुरातात्विक–स्थल है। यहॉ से लाल बर्तन, सरचनात्मक एव खाई के अवशेष मिलते हैं।

कोटिया – यह शाहगज तहसील मे अवस्थित है। यहॉ से लाल मृद्भाण्ड, टेराकोटा चित्र तथा मुस्लिम कालीन शीशे की चमक वाले बर्तन पाये जाते है।

बावन का डीह – यह शाहगज तहसील में स्थित है। इसकी लम्बाई 80 मी0, चौडाई 66 मी0 एव ऊँचाई 12 मी0 है। यहॉ से लाल मृद्भाण्ड, टेराकोटा चित्र तथा ताबे के गोल सिक्के पाये गये हैं।

डीहा – यह 150 मी0 लम्बा, 110 मी0 चौडा तथा 8 मी0 ऊँचा है। यहॉ से लाल बर्तन एव मुस्लिम काल के चमकीले बर्तन पाये गये हैं।

माझीपुर की कोट – यह शाहगज तहसील मे अवस्थित है। इसकी लम्बाई 200 मी0, चौडाई 65 मी0 तथा ऊँचाई

15 मी0 है। इस स्थल से उत्तरकाली चमक वाले मृद्भाण्ड, भूरे एव लाल मृद्भाण्ड, मुगल कालीन चमकीले बर्तन तथा कई टेराकोटा पाये गये हैं। इस स्थल की प्राकृतिक सुरक्षा की व्यवस्था है, जो नाला द्वारा तीन दिशा मे अन्य तरफ गोमती द्वारा घिरा है।

मुबारकपुर कोट – यह शाहगज तहसील मे अवस्थित है। इसकी लम्बाई 50 मी0, चौडाई 30 मी0 एव ऊँचाई 4 मी0 है। यहॉ से लाल बर्तन, मुस्लिम कालीन चमकीले बर्तन आदि पाये जाते हैं। एक मध्यकालीन छोटी से मस्जिद भी यहॉ पायी गई है।

कोट की मोरी – यह कोट 40 मी0 लम्बी, 30 मी0 चौडी, तथा 5 मी0 ऊँची है। यहॉ से कुछ एन0वी0पी0 के अवशेष, लाल बर्तन तथा मुस्लिम–कालीन चमक वाली अन्य वस्तुएं भी पायी गयी है।

टियारा कोट – यह शाहगज तहसील मे पायी जाती है। यह 40 मी0 लम्बी, 30 मी0 चौडी तथा 3 मी0 ऊँची है। यहॉ से लाल बर्तन, टेराकोटा गुरिया (माला की दाना), गेद एवं ईट के टुकडे पाये जाते हैं।

कुहीन कलां – यह भी शाहगज तहसील मे अवस्थित हैं। यह हिन्दू मन्दिर का प्राचीन स्थल है। यहॉ से विष्णु के दशावतार एव कई अन्य छोटी मूर्तिया पायी गयी है।[27]

तालिका – 6

जौनपुर जनपद के ताम्र पाषाणिक स्थानों की सूची और उनकी अवस्थिति

क्रम सख्या	स्थानों का नाम	तहसील
15	बाध गाव	शाहगज
16	गैरवहाडीह	शाहगज
17	अडसिया बाजार	शाहगज
18	असैथा का डीह	शाहगज
19	गोरहरी की कोट	शाहगज
20	हुसेनावाद की कोट	शाहगज
21	कोढिया	शाहगज
22	बावन की डीह	शाहगज
23	डिहा	शाहगज
24	माझीपुर की कोट	शाहगज
25	मुबारकपुर कोट	शाहगज
26	कोट की मोरी	शाहगज
27	टियारा कोट	शाहगज
28	कुहीन कला	शाहगज
29	गढ गोपालपुर	शाहगज
30	रवनिया की कोट	शाहगज
31	माहदा की कोट	शाहगज
32	डरारी डीह	शाहगज
33	भरही कोट	शाहगज
34	बदलापुर की कोट	शाहगज

35	हामीदपुर की कोट	शाहगज
36	असरफाबाद डीह	शाहगज
37	लल्लेपुर	शाहगज
38	हौज	जौनपुर
39	जफराबाद	जौनपुर
40	महल	जौनपुर
41	उरूरी कोट	शाहगज
42	खलगवा मठ	शाहगज
43	केशवपुर	शाहगज
44	सुल्तानपुर	जौनपुर
45	सादीपरु	जौनपुर
46	परियावॉ	जौनपुर
47	ओइना	केराकत
48	थाना गद्दी	केराकत
49	खटहरा	केराकत
50	बेलाव	केराकत
51	हरिहरपुर	केराकत
52	रामपुर	मडियाहूँ
53	कवरपुर	मडियाहूँ
54	बारी गाव	मडियाहू
55	तेजगढ	मडियाहूँ
56	सागर	मछली शहर

टिप्पणी और सन्दर्भ

1 शर्मा, जी0आर0 (1973), मेसोलिथिक लेक कल्चर्स इन द गगा बैली, इण्डिया प्रोसीडिंग्स आफ द प्रीहिस्टोरिक सोसाइटी 39, पेज 129–146, शर्मा, जी0आर0 (1975), सीजनल माइग्रेशन ऐड मेसोलिथिक कल्चर आफ द गगा बैली, के0सी0 चट्टोपाध्याय मेमोरियल वाल्यूम मे प्रकाशित, इ0वि0वि0, इलाहाबाद पेज 1–120

2 शर्मा, जी0आर0, (1978), प्रागैतिहासिक मानव की कहानी गगा घाटी की प्राचीन सस्कृति पर नया प्रकाश, दिनमान, भाग–14, अक 34, 20 से 26 अगस्त, 1978, पेज–24,

3 शर्मा, जी0आर0 और मिश्रा, वीडी0, पाल और जे0एन0 (1980), एक्सकवेशन एट महदहा, इ0वि0वि0, इलाहाबाद, पाल, जेनएन0 (1882), वरियल प्रेक्टिसेज ऐड आर्कियोलॉजी रिकवरी, साथ मे कनेडी के0ए0आर0, लुकास, जे0आर0 पास्टर, आर0एफ0, जोस्टन, टी0आई0, लोवेन, एन0सी0 आदि।

4 पाण्डेय, जे0एन0 (1985), सेटेलमेट पैटर्न ऐड लाइफ इन द मेसोलिथिक पीरिएड इन यू0पी0, अप्रकाशिक डी0फिल्0 शोध प्रबन्ध, इ0वि0वि0, इलाहाबाद।

5 पाण्डेय, जे0एन0 ,1985), सेटेलमेट पैटर्न ऐड लाइफ इन द मेसोलिथिक पीरिएड इन यू0पी0, अप्रकाशित डी0फिल0 शोध प्रबन्ध, इ0वि0वि0, इलाहाबाद।

6 शर्मा, जी0आर0 (1973), इस्टोन इज इन द विन्ध्याज ऐड द गगा बैली, रेडियो कार्बन डेट्स ऐड इण्डियन आर्कियोलॉजी (सम्पा0) अग्रवाल, डी0पी0 और घोस, ए0 पेज0 129—130

7 वर्मा, आर0के0, मिश्रा, वी0डी0, पाण्डेय, जे0एन0, व पाल, जे0 एन0, (1985), ए प्रीलिमिनरी रिपोर्ट ऑन द एक्सकवेशन्स एट दमदमा, मैन ऐड इन्वायर्नमेट, वाल्यूम—12 पेज 115—122

8 शर्मा, जी0आर0 और अन्य (1980), फ्राम हन्टिग गेदरिंग टू फूड प्रोडक्शन ऐड (1977), सम ऐक्सपेक्ट्स आफ इण्डियन आर्कियोलॉजी, इलाहाबाद, पेज 53

9 पाल, जे0एन0 (1986), माइक्रोलिथिक इडस्ट्री आफ दमदमा, पुरातत्त्व, — 16 पेज 1—5

10 शर्मा, जी0आर0, मिश्रा, वी0डी0 मण्डल, डी0, मिश्रा, बी0डी0 और पाल, जे0एन0 (सम्पादित) विगनिग आफ एग्रीकल्चर, इलाहाबाद पेज 229—230

11 पाल, जे0एन0, मेसोलिथिक सेटेलमेट इन द गगा बैली मैन एण्ड इन्वायरमेट के अक 19, 1994 मे प्रकाशित।

12 शोधकर्त्ता ने सर्वेक्षण और प्रकाशित—अप्रकाशित साहित्यिक श्रोतो के आधार पर जौनपुर जनपद मे अनेक स्थलो को खोजने का प्रयास किया है। जिनका विस्तृत विवरण इस उप अध्याय मे वर्णित है।

13 दुबे, आर0डी0 (1988), जौनपुर का ऐतिहासिक एव पुरातात्त्विक व्यक्तिगत, पेज 30—40

14 गुप्त, एन0एल0 (1988), उत्तर प्रदेश डिस्ट्रिक गजेटियर, जौनपुर जनपद, लखनऊ, पेज 1–20

15 सय्यद एकबाल अहमद, शर्की राज्य जौनपुर का इतिहास।

16 गुप्त, एन0एल0 (1988), उत्तर प्रदेश डिस्ट्रिक गजेटियर, जौनपुर जनपद, लखनऊ पेज 1–20,

17 श्री मजहर हुसैन, बनारस राज्य का इतिहास, पृ0 10–21,

18 जौनपुरनामा, मौलवी खैरूद्दीन फारसी।

19 पूर्वाक्त।

20 शर्की आर्किटेक्चर ज्योग्राफिया जौनपुर भाग–1, पृ0 38–41,

21 सय्यद इकबाल अहमद, शर्की राज्य जौनपुर का इतिहास, पृ0–98

22 अल्तेकर ए0एस0, हिस्ट्री आफ वाराणसी,

23 प्रभू प्रताप गौरी शकर, पृ0–40, मसजिदे जौनपुर पृ0– 3

24 अल्तेकर ए0एस0 हिस्ट्री आफ वाराणसी,

25 जौनपुर का इतिहास, जौनपुर (1955ई0) पृ0–11

26 अल्तेकर, ए0एस0 हिस्ट्री आफ वाराणसी, पृ0 22–24,

27 दूबे रामदेव, जौनपुर का ऐतिहासिक एव पुरातात्विक व्यक्तित्त्व, पेज – 30–40,

चतुर्थ अध्याय

प्राप्त नवीनतम् साक्ष्यों के सन्दर्भ में जौनपुर जनपद का गंगाघाटी के पुरातत्त्व में स्थान या महत्त्व

लगभग 4040 किलोमी0 के क्षेत्रफल मे विस्तारित जौनपुर जनपद, प्राचीनकाल मे कोशल और काशी महा जनपदो का विभाजक क्षेत्र एव राजनीतिक दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण परिक्षेत्र था, वही पर प्राकृतिक समृद्धि, नदियो–झीलो एव बाग–बगीचो के कारण मानव विकास की महत्त्वपूर्ण कार्य स्थली भी रहा है। यही कारण है कि मानव सभ्यता के विकास का अनुक्रम यहॉ कभी टूटता हुआ नजर नही आया। सर्वेक्षण के क्रम मे मैने पाया कि जहॉ पर मानव अधिवास एक स्थान पर बना, वह स्थान परवर्ती युगो मे भी किन्ही न किन्ही रूपों मे मानव का अधिवास क्षेत्र बना रहा। पूर्वमध्यकाल और मध्यकाल में यह क्षेत्र राजनीतिक दृष्टिकोण से अत्यन्त ही सवेदनशील एव चर्चित रहा। हर्षवर्धन के साम्राज्य के पतन के बाद जहॉ पर उत्तरी भारत मे सत्ता का विकेन्द्रीकरण प्रारम्भ होता है, उससे जौनपुर भी अछूता नही रहा। खस, किन्नर, सोइरी और अनेकानेक स्थानीय जातियो के सरदार यहॉ पर अपने छोटे–छोटे तथा कथित राज्यो को स्थापित करके शासन करना प्रारम्भ किया। भारत मे दिल्ली सल्तनत की स्थापना के बाद यह क्षेत्र बगाल और दिल्ली के मध्य मे होने के कारण राजनीतिक दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो गया। बगाल विजय के दरम्यान एव समय–समय पर बगाल मे हो रहे विद्रोह को शात करने के लिए आते समय तुर्क सरदार प्राय यहॉ पर रूकते थे। जिसके कारण क्रमश मध्यकाल मे यह महत्त्वपूर्ण क्षेत्र होता चला गया। जिसके फलस्वरूप दिल्ली सल्तनत के विघटन होते समय यहॉ

पर उनकी एक महत्त्वपूर्ण सरदार ख्वाजा जहॉ ने मलिक उस सरवर की उपाधि धारण करते हुए क्षेत्रीय राज्य शर्की साम्राज्य की नीव रखी। जो 14वी सदी के उत्तरार्द्ध से लेकर 15वी सदी के उत्तरार्द्ध तक अपनी समृद्धि एव सास्कृतिक उपलब्धियो के चलते पूरे भारत मे पूरब के सिराज के नाम से सुख्यात हुआ।[1] भारत मे मुगलो की सत्ता स्थापित होने के पश्चात भी यह क्षेत्र मुगलो के अधीन अपनी महत्ता को बरकरार रखा। अग्रेजो के समय भी यह क्षेत्र अपनी विशिष्ट भौगोलिक स्थिति के कारण एव जागरूकता के कारण चर्चित रहा। चाहे 1857 का स्वतत्रता सग्राम हो या असहयोग या सविनय अवज्ञा आन्दोलन हो अथवा भारत छोडो आन्दोलन हो, सभी मे यहॉ के रण बाकुरो ने बढ–चढ करके हिस्सा लिया। आज भी हम देखते है कि यह जनपद कई मामलो मे भारत की समन्वय सस्कृति का प्रतिनिधित्त्व करता है। भारत के विकास मे एव समृद्धि मे अपने अन्तर्निहित स्वरूप के चलते महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है।

चूकि हमारे विषय का अध्ययन जौनपुर जनपद की प्रागैतिहासिक एव आद्यैतिहासिक सस्कृतियो का विवचेन है। यदि प्रस्तुत सन्दर्भ मे देखे तो यहॉ पर सर्वप्रथम मानव अधिवास के प्रमाण अनुपुरापाषाणकाल (मध्य पाषाण और पूर्व पाषाण काल का सध्रि स्थल) से प्राप्त होते है। अनुपुरापाषाणकाल से सम्बन्धित अनेक स्थल अब तक उद्घाटित हुए है। जिनमे नगौली, थलोई, कवेटली, पूरे गम्भीर

शाह महत्त्वपूर्ण है। प्राय इन स्थलो से मध्य पाषाण कालिक उपकरणो के प्रमाण भी प्राप्त हुए है। लेकिन अब तक जौनपुर जनपद के किसी भी स्थल से नियोलिथि (नवपाषाण कालिक उपकरण) नही प्राप्त हुये है।[2] बहुत सम्भव है कि नव पाषाणकालिक स्थल इस क्षेत्र मे विद्यमान हो, लेकिन अब तक उन्हे खोजा नही जा सका। अतएव यह सकारात्मक उम्मीद की जा सकती है कि भविष्य मे इस दिशा मे सकारात्मक कदम बढेगा।

यहॉ के अनेक स्थलो से ताम्रपाषाणकालिक उपकरण प्रकाश मे आये है। जिनमे भगवानगज, एकहुऑ, थलोई, फरीदाबाद, बजराटीकर, जफराबाद, जमदग्निपुर आदि है।[3] प्राय ये स्थल परवर्ती युगो मे मानव अधिवास के विशिष्ट क्षेत्र के रूप मे विकसित हुए। जौनपुर जनपद के अनेक स्थलो से गैरिक मृद्भाण्ड (ओ0सी0पी0), काले एव लाल रग के मिट्टी के बर्तन एव काले रग के मिट्टी के बर्तन प्रतिवेदित हुये है। उत्तरीकाली चमकीली पात्रपरम्परा (एन0बी0पी0डब्ल्यू0) के पात्र अपने दोनो उपकालो (प्री0 एन0बी0पी0डब्ल्यू) पूर्व उत्तरी काली चमकीली पात्र परम्परा तथा (लेटर एन0बी0पी0डब्ल्यू0) परवर्ती उत्तरी काली चमकीली पात्र परम्परा के बर्तनो के साथ प्राप्त हुए है।[4] उल्लेखनीय है कि एन0बी0पी0डब्ल्यू0 के स्थल इस क्षेत्र मे द्वितीय नगरीय सभ्यता के स्थल के रूप मे प्राप्त

होते है। इस जनपद के बीचोबीच बहने वाली सई नदी (स्यान्दिका) काशी एव कोशल महाजनपदो का विभाजक रेखा थी।

इस जनपद की महत्त्वपूर्ण नदी गोमती है जो जनपद के उत्तरी एव पश्चिमी भाग के कोने से प्रवेश करते हुए इस जनपद को जीवन दायिनी स्वरूप प्रदान करती है। इन दोनो नदियो के किनारे मानव सभ्यता का विकास हुआ एव महत्त्वपूर्ण नगर विकसित हुए। मध्य गगा घाटी क्षेत्र की सस्कृति के अनेक महत्त्वपूर्ण पुरातात्त्विक स्थलो का विस्तृत पैमाने पर उत्खनन हुआ है।[5] लेकिन अब तक जौनपुर जनपद मे किसी भी स्थल का विस्तृत पैमाने पर उत्खनन नही हुआ है। यद्यपि अनेक ऐसे स्थल है जिनका यदि वृहद् पैमाने पर समुचित उत्खनन करवाया जाय तो अनेक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्य प्रकाश मे आ सकते है। ध्यातव्य है कि जौनपुर जनपद की ठीक पश्चिम मे स्थित प्रतापगढ जनपद अन्तर्गत पट्टी तहसील मे अनेक महत्त्वपूर्ण स्थल सरायनाहरराय, माहदहा, दमदमा (बारीकलॉ) के विस्तृत उत्खनन से महत्त्वपूर्ण तथा प्रकाश मे आए है जिनसे न केवल मध्य गगाघाटी के प्रागैतिहास अपितु समस्त भारत एव विश्व के प्रागैतिहास मे अनेक नये तथ्य जुडे है। अपने विगत अध्यायो के विवेचन के क्रम मे मैने पाया कि प्राय सम्पूर्ण गगाघाटी मे मानव विकास की परम्परा कमोवेश एक सी रही। ये स्थल प्राचीन गोखुर झीलो के किनारे स्थित है या वर्तमान झीलो एव तालो के नदियो के किनारे है प्राय. सभी

स्थलो से जो उपकरण प्रतिवेदित हुए है। उनकी निर्माण तकनीक, निर्माण की सामाग्री और उनमे क्रमश विकास का परिलक्षण कमोवेश सबमे एक समान है। वर्तमान गोरखपुर[6] देवरिया एव सन्त कबीरनगर जनपदो से जो नवपाषाणकालिक स्थल प्रकाश मे आये है उनकी भी प्रकृति में उपरोक्त समानताए परिलक्षित होती है। जौनपुर जनपद स्थित अनेक ऐसे महत्त्वपूर्ण पुरास्थल है जिनका यदि क्रमबद्ध विस्तृत पैमाने पर उत्खनन कार्य किया जाय तो यहॉ की मानव विकास परम्परा पर समुचित प्रकाश पड सकता है क्योकि इलाहाबाद और प्रतापगढ के जो स्थल है यदि उनको वर्तमान भौगोलिक परिवेश से अर्वाचीन भौगोलिक स्थिति एव परिवेश से समीकृत करे तो पाते है कि इन जनपदो के स्थल उत्तरी विन्ध्य क्षेत्र ओर मध्यगगाघाटी के प्रवेशद्वारा सदृश थे। जैसे–जैसे मानव उत्तर पूर्व की ओर बढता गया। उसके आवासीय एव भोजन–व्यवस्था मे परिवर्तन आता गया। इन दो प्रवेश द्वार के जनपदो मे स्थित स्थलो मे पर्वतीय पृष्ठभूमि दिखलायी दे सकती है लेकिन दूरी एव कच्चे मालो की कमी के परिणाम स्वरूप मानव ने अपनी आजीविका और रहन–सहन की नवीन शैली को पारिस्थत्यानुरूप अपनाया। अतएव यदि जौनपुर जनपद के किसी भी स्थल का क्रमबद्धता के साथ उत्खनन किया जाय तो नवीन ही नही अपितु महत्त्वपूर्ण तथ्य प्रकाश मे आने की प्रबल सम्भावना है।

मैने अपने सर्वेक्षण के सर्वेक्षण के क्रम मे पाया कि इतिहास युग के प्रारम्भिक चरण मे यह जनपद महात्मा बुद्ध और महावीर स्वामी की कर्म स्थली अवश्य ही रही होगी। यही नही सारनाथ यहॉ पर कालान्तर मे बौद्ध धर्म का महत्त्वपूर्ण स्थल एव तीर्थ के रूप मे विकसित हुआ। जिससे महात्मा बुद्ध के जीवन तपस्या स्थल आदि तक जाने का मार्ग इसी स्थल से होकर जाता था। चातुर्मास शिविर एव महात्माबुद्ध से सबधित स्थलो का गहनता से सर्वेक्षण किया जाय तो उनके इस जनपद मे उपलब्ध होने की प्रबल सम्भावना हो सकती है।[7]

इस प्रकार हम देखते है कि सम्पूर्ण जनपद का और विशेषत सई नदी के किनारे स्थित स्थलो एव अन्य नदियो के किनारे स्थित स्थलो की यदि समवेत उनसे प्राप्त सामाग्री के परिप्रेक्ष्य मे समीक्षा करे तो पाते है चूकि ये स्थल मानव सम्यता सस्कृति के विकास मे अहम भूमिका रखते है। केवल सतह पर प्राप्त प्रमाणो के आधार पर यद्यपि हम उनका मध्यगगाघाटी के अन्य स्थलो से प्राप्त सामाग्रियो के साथ सन्दर्भीकरण कर लेते है लेकिन यदि सम्पूर्ण उत्खनित सामाग्रियो के साथ सन्दर्भित करके अध्ययन किया जाता तो बेहतर तस्लीक की सम्भावना बन सकती है। मध्यगगाघाटी मे स्थित इस जनपद के पुरातत्त्व का स्वरूप वस्तुत मध्यगगाघाटी के पुरातात्त्विक सास्कृतिक अनुक्रम के अनुरूप ही है जिसने भारतीय सस्कृति के विकास मे महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।

टिप्पणी और सन्दर्भ

1 सय्यद एकबाल अहमद, शर्की राज्य जौनपुर का इतिहास।

2 पाल, जे0एन0 मेसोलिथिक इन द गगा बैली मैन एण्ड इन्वायरमेन्ट के अक 19, (1994) मे प्रकाशित

3 दुबे, आर0डी0 (1988), जौनपुर का ऐतिहासिक एव पुरातात्त्विक व्यक्तित्त्व।

4 पाण्डेय, जे0एन0 (1985), सेटेलमेट पैटर्न एड लाइफ इन द मेसोलिथिक पीरिएड इन यू0पी0 अप्रकाशित डी0फिल्0 शोध प्रबन्ध, इ0वि0वि0, इलाहाबाद।

5 शर्मा, जी0आर0 (1973), मेसोलिथिक लेक कल्चर्स इन द गगा वैली, इण्डिया प्रोसीडिग्स आफ द प्रीहिस्टोरिक सोसाइटी 39, शर्मा, जी0आर0 (1975), सीजनल माइग्रेशन ऐड मेसोलिथिक कल्चर आफ द गगा वैली, के0सी0 चट्टोपाध्याय मेमोरियल वाल्यूम मे प्रकाशित, इ0वि0वि0, इलाहाबाद पेज 1–120, शर्मा, जी0आर0 (1980), एक्सकवेशन एट महदहा, इ0वि0वि0, इलाहाबाद, पाल, जे0एन0 (1982), वरियल प्रेक्टिसेज ऐड आर्कियोलॉजी रिकवरी, साथ मे कनेडी, के0ए0आर0, लुकास, जे0आर0, पास्टर, आर0एफ0, जोस्टन, टी0आई0, लोवेन, एन0सी0 आदि।

वर्मा, आर0के, मिश्रा, बी0डी0, पाण्डेय, जे0एन0 व पाल, जे0एन0 (1985), ए प्रीलिमिनरी रिपोर्ट ऑन द एक्सकवेशन्स एट दमदमा, मैन ऐड इन्वायर्नमेट, वाल्यूम–9, पेज–45–65, पाल,

जे0एन0, (1988), मेसोलिथिक डबुल वरियल फ्राम रीसेन्ट एक्सकवेशन्स एट दमदमा, मैन एड इन्वायर्नमेट वाल्यूम – 12 पेज 115–122

शर्मा, जी0आर0, (1973), इस्टोन इज इन द विन्ध्याज ऐड द गगा वैली रेडिया कार्बन डेट्स ऐड इण्डियन आर्कियोलाजी (सम्पा0) अग्रवाल, डी0पी0 और घोष, ए0,पेज 5–6

शर्मा, जी0आर0, (1978), प्रागैतिहासिक मानव की कहानी गगा घाटी की प्राचीन सस्कृति पर नया प्रकाश, दिनमान, भाग–4, अक–34, 20 से 26 अगस्त, 1978 पेज– 24

शर्मा, जी0आर0 और अन्य (1980), फ्राम हन्टिग गेदरिंग टू फूड प्रोडक्शन एड डोमेस्टीकेशन आफ एनीमल्स एक्सकवेशन्स एट चोपनी माडी, महदहा ऐड महगडा।

पाल, जे0एन0 (1984), माइक्रोलिथिक इडस्ट्री आफ दमदमा, पुरातत्त्व – 16 पेज 1–5,

6 सिह, पी (1994), एक्सकवेशन ऐट नरहन, (1984), इमलीडीह, सिह, पी0, एक्सकवेशन, इमलीडीह खुर्द, पुरातत्त्व न– 22, पेज– 120–122।

7 दूबे, अनिल कुमार (1997), मध्यगगाघाटी मे अधिवास प्रक्रिया, जौनपुर जिले के विशेष सन्दर्भ मे डी0फिल0 उपाधि के लिए प्रस्तुत अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, इ0वि0वि0, इलाहाबाद।

उपसंहार

उपसंहार

मध्यगगाघाटी, गगा और उसी सहायक नदियो द्वारा सिचित है और भारत की सस्कृति के निर्माण एवं विकास मे इसका अद्वितीय योगदान है। इस क्षेत्र के समीपवर्ती विन्ध्य क्षेत्र मे मानव का सस्कृति का प्रारम्भ प्रातिनूतन कालीन निम्न पूर्व पाषाण काल से ही प्रारम्भ होता है, जो निरन्तर विकसित होती है एव सास्कृतिक अनुक्रम मे ऐतिहासिक काल के प्रारम्भ तक प्राप्त होती है।

मध्यगगाघाटी मे प्रथम मानव संस्कृति के प्रमाण प्राति नूतन काल के अन्त और नूतन काल के प्रारम्भ की अनुपुरा पाषाण (इपीपैलियोलिथिक) सस्कृति से सम्बन्धित है, जो स्पष्टतः विन्ध्य क्षेत्र से आकर गगा के मैदान को अपना उपनिवेश बनाने वाली प्रथम सस्कृति है। एक बार इन दोनो मैदानी और पठारी क्षेत्रो का जो पारस्परिक सास्कृतिक सम्पर्क प्रारम्भ हुआ, वह निरन्तर बना रहा और दोनो क्षेत्रो की पारस्परिक आदान–प्रदान मे वस्तुत भारतीय सस्कृति को पुष्ट आधार प्रदान किया।

प्राति नूतन काल के अन्त मे जलवायु मे हुए परिवर्तन के कारण विन्ध्य क्षेत्र के मानव को गगा के मैदान मे आने के लिए

बाध्य होना पडा। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रारम्भ में यह आगमन अल्पकालिक और ऋतुनिष्ठ था। उपकरण निर्माण के लिए पत्थर लेकर विन्ध्य क्षेत्र का मानव मैदान मे आता था, यही उपकरण निर्माण करता और शिकार तथा सग्रह मे उनका प्रयोग करता और कुछ दिनो के बाद पुन वापस चला जाता था। यही कारण है कि अनुपुरा पाषाण काल के सभी स्थलो (इलाहाबाद मे अहिरी और कुढा, वाराणसी मे गढवा और प्रतापगढ मे सुलेमान पर्वतपुर, साल्हीपुर एवं मन्दाह) पर दीर्घकालिक आवास के प्रमाण नही प्राप्त होते हे।। जैविक अवशेष भी ऐसे स्थलो से कम मिले है। चिकनी कडी मिट्टी मे ऐसे स्थलो पर चर्ट पर भी उपकरण मिलते हैं। इस सस्कृति के स्थलो को शिविर स्थल के अन्तर्गत रखा गया है, जो यायावर मानव के अल्पकालिक आवास क्षेत्र थे। उत्खनन के अभाव मे यह नही कहा जा सकता कि ये झोपडी जैसे घर बनाते थे या नही। लेकिन विन्ध्य क्षेत्र मे जैसा कि चोपनीमण्डों के उत्खनन से पता चलता है कि एक–दूसरे के सन्निकट गोलाकार झोपडियॉ इस संस्कृति के लोग बनाते थे।

नूतन काल मे उपयुक्त जलवायु का आर्विभाव हुआ। प्राकृतिक संपदा मे सम्पन्नता आई। तकनीकि विकास के कारण लघु पाषाण उपकरणो का धनुष–बाण के लिए प्रयोग और भोजन

मे वन्य अन्न का प्रयोग सिल–लोढे मे पीसकर खाद्यान्नो का भोजन मे उपयोग आदि कारणो से मध्य पाषाण काल मे मानव जीवन अपेक्षाकृत बेहतर हुआ और जनसख्या मे तीव्र वृद्धि हुई। अब गगा के मैदान के जिस क्षेत्र की पाषाण युगीन मानव ने खोज की थी, उसकी प्राकृतिक सम्पन्नता के कारण इस क्षेत्र को भी बडे पैमाने पर आबाद किया गया, जिसके प्रमाण लगभग 200 मध्य पाषाणिक स्थलों के रूप मे मिलते है। ये स्थल यहा की प्राचीन धनुषाकार झीलों अथवा इन झीलो से निकलने वाली नदियों के तट पर स्थित हैं। उल्लेखनीय है कि अधिवासो के निर्माण के लिए मध्य पाषाणकाल से ही ऐसे भूभागो का चयन किया गया जो कुछ ऊँचाई पर स्थित था जहॉ बाढ का पानी आसानी से नही पहुचता था। स्थल का चयन की यह परम्परा हमे परवर्ती ऐतिहासिक काल तक निरन्तर दिखाई पडती है। मध्य पाषाणिक मानव ने अपने आवासो का निर्माण गोलाकार अथवा अण्डाकार झोपडियो के रूप मे करता था। सराय नाहर राय, महदहा और दमदमा नाक मध्य पाषाणिक स्थलो के उत्खनन से प्रमाणित होता है कि कुछ ऐसे स्थल है, जहॉ इस सस्कृति के लोग स्थाई रूप से निवास करने लगे थे। यद्यपि उनकी अर्थ–व्यवस्था आखेट और सग्रह पर ही आधारित थी। जगलो और घास के मैदानो में प्रचुर मात्रा में विभिन्न प्रजाति के हिरण, बारहसिहा, सुअर और खरगोश जैसे

शाकाहारी जानवर थे। इन स्थलों के उत्खनन से हाथी, गैडे और भैसे जैसे बडे जानवरो के प्रमाण भी मिले है। नदियो और झीलो में मछली, कछुए और घोघे तथा विभिन्न प्रजातियो के पक्षी पाए जाते थे, जिनके अवशेष अनेक स्थलो की खुदाइयो से प्राप्त हुए हैं। इस तरह की खाद्य सामग्री की प्रचुरता ने ही सम्भवत मध्य पाषाणिक जीवन मे स्थाई आवास को प्रेरित किया। इन अधिवासो मे गोलाकार झोपडियो के प्रमाण तो प्राप्त होते है लेकिन इनका निर्माण किस तरह किया जाता था, इसके बारे मे कोई जानकारी नहीं है। झोपडियो मे स्तम्भ गर्त अथवा बॉस–बल्ली के निशान से युक्त जली मिट्टी के टुकडे इनके फर्शो पर नही उपलब्ध हुए है। स्तम्भ गर्त के प्रमाण सिर्फ सराय नाहर राय के सामुदायिक झोपडी के फर्श और चोपनी मण्डो के फर्शो से प्राप्त हुए है। ये फर्श कई पर्तो मे प्राप्त होती है। और कभी–कभी ये फर्श जले हुए रूप मे मिलते है। लगता है कि इन्ही फर्श के ऊपर आग जलाई जाती थी। फर्श के भीतर और बाहर अनेक सख्या मे गोलाकार गर्त चूल्हे प्राप्त हुए है। जिनका प्रयोग खाद्य सामग्री को पकाने के लिए विशेषत पशुओ का मॉस भूनने के लिए किया जाता था। फर्श और गर्त चूल्हो के सन्निकट ही मध्य पाषाणिक मानव शवाधान प्रक्रिया करता था। आवास क्षेत्र के अन्दर ही शवाधान बनाने के पीछे मृतक के प्रति उसके स्नेह और आदर का बोध होता है। सभवत.

अग्नि की ऊर्जा और ऊष्मा से वह अपने मृतको के बाद के जीवन की कोई परिकल्पना रही होगी। पूर्व और पश्चिम अथवा पश्चिम–पूर्व मे विस्तीर्ण शवाधान सम्भवत सूर्य के प्रति उसके विचारो का प्रतिनिधित्व करता है। मध्य पाषाणिक अधिवास प्रक्रिया से सम्बन्धित विभिन्न पुरावशेषो के अध्ययन के द्वारा मध्य पाषाणिक सस्कृतिक के विविध पक्षो पर प्रकाश पडा है। जिसे मध्य पाषाणिक वायोआर्कियोलाजी के रूप मे विभिन्न भारतीय और विदेशी विद्वानो ने महत्ता प्रदान की है।

गंगाघाटी की मध्य पाषाणिक सस्कृतियो के विस्तार क्षेत्र मे ताम्र पाषाणिक सस्कृति के प्रमाण हमे मिले हैं। लेकिन अभी तक नव पाषाणिक सस्कृति का एक भी प्राथमिक स्थल नही प्राप्त हुआ है। मध्य पाषाणिक सस्कृति इस क्षेत्र मे कृषि और पशुपालक नव पाषाणिक सस्कृति के रूप मे क्यो विकसित नही हुई? यह अभी भी गगा घाटी के पुरातत्व का अहम अनुत्तरित प्रश्न है। हो सकता है कि अभी तक नव पाषाणिक स्थल की खोज होना बाकी है, जो परवर्ती जमाव के नीचे दबे है या यह भी हो सकता है कि जनसख्या के दबाव के कारण मनुष्य द्वारा अथवा नदियो की बाढ विभीषिका से ऐसे स्थल विनष्ट हो गए। लेकिन मध्य गगा घाटी के पूर्वी भाग मे (पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार मे) नव पाषाणिक

संस्कृति के बहुत से स्थल प्रकाश में आए हैं। कई स्थलों का उत्खनन भी हुआ है लेकिन यहाँ मध्य पाषाणिक संस्कृति के प्रमाण नहीं प्राप्त होते। पुरातात्विक प्रमाण ऐसा संकेत देते है जिस प्रकार मध्य गंगा घाटी के पश्चिमी भाग की मध्य पाषाणिक संस्कृति को विन्ध्य क्षेत्री की मध्य पाषाणिक संस्कृति ने जन्म दिया, उसी प्रकार पूर्वी क्षेत्र की नवपाषाणिक संस्कृति को भी विन्ध्य क्षेत्र की नव पाषाणिक संस्कृति ने अंकुरित और पल्लवित किया। बड़ी अथवा छोटी नदियों के तट पर उनकी बाढ़ की सीमा के ऊपर आवास के ऐसे भू–भागों को आवास के लिए चुना गया जहाँ बिना किसी प्रयास के कृषि के लिए उपयुक्त उर्वरा भूमि उपलब्ध थी। मध्य गंगा घाटी के लगभग सभी नव पाषाणिक स्थल एक बार आबाद हो जाने के बाद फिर वीरान नहीं हुए। इसलिए निम्नतम् धरातल पर स्थित नव पाषाणिक संस्कृति के जमाव बड़े पैमाने पर उत्खनित नहीं किए जा सके। फिर भी अधिवास सम्बन्धी जो प्रमाण उपलब्ध हुए हैं, उससे प्रतीत होता है कि गोलाकार अथवा अण्डाकार झोपड़ियाँ बनाई जाती थी। लकड़ी के स्तम्भ गर्तों पर निर्मित इन झोपड़ियों के चारों ओर बॉस–बल्ली अथवा घास–फूस की दीवाल बनाई जाती थी, जिस पर गीली मिट्टी का मोटा लेप लगाया जाता था। महगडा के उत्खनन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि एक घर में दो या दो से अधिक झोपड़ियाँ थी,

जिनका अलग–अलग कार्यो के लिए प्रयोग होता था। कुछ का उपयोग आवास अथवा रसोई घर के रूप मे और कुछ का उपकरण निर्माण के लिए अथवा कुटीर उद्योगो के लिए किया जाता था। कटी मिट्टी को पीटकर बनाये गये उसके फर्शो पर प्राप्त विभिन्न प्रकार की सामग्रियो के विश्लेषण से इस प्रकार के निष्कर्ष निकाले गये है। यद्यपि परवर्ती काल मे कृषक द्वारा उत्पादित बहुत से अनाजों के प्रमाण नव पाषाणिक धरातल से मिले है और कई प्रकार के पालतू पशुओ की हड्डियॉ प्राप्त हुई है। **लेकिन** समीपवर्ती जगलों से वन्य पशुओ और वनस्पतियो का सग्रह तथा जलाशयो का मछली इत्यादि के लिए प्रयोग किया जाता था। आत्मनिर्भर अर्थ–व्यवस्था के आविर्भाव के बावजूद पूर्ववर्ती अर्थ–व्यवस्था पूर्णतः परित्याग नही किया जा सका था।

ताम्र पाषाणिक सस्कृति काल मे अधिवास का स्वरूप नव पाषाणिक सस्कृति से अधिक भिन्न नही था। यद्यपि तकनीकी विकास के बहुत से लक्षण–चाक पर बने हुए बर्तनो अथवा ताबे पर बने हुए उपकरणो के रूप मे देखे जा सकते हैं, लेकिन इनकी अर्थ–व्यवस्था मे कोई परिवर्तन नही दिखाई पडता। चित्रित पात्र–परम्पराओ, बिन्दुओ से अलकृत् हड्डी के पुच्छल और साकेट युक्त वाणाग्र तथा मृण्मूर्तियॉ और मनके उनके कलात्मक पक्ष पर

प्रकाश डालते है। लेकिन इनके घर/मकान अधिकाशत गोलेकार झोपडियो के रूप मे मिलते है। मिट्टी की दिवालो से बने हुए घर ताम्र पाषाणिक संस्कृति के सदर्भ मे कुछ स्थलो से प्राप्त हुए है। इमलीडीह और चिराद जैसे स्थलो के उत्खनन से बहुत से चौडे मुँह वाले चूल्हे प्राप्त हुए है।

यद्यपि चित्रित और सादी, ब्लैक ऐड रेट वेयर और ब्लैक स्लिप्ड वेयर पात्र–परम्परा से युक्त ताम्र पाषाणिक सस्कृति के अतिम चरण मे इस मानव का लोहो से परिचय हो गया था। जिसके प्रमाण प्राक एन0बी0पी0डब्ल्यू0 सस्कृति के कई स्थलो से भी प्राप्त हुए हैं। लेकिन लोहे इस ज्ञान ने भी उनकी अर्थ–व्यवस्था मे कोई परिवर्तन नही कर पाया। इसलिए इनकी अधिवास प्रक्रिया मे कोई बडा परिवर्तन नही कर पाया। इसलिए इनकी अधिवास प्रक्रिया मे कोई बडा परिवर्तन एन0बी0पी0डब्ल्यू0 सस्कृत के प्रारम्भिक चरण मे भी नही दिखाई पडता। इसका कारण सभवत भारतीय परम्पराबद्धता ही रही हो। एन0बी0पी0डब्ल्यू0 सस्कृति के मध्य और परवर्ती चरण से हमे अधिवास प्रक्रिया मे पहली बार क्रान्तिकारी परिवर्तन के प्रमाण मिलते है। जब पकी ईटो से निर्मित, मकान, वलय कूप, आहत और ढली हुई लेख रहित मुद्राए अथवा अन्य सामग्रियाँ उपलब्ध होती है।

मध्य गगा का मैदान जलवायु की दृष्टि से बहुत विषम क्षेत्र है। क्योकि ग्रीष्म मे सहनशक्ति से अधिक गर्मी, शीत ऋतु मे कडाके की ठण्ड और वर्षा ऋतु मे नदियो की विभीषिका उत्पन्न कर देने वाला बाढ का यह क्षेत्र अपने मे विशिष्ट है। लेकिन इसके बावजूद भूमि की उर्वरता और जैविक सम्पदा की सम्पन्नता के कारण ही यह क्षेत्र मध्य पाषाणिक काल से लेकर आधुनिक काल तक निरन्तर सास्कृतिक विकास मे सलग्न रहा। जैसा कि चिरांद के उत्खनन से प्रतीत होता है कि यहॉ के स्थलों पर बार–बार प्राकृतिक विपदा के प्रमाण मिलते है। लेकिन मनुष्य ने इन स्थलो का परित्याग नही किया, उसने हर आपदा के बाद नये सिरे से अपने आवासो का निर्माण प्रारम्भ किया। इस क्षेत्र मे मानव ने सभवत परम्पराओ से हटकर नए मार्ग पर चलने का सहज प्रयास किया। इसीलिए अधिवास प्रक्रिया के मूल स्वरूप मे सास्कृतिक परिवर्तन के साथ बदलाव दिखलाई पडता है। पाश्चात्य देशो मे अधिवास प्रक्रिया के अध्ययन के जो प्रयास हुए हैं, उन्हे भारतीय सदर्भ मे, विशेषकर जमाव वाले स्थलो का उत्खनन दुरूह और खर्चीला है। अतः यहॉ के स्थलो से प्राप्त अधिवास प्रक्रिया सम्बन्धी प्रयास बदले परिप्रेक्ष्य मे किये जाने चाहिए।

सन्दर्भग्रन्थ सूची

संदर्भ ग्रंथ सूची
(BIBLIOGRAPHY)

अग्रवाल, डी0पी0 (1968)	दी पी0जी0डब्ल्यू0 *ए रिवोल्यूशन, द सेमिनार ऑन पी0जी0डब्ल्यू* अलीगढ मे प्रस्तुत शोध–पत्र।
अग्रवाल, डी0पी0, (1974)	*प्री हिस्टारिक क्रोनोलॉजी एण्ड रेडियो कार्बन डेटिंग और कुसमागर यस0, इन इण्डिया,* नई दिल्ली।
अग्रवाल, डी0पी0, (1984)	*आर्कियोलॉजी आफ इण्डिया,* नई दिल्ली,
अख्तर, नसीम (1969)	*एसोसियेटेड एण्टीक्युटीज इन द बी0आर0डब्ल्यू, पाटरीज इन एंशियेन्ट इण्डिया* मे (सम्पा0) सिन्हा, बी0पी0, पटना,
अग्रवाल, डी0पी0	1984 द आर्कियोलॉजी आफ इण्डिया सेलेक्ट बुक सर्विस सिन्डीकेट
	2002 आर्कियो–मेटेलर्जिकल स्टडीज इन इण्डिया ए रिव्यू इण्डियन आर्कियोलाजी ऐड इन्टरेक्टीव डिससिप्लिन्स (ई0डी0एस0 सेटर ऐड रवि कोरी सेटर) मनोहर पब्लिकेशन्स
आल्चिन, ब्रिजेट ऐड रेमण्ड	1983, द राइज आफ सिवलाइजेशन इन इण्डिया ऐड पाकिस्तान, सेलेक्ट बुक सिन्डीकेट, नई दिल्ली
आल्चिन, बी0आर0 और आल्चिन आर0 (1982)	*द राइज आफ सिविलाइजेशन इन इण्डिया ऐण्ड पाकिस्तान,* कैम्ब्रिज
अल्तेकर, ए0एस0 और मिश्रा, वी0 (1969)	रिपोर्टर्स आन कुम्रहार एक्शकवेशन, पटना
अन्सारी, जेड0 डी0 ऐड एम0के0 धावलिकर	1975, एक्सकवेशन आफ कायथा

अहमद, इकबाल (1968) — *शर्की राज्य जौनपुर का इतिहास,* जौनपुर, सिराज हिन्द प्रेस

इरडोसी, जार्ज, (1985) — *द एकोनामिक आर्गनाइजेशन आफ अर्ली हिस्टोरिक स्टेट्स इन गगेज वैली,* साउथ आर्कियोलाजी, 1983, नेपल्स

एडम्स, डब्लू0वाई (1968) — सेटेलमेन्ट पैटर्न इन माइक्रोकोजम द चेजिग आसपेक्ट्स आफ ए न्यूबियन विलेज, ड्यूरिंग ट्रवल्ब सेचुरीज

एलियट, एच0एम0 ऐड डाउसन, जे0 — द हिस्ट्री आफ इण्डिया ऐज टोल्ड वाई इट्स ओन हिस्ट्रोरियन्स, वाल्यूम्स दो से पाच, (इण्डियन रिप्रिन्ट, इलाहाबाद)

एटकिन्सन, आर0, जे0सी0 — फील्ड आर्कियोलाजी (लन्दन, 1946)

क्लार्क, डी0एल0 (1968) — *एनर्टिकल आर्कियोलाजी,* फर्स्ट एडीशन, लदन मेथ्यून

क्लार्क, डी0एल0 (1972) — *ए प्रोविजनल मॉडल आफ एन आयरन ऐज सोसायटी ऐड इट्स सेटेलमेट सिस्टम,*

क्लार्क, डी0एल0 (1972–ए) — *मॉडल्स ऐड पैराडिज्म इन कटम्प्रेरी आर्कियोलाजी,*

क्लार्क ग्राहम (1989) — *प्रीहिस्टोरिक पैटर्नस आफ आर्कियोलाजी,* कैम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस

क्रूक, डब्ल्यू — द ट्राइब्स ऐड कास्ट्स आफ द नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सेज ऐड अवध, वाल्यूम्स एक से चार, (कलकत्ता, 1896)

केनियन — बिगनिग्स इन आर्कियोलाजी (लन्दन, 1952)

क्लार्क, ग्राहम	आर्कियोलाजी ऐड सोसायटी (लन्दन, 1939)
कुमार, कृष्णा	1997 द फायर बोर्ड/ओ0सी0पी0 कल्चर ए रेव्यू आफ द प्राबलम इन द लाइट आफ रिसेन्ट डिसकवरीज, प्रागधारा
क्राफोर्ड, ओ0जी0एस0	आर्कियोलाजी इन द फील्ड (लन्दन, 1953)
कूक, एस0एफ0 और हेजर, आर0एफ0 (1968)	*रिलेशनशिप एमग हाउसेज, सेटेलमेट एरियाज ऐड पापुलेशन इन एवार्जिनल,* कैलीफोर्निया, ए सेटेलमेट अर्कियोलॉजी (सम्पा0) चाग, के0सी0, पाल, आल्टो नेशनल प्रेस,
कौशाम्बी, डी0डी0 (1963)	*द बिगनिग आफ द आयरन ऐज इन इण्डिया,* जर्नल आफ एकोनामिक ऐड सोशल हिस्ट्री आफ ओरियट 6,
कौशाम्बी, डी0डी0 (1971)	*द कल्चर ऐड सिविलाइजेशन आफ ऐशियेट इण्डिया इन हिस्टोरिकल आउटलाइन,* नई दिल्ली
कृपाशकर (1986)	*पैटर्न आफ लैड ओनरशिप ऐड बैकवर्डनेस, ए स्टडी आफ फोर विलेजेस इन जौनपुर डिस्ट्रिक्ट आफ इस्टर्न यू0पी0,* नई दिल्ली
कुमार रवीन्द्र (1989)	*आर्कियोलाजी आफ मिडिल गोमती बेसिन विथ स्पेशल रिफ्रेस टू सुल्तानपुर डिस्ट्रिक्ट,* पी0एच0डी0 उपाधि के लिए प्रस्तुत अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, बी0एच0यू0, वाराणसी
कुमार रवीन्द्र (1990)	*डिसर्प्सल आफ सेटेलमेन्ट इन द मिडिल गोमती बेसिन, इन आर्कियोलाजिकल इन्वेस्टीगेशन,* इन्डोपेसिफिक प्रीहिस्ट्री, 1990

केनेडी, के0ए0आर0, एन0सी0 लेवेल और सी0बी0, बूरो (1986) — *मेसोलिथिक ह्यूमन रिमेन्स फ्राम द गगा प्लेन* सराय नाहर राय, इताहका, कर्नेल युनिवर्सिटी

गौड, आर0सी0 — 1983 एक्सकवेशन ऐट अतरजी खेडा, मोतीलाल बनारसी दास, नई दिल्ली।

गौड, आर0सी0 (1988) — *एक्सकवेशन एट अतरजीखेडा,* नई दिल्ली

गुप्त, एन0एल0 (1988) — *उत्तर प्रदेश डिस्ट्रिक गजेटियर,* जौनपुर डिस्ट्रिक्ट, लखनऊ,

घोष, एन0एन0 — ऐन अर्ली हिस्ट्री आफ कौशाम्बी (इलाहाबाद, 1935)

घोष, ए0 — 1954–55 एक्सकेववेशन ऐट हस्तिनापुर ऐड एक्सप्लोरेशन इन दी अपर गगा ऐड सतलज, वेसीन्स

1982 श्रृग्वेरपुर– ए केसाइट फार द प्री हिस्ट्री ऐड अर्ली हिस्ट्री आफ द सेन्ट्रल गगा वैली,

चाल्स जिलबर्ट (ई0डी0) — लेराउज इनसाइक्लोपीडिया आफ आर्कियोलाजी, (1993)

चक्रवर्ती, डी0के0 — 1976 द बिगनिग्स आफ आयरन इन इण्डिया, एन्टीक्यूटी 50, 1976

1984–85 आयरन ऐड अर्वनाइजेशन ऐन इक्जामनेशन आफ द इण्डियन कान्टेक्स्ट, पुरातत्व

1992 द अर्ली एज आफ आयरन इन इण्डिया I & II आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस

चाग, के0सी0 (1958) — *स्टडी आफ द नियोलिथिक सोशल ग्रुपिग* इक्जाज्मपल्स फ्राम न्यू वर्ड, अमेरिकन एन्थ्रोपोलाजिस्ट 60

चाग, के0सी0 (1962) — *ए टोपोलाजी आफ सेटेलमेट ऐण्ड कम्यूनिटी पैटर्न इन सम सर्कमपोलर सोसाइटीज,* आर्कटिक एन्थ्रोपोलाजी 1

चाग, के0सी0 (1972) — *सेटेलमेट पैर्टन्स इन अर्कियोलाजी, ऐन एडीसन* – वेसले मोड्यूल इन एन्थ्रोपोलाजी न0–24

चाइल्ड, वी0जी0 (1934) — *नियोलिथिक सेटेलमेट इन द बेस्ट आफ स्काटलैड,* स्काटिस जियोग्राफिकल मैगजीन 50

चाइल्ड, वी0जी0 (1935) — *चेजिग मैथड्स ऐड एम्स इन प्रीहिस्ट्री, प्रोसीडिग्स आफ द प्रीहिस्टोरिक सोसाइटी,* न्यू सिरीज न0 1

चक्रवर्ती एम और मुखर्जी, डी0 (1971) — *इण्डियन ट्राईवल्स,* कलकत्ता

चट्टोपाध्याय, यू0सी0 (1988) — *सब्सटेन्स, वैरियोबिल्टी ऐड काम्पलेक्स सोशल फार्मेशन इन प्रीहिस्ट्री आफ गगा वैली* प्राब्लम ऐड प्रास्टपेक्ट, मैन ऐण्ड इन्वायनमेट 12

चतुर्वेदी, एस0एम0 (1988) — *एडवास आफ इण्डियन नियोलिथिक ऐड चार्कोलिथिक कल्चर टू द हिमालयन तराई,* एक्सकवेशन ऐड एक्सप्लोटेशन इन सरयूपार रीजन आफ यू0पी0, मैन ऐण्ड इन्वायर्नमेट न0 2

चतुर्वेदी, एस0एन0 और प्रेमसागर (1977) — अर्ली पाटरी फ्राम सोहगौरा, इण्डियन प्रीहिस्ट्री, 1980 (सम्पा0) मिश्र, वी0डी0 और पाल, जे0एन0

जोशी, एम0सी0 (1986) — *आफिस इन्सपेक्शन्स रेट्स आन सम आर्कियोलाजिकल साइट्स इन द डिस्ट्रिक्ट सुल्तानपुर* (टकित प्रति)

ज्यूनर, एफ0ई0 — डेटिग द पास्ट, (लन्दन, 1950)

तिवारी, आर0 (1986) — *टाइप्स आफिस इसपेक्शन्स नोट्स ऑन सम आर्कियोलाजिकल साइट्स इन द डिस्ट्रिक्ट* सुल्तानपुर, लखनऊ

थामस, पी0 — हिन्दू रेलीजन, करम्स ऐड मैनर्स (थर्ड इ0ड0, बाम्बे, 1956)

थापर, वी0के0 (1955) — *ए चाल्कोलिथिक साइट इन द ताप्ती वैली,* ए0आई0 एनओएस,

ट्रिगर, बी0जी0 (1963–ए) — *सेटेलमेट एज इन आस्पेक्ट्स आफ इरोक्वायोन एडाप्टेशन एट द टाइम आफ कार्टेक्ट,* अमेरिकन एथ्रोपोलाजिस्ट 65,

ट्रिगर, बी0जी0 (1967) — *सेटेलमेट आर्कियोलाजी–इट्स गोल ऐड प्रामिज,* अमेरिकन ऐटीक्युटी

ठाकुर, वी0के0 (1978) — *अर्बनाइजेशन इन सेशियेट इण्डिया,* नई दिल्ली,

दीक्षित, के0एन0 — 1991–92 आयरन एज ऐड पेनीसूलर इण्डिया, पुरातत्व

डी0 टेरा एच0 ऐड टी0टी0 पैर्टसन — 1939, स्टडीज आन द आइस एज इन इण्डिया ऐड एसोसियेटेड ह्यूमन कल्चर्स, वाशिगटन · करनेजी इन्स्टीच्यूट, पब्लीकेशन नं0 493,

भट्ट, एस0के0 (1971) — *आर्कियोलाजिकल एक्सकवेशन इन बस्ती,* उत्तर प्रदेश, पुरातत्व न0–3

बनर्जी, एन0आर0 — 1965, द आयरन एज इन इण्डिया, इन मिस्र ऐड मेट (ई0डी0) इण्डियन प्री हिस्ट्री 1964 पूना

1965 द आयरन एज इन इण्डिया दिल्ली 1965

बर्न रिचर्ड (ई0डी0)	द कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया, वाल्यूम– चार, (दिल्ली, 1957)
बर्गीज, जे0 (सम्पा0) (1971)	द शर्की अर्किटेक्चर आफ जौनपुर, वाराणसी,
बिनफोर्ड, एल0आर0 (1964)	*ए कन्सरीडरेशर आफ अर्कियोलाजिकल रिसर्च डिजाइन,* अमेरिकन इन्टीक्युटी 29,
बिनफोर्ड, एल0आर0 और एस0आर0 (1966)	*प्रीलिमनरी एनालिसिस आफ फॅक्शन वैरियेबिल्टी इन माउस्तीरियन आफ लेवालेवास फैसिज,* अमेरिकन एन्थ्रोपोलाजिस्ट 68
बोस, एन0के0 (1972)	*सम इण्डियन ट्राइवल,* नई दिल्ली
ब्राउन्स, डी0 स्मिथ ऐड विल्मा वैटर्सन (1984)	*प्रीहिस्टोरिक पैटर्न आफ ह्यूमन बीहैवियरल केस स्टडी इन द मिसिसिप्पी विलेज*
ब्रह्मदत्त (1970).	*सेटेलमेट आफ पी0जी0डब्ल्यू0 कल्चर,* हरियाणा, अप्रकाशित पी0एच0डी0 शोध प्रबन्ध कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र, हरियाणा
दुबे, दयाशकर (1942)	श्री गगारहस्य, इलाहाबाद,
दास, गुप्ता पी0सी0 (1964)	*एक्सकवेशन एट पाडुराजढिवि,* कलकत्ता
दत्त, एन0 और बाजपेयी, के0डी0 (1956)	*डेवलपमेन्ट आफ बुद्धिज्म इन उत्तर प्रदेश,* लखनऊ
दीक्षित, के0एन0 (1982)	*द डिस्ट्रीब्यूशन आफ द हडप्पन वेयर्स इन द गगेटिक दोआब,* इण्डियन आर्कियोलाजी न्यूपर्सपिक्टिव, नई दिल्ली

धवलीकर, एम0के0 और पोसेल, जी0एल0 (1974) — *सब्सटेन्स पैर्टन्स आफ ऐन अर्ली फार्मिंग कम्युनिटी आफ वेस्टर्न इण्डिया,* पुरातत्व न0–7,

फेयरजर्वीस, डब्ल्यू0, ए0 — 1961, द हडप्पा सिवलाइजेशन, न्यू एविडेन्स ऐड मोर थ्यूरी ए0एम0एन0 2055, (1961)

1971, द रूट्स आफ एसियेट इण्डिया, लन्दन, 1971

फ्लेचर, आर0 (1977) — *सेटेलमेट स्टडीज (माइक्रो ऐड सेमी माइक्रो) स्पेशल आर्कियोलाजी* (सम्पा0) क्लार्क डी0एल0, लदन एकेडमिक प्रेस,

फहरर, ए0 — द मोनेमेन्टल एन्टीक्यूटिज ऐड इन्सक्रीप्सन्स इन द नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सेज ऐड अवध, (वाराणसी, 1969)

फ्यूहरर, ए0 (1891) — *मानूमेट्स ऐण्ड एन्टीक्यूटीज आफ नार्थ–वेस्ट प्राविसेज ऐड अवध,* इलाहाबाद गवर्नमेट प्रेस

हेस्टर, जेम्स, जे0 — इन्ट्रोडक्शन टू आर्कियोलॉजी (होल्टरिमीहर्ट, 1976)

हेस्टर जेम्स — 1976, इन्ट्रोडक्शन आफ आर्कियोलॉजी

हाग, ए0एच0ए0 (1943) — *नेटिव सेटेलमेट आफ नार्थम्बरलैण्ड,* एन्टीक्युटी 17,

इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू (1956–67),

इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू (1960–61),

इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू (1961–62),

इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू (1962–63),

इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू (1963–64),

इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू (1965–66),

इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू (1969–70),

इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू (1970–71),

इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू (1977–78),

इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू (1979–80),

इण्डियन आर्कियोलाजी ए रिव्यू (1981–82),

मण्डल, डी (1972) — रेडियो कार्बन डेट्स ऐड इण्डियन आर्कियोलाजी, इलाहाबाद,

मण्डल, डी (1997) — *नियोलिथिक कल्चर्स इन द विन्ध्याज,* इण्डियन प्रीहिस्ट्री, 1980 (सम्पा0) मिश्र, बी0डी0 एव पाल, जे0एन0

मेमोरिया, चतुर्भुज (1984) — *आधुनिक भारत का वृहद् भूगोल,* आगरा,

मजूमदार, आर0सी0 — ऐशियेट इण्डिया, (दिल्ली, 1960)

मजूमदार, आर0सी0 ऐड अलटेकर, एस0 — द वाकाटक गुप्ता ऐज, (दिल्ली, 1960)

मजूमदार, आर0सी0 ऐड पुसलकर, ए0डी0 (इ0डी0) — द हिस्ट्री ऐड कल्चर आफ द इण्डियन पिपुल वाल्यूम्स– एक से चार (बाम्बे, 1951–60), वाल्यूम्स पाच, छ (बाम्बे, 1957–60)

मिश्र, वी0डी0 जे0एन0 पाल — 2002, एक्सकेवेशन ऐट झूसी, प्राग्धारा न0 10

मिश्र, वी0डी0 (1977) — *सम आसपेक्ट्स आफ इण्डियन आर्कियोलाजी आफ इलाहाबाद,*

मिश्र, वी0डी0 (1969) — पाटरीज आफ कौशाम्बी पाटरीज इन ऐशिऐट इण्डिया (सम्पा0) सिन्हा, वी0पी0 पटना

मिश्र, वी0डी0 (1970) *चाल्कोलिथिक कल्चर्स आफ इस्टर्न इण्डिया द इस्टर्न एन्थ्रोपोलाजिस्ट 18,* न0 3

मिश्र, बी0बी0 (1997) *चाल्कोलिथिक कल्चर्स आफ द विन्ध्याज ऐड द सेट्रल गगा वैली इण्डियन प्रीहिस्ट्री* (सम्पा0) मिश्र, वी0डी0 और पाल, जे0एन0ए0 इलाहाबाद

नारायन, ए0के0 और राय, टी0एन0 (1968) *एक्सकवेशन ऐट प्रहलादपुर,* 1963, बी0एच0यू0, वाराणसी

नारायन, ए0के0 और राय, टी0एन0 (1977) *एक्सकवेशन एट राजघाट,* बी0एच0यू0, वाराणसी

नारायन, एल0ए0 (1970) *नियोलिथिक सेटेलमेट एट चिराद,* जनरल आफ बिहार रिसर्च सोसाइटी, वाल्यूम–56,

नाथ बी0 और विश्वास, एम0के0 (1980) *एनीमल रिमेन्स फाम चिराद,* सारण डिस्ट्रिक्ट बिहार, रिकार्ड्स आफ द नियोलिथिक सर्वे आफ इण्डिया

नागर मालती (1997) *फिसिग ऐड फिसिग गेयर,* ट्रयवल्स आफ द बस्तर, इण्डियन प्रीहिस्ट्री, 1980, (सम्पा0) मिश्र, वी0डी0 और पाल, जे0 एन0

पाल, जे0एन0 (1984) *इपीपैलियालिथिक साइट्स इन प्रतापगढ डिस्ट्रिक्ट,* उत्तर प्रदेश, मैन ऐड इनवायर्नमेट वाल्यूम 8

पाल, जे0एन0 (1985), *सम न्यू लाइट ऑन द मेसोलिथिक वैरियल प्रैक्टिसेज आफ द गगा वैली* ऐविडेस फाम महदहा, मैन ऐड इनवार्यनमेट वाल्यूम 9

पाल, जे0एन0 (1986) *माइक्रोलिथिक इडस्ट्री आफ दमदमा,* पुरातत्व–16,

पाल, जे0एन0 (1988)	*मेसालिथिक डबुल बरियल्स फ्राम रीसेन्ट इक्सकवेशन एट दमदमा,* मैन ऐड इनवार्यनमेट, वाल्यूम 12,
पाल, जे0एन0 (1994)	*मेसोलिथिक सेटेलमेट इन द गगा वैली,* मैन ऐड इनवार्यनमेट वाल्यूम 19
पाठक, वी0एन0	हिस्ट्री आफ कोशला अप टू द राइज आफ मौर्याज, (वाराणसी, 1963)
पारजीटर, एफ0ई0	ऐशियेट इण्डियन हिस्ट्रोरिकल ट्रेडिशन, (दिल्ली, 1962)
पाण्डेय, जी0सी0 (ई0डी0)	1999 द ड्रान आफ इण्डियन सिवलाइजेशन, प्रोजेक्ट आफ हिस्ट्री आफ इण्डियन साइन्स फिलासिपी ऐड कल्चर, न्यू दिल्ली।
पाल, जे0एन0	1984, एपिपैलियोलिथिक साइट्स इन प्रतापगढ डिस्ट्रीक उत्तर प्रदेश, मैन ऐड इन्वायरमेट आठ 37–38
	1986 आर्कियोलॉजी आफ सदर्न उत्तर प्रदेश, स्वभा प्रकाशन इलाहाबाद
	1994 मेसोलिथिक सेटेलमेन्ट्स इन द गगा प्लेन मेन एण्ड एन्वायरनमेट वाल्यूम 19
	1995, मेसोलिथिक ह्ययूमन व्यूरेल्स इन द गगा प्लेन नार्थ इण्डिया, मेन एण्ड एन्वायरनमेट वाल्यूम 20
पाण्डेय,बी0एम0	1970 द नियोलिथिक इन काश्मीर न्यू डिसकवरीज द एन्थ्रोलिमिस्ट
प्रसाद, अजीत कुमार (1997)	*ए नोट ऑन फूड हैबिट आफ द नियोलिथिक पिपुल इन बिहार,* इण्डियन प्रीहिस्ट्री 1980, (सम्पा0) मिश्र, वी0डी0 एव पाल, जे0एन0

पाण्डये, जे0एन0 (1986)	*पुरातत्व विमर्श,* इलाहाबाद
राजू, डी0आर0 (1988)	*स्टोन एज हटर ऐड गैदर्रस*
रेरेबा, (1987)	*ऐशियेट सेटेलमेट पैर्टन्स आफ इस्टर्न इण्डिया,* कलकत्ता
रैप्सन, ई0जे0	द कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया, वाल्यूम I (दिल्ली–1955)
राकेश तिवारी	1998–99 इन्टीक्यूटी आफ आयरन इन साउथ इसटर्न यू0पी0 भारती
राव, एस0आर0	1973, लोथल ऐड इण्डस सिविलाइजेशन,
राय, टी0एन0	1986 ए स्टडी आफ नार्दन ब्लैक पालिश्ड वेयर कल्चर (ऐन आयरन एज कल्चर आफ इण्डिया) दिल्ली रमानन्द विद्या भवन
राय, टी0एन0 (1983)	*द गगेज सिविलाइजेशन,* नई दिल्ली
राय, टी0एन0 (1986)	*द स्टडी आफ द एन0बी0पी0डब्ल्यू कल्चर* नई दिल्ली
राय, टी0एन0 (1997)	*इन इन्डीकेशन आफ द चाल्कोलिथिक कल्चर्स एट सम साइट्स आफ उ0प्र0,* इण्डियन प्रीहिस्ट्री, 1980 (सम्पा0) मिश्र, वी0डी0 व पाल, जे0एन0
राउज, आई0 (1972)	*सेटेलमेट पैर्टन्स इन आर्कियोलाजी, उको, पी0जे0,* आर0 ट्रिघम और डी0डब्ल्यू डिम्बलेडी (सम्पा0) मैन सेटेलमेट ऐड अर्बनिज्म, लदन डकवर्थ
राबिन्स, एम0सी0 (1966)	*हाउस टाइप्स ऐड सेटेलमेट पैर्टन्स* ऐन अप्लीकेशन आफ इथनालॉजी टू आर्कियोलाजिकल इण्टर प्रीटेशन्स, मिन0 आर्कियोलाजी 28

लाल, बी0बी0 और दीक्षित, के0एन0 (1997) *श्रृगेरपुर ए साइट आफ प्रोटोस्टोरिक पीरियड*, इण्डियन प्रीहिस्ट्री, 1980 (सम्पा0) मिश्र, वी0डी0 और पाल, जे0एन0,

लाल, बी0बी, ऐडएस0पी0 गुप्ता 1984 फ्रन्टीयर्स आफ द इन्डस सिविलाइजेशन, न्यू दिल्ली

लाल, मक्खन (1989) सेटेलमेट पैटर्न ऐड राइज आफ सिविलाइजेशन इन मिडिल गगा–यमुना दोआब, नई दिल्ली

सकालिया, एच0डी0 (1962) *प्रीहिस्ट्री आफ इण्डिया ऐट पाकिस्तान*, पुणे, डेकन कालेज

शर्मा, जी0आर0 1973 मेसोलिथिक लेक कल्चर इन द गगा वैली, इण्डिया पी0पी0एस0, लन्दन

शर्मा, जी0आर0 (1973)· *स्टोन एज इन द विन्ध्याज ऐड द गगा वैली*, रे0का0डे0इ0आ0 (स0) अग्रवाल डी0पी0 व ए0 घोष

शर्मा, जी0आर0 (1973) *मेसोलिथिक लेक कल्चर इन द गगा वैली*, इण्डिया, प्रोसीडिग आफ द प्रीहिस्टोरिक सोसाइटी 39,

शर्मा, जी0आर0 (1975) *सीजनल माइग्रेशन ऐड मेसोलिथिक कल्चर आफ द गगा वैली*, के0सी0 चट्टोपाध्याय मेमोरियल वाल्यूम, इलाहाबाद, इ0वि0वि0

शर्मा, जी0आर0, वी0डी0 मिश्र, बी0बी0 मिश्र, डी मण्डल और जे0 एन पाल (1980) *फ्राम हन्टिग गेदरिग टु फूड प्रोडक्शन ऐड डोमिस्टिकेशन आफ एनीमल्स* . एक्सकवेशन एट चोपनी मडो महदहा ऐड महगडा

शर्मा, जी0आर0 (सम्पा0) (1980) *हिस्ट्री टू प्री हिस्ट्री आर्कियोलाजी आफ द गगा वैली ऐड द विन्ध्याज*, इलाहाबाद

शर्मा, जी0आर0, वी0डी0 मिश्र और जे0एन0 पाल (1980)	*एक्सकवेशन्स एट महदहा,* इलाहाबाद, इ0वि0वि0
शर्मा, आर0एस0 (1974)	*आयरन ऐड अर्बनाइजेशन इन द गगा बेसिन,* एच0आई0आर0, मार्च न0 1
सकालिया, एच0डी0	1974, प्री हिस्ट्री आफ इण्डिया ऐड पाकिस्तान, पूना
शास्त्री, के0ए0एन0 (ई0डी0)	ऐज आफ नदाज ऐड मौर्याज, (पटना, 1952)
शर्मा, जी0आर0	1960 द एक्सकवेशन ऐट कौशाम्बी (1957–59), इलाहाबाद
शर्मा जी0आर0 एंड आल	1980 विगनिग्स आफ एग्रीकल्चर, इलाहाबाद
शाही, एम0डी0एन0	1994 ऐम आसपेक्ट आफ इण्डियन आर्कियोलाफजी,
सिह, एच0एन0	1982, हिस्ट्री ऐड आर्कियोलॉजी आफ ब्लैक ऐड रेड वेयर (चाल्कोलिथिक पीरियड) सन्दीप प्रकाशन, न्यू दिल्ली
सिह पुरूषोत्तम	1994, एक्सेकवेशन ऐट नरहन बी0एच0यू0 वाराणसी ऐड बी0आर0 पब्लिसिग कार्पोरेशन, दिल्ली।
सिन्हा, वी0पी0 (1975)	*आर्कियोलाजी एण्ड आर्ट इन बिहार,* पटना
सिह, पुरूषोत्तम (1994)	*एक्सकवेशन एट नरहन–1984 और इमली डीह,* खुर्द पुरतत्व न0 22,
सिह, पुरूषोत्तम (1996)	*प्रेलियूड टू अर्बनाइजेशन इन द सरयूपार प्लेन,* अध्यक्षीय भाषणण भाग–5, द इण्डिया हिस्ट्री काग्रेस, 57वा अधिवेशन, चेन्नई
सिह, आर0एल0 (1974)	*इण्डिया, ए रीजनल जागर्फी,* वाराणसी

सिह, आर0एल0 (1975) — इओल्यूसन आफ सेटेलमेट इन मिडिल गगा वैली, एनजीजेआई वाल्यूम–1, पार्ट–2,

सिह, डी0 (1979) — अर्ली आयरन एज इन गगेटिक दोआब, एसेज इन इण्डियन प्रोटो हिस्ट्री (सम्पा0) अग्रवाल, डी0पी0 और चक्रवर्ती, डी0के0, नई दिल्ली

श्रीवास्तवा, के0एम0 — न्यू एरा आफ इण्डियन आर्कियोलॉजी (कास्मो सम्पा0, 1982)

वर्मा, आर0के0 (1971) — *भारतीय प्रागैतिहासिक सस्कृतियॉ,* इलाहाबाद

वर्मा, आर0के0 (1987) — *मेसोलिथिक एज इन मिर्जापुर,* इलाहाबाद

वर्मा, आर0के0 वी0डी0 मिश्रा, जे0एन0 पाण्डेय और जे0एन0, पाल (1985) — *ए प्रिलिमिनरी रिपोर्ट ऑन द एक्सकवेशन्स ऐट दमदमा,* मैन एण्ड इनवायर्नमेट, वाल्यूम–9

वर्मा, एस0 (1983) — *मटेरियल कल्चर्स ऐड सोशल फार्मेशन इन ऐशियेट इण्डिया,* नई दिल्ली,

वर्मा, आर0के0 — 1964 द स्टोन एज कल्चर्स आफ मिर्जापुर, अनपब्लीस्ड थेसिस यूनीवर्सिटी लाइब्रेरी, इलाहाबाद

1985, द मेसोलिथिक कल्चर्स आफ इण्डिया पुरातत्व न0 13–14

1986 द मेसोलिथिक एज इन मिर्जापुर, परमज्योति प्रकाशन, इलाहाबाद

वर्मा, राधाकान्त — 1977, भारतीय प्रागैतिहासिक सस्कृतियॉ परमज्योति प्रकाशन, इलाहाबाद

	2000, क्षेत्रीय पुरातत्व
	2001 भारतीय प्रागैतिहास, परमज्योति प्रकाशन, इलाहाबाद
वर्मा, आर0के0 (1965)	*भारतीय प्रागैतिहास,* इलाहाबाद
वोगट, ई0जे0 (1965)	*ऐन एप्राइजल आफ प्रीहिस्टोरिक सेटेलमेट पैर्टन्स इन न्यू वर्ल्ड,* प्रीहिस्टोरिक सेटेलमेट पैर्टन्स इन द न्यू वर्ल्ड (सम्पा0) विली, जी0आर0, वीकिन्ग फड पब्लिकेशन इन एन्थ्रोपोलाजी, न0 23,
वोगट, जेड, और लेवेलेन्थल, एम0 (1983)	*प्रीहिस्टोरिक सेटेलमेट पैर्टन्स,* एसेज इन ऑनर आफ गार्डन आफ गार्डन, आर विली, न्यूयार्क
व्हीलर, सर मार्टियर,	आर्कियोलॉजी फ्राम द अर्थ, (आक्सफोर्ड, 1954)
व्हीलर, एम	1954, रोम बीयान्ड द इम्पीरिकल फ्रन्टीयर, हेमेनड्राफ।
	1968 द ईन्ड्स सिविलाइजेशन, लन्दन
विली, जी0आर0 (1953)	*प्रीहिस्टोरिक सेटेलमेट पैर्टन्स इन द वीरू वैली*
विली, जी0आर0 (सम्पा0) (1956)	*प्रीहिस्टोरिक सेटेलमेट पैर्टन्स इन न्यू वर्ल्ड,* वीकिग फड पब्लिकेशन इन एन्थ्रोपोलाजी, नं0 23
विली, जी0आर0, डब्ल्यू0आर0ए0 बुल्लाई, जे0बी0 ग्लसण्ड और जी0सी0 गिफर्ड (1965)	*प्रीहिस्टोरिक माया सेटेलमेट पैर्टन्स इन बेलीज वैली,* पेपर्स आफ पीबॉडी म्यूजियम, न0 54, हावर्ड यूनिवर्सिटी

त्रिपाठी, विभा — 1976, द पेन्टेड ग्रे वेयर, ऐन आयरन एज कल्चर आफ नार्दन इण्डिया

2001 द एज आफ आयरन इन साउथ ऐशिया, लिगेसी ऐंड ट्रेडिशन आर्या पब्लिकेशन प्रेस, दिल्ली

1999, अर्ली आयरन टेक्नोलाजी ऐंड इट्स सोसियो इकनामिक्स इमपैक्ट द ड्रान आफ इण्डियन सिविलाइजेशन, वाल्यूम एक भाग एक

त्रिपाठी, आर0एस0 (1959) — *हिस्ट्री आफ कन्नौज टू द मुस्लिम कॉक्वेट,*

छायाचित्र नं० 1

छायाचित्र नं २

छायाचित्र नं॰ ३